THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180071

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/ J98S Accession No. H2580

Author ज्वीग.

Title स्टीफन ज्वीग की महान कहानियाँ। 1957

This book should be returned on or before the date last marked below.

स्टीफेन ज़्वीग की महान कहानियां

अनुवादक
शिवदानसिंह चौहान
विजय चौहान

आत्माराम एन्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

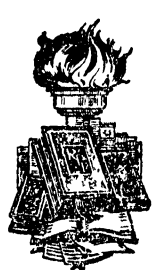

दिल्ली
रणजीत प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स

प्रकाशक
रणजीत प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स
४८७२, चांदनी चौक, दिल्ली

प्रथम संस्करण
जनवरी, १९५७

मूल्य
चार रुपये आठ आने

मुद्रक
युगान्तर प्रेस
डफ़रिन पुल, दिल्ली

दो शब्द

स्टीफ़ेन ज्वीग बीसवीं शताब्दी के उन महान् जर्मन लेखकों में से हैं जिनकी हर कृति विश्व-साहित्य का एक अनुपम रत्न है और जिनके रचे समग्र साहित्य का हिन्दी में अनुवाद होना जरूरी है। खेद है कि उनकी दो-तीन कृतियां ही अभी तक अनूदित होकर हिन्दी पाठकों तक पहुँच सकी हैं।

स्टीफ़ेन ज्वीग के उपन्यास जितने महान् हैं, उनकी कहानियाँ शायद उनसे भी अधिक महान् हैं। कहानीकारों में उनका स्थान मोपासां, गोर्की, चेखव, ओ' हेनरी जैसे विश्व के अन्यतम कलाकारों के समकक्ष है। इन कथाकारों के समान ही स्टीफ़ेन ज्वीग की भी अपनी विशिष्ट शैली है और कहानी कहने का अपना मौलिक ढंग है। साधारणतया ज्वीग की कहानियां लम्बी होती हैं, क्योंकि वे नाटकीय प्रभाव की सृष्टि के लिए कहानी नहीं लिखते। किसी भी बाह्य अथवा मनोवैज्ञानिक घटना-चक्र में फंसे पात्रों के सूक्ष्मतर मानवीय संवेदनों और प्रतिक्रियाओं का कलात्मक अंकन करते हुए उनकी दृष्टि मानव-परिस्थितियों के उस असाधारण पहलू का उद्घाटन कर देती है, जिसे देखने की क्षमता बड़े-बड़े जीवन-द्रष्टाओं तक में नहीं है। इसीलिए ज्वीग की कहानियों में स्वस्थ जीवनाकांक्षा के साथ-साथ मानव-नियति के प्रति एक गम्भीर जुगुप्सा और वेदना मिश्रित अवसाद का भाव है। उनके पात्र परिस्थितियों के दास नहीं हैं। वे विपरीत परिस्थितियों से निरन्तर जूझते हैं, लेकिन उनके शरीर और मन पर, अर्थात् उनके समूचे व्यक्तित्व पर इन परिस्थितियों के आघात चिह्न

अंकित होते जाते हैं, जो वास्तव में उनके व्यक्तित्वों को और अधिक संवेदनशील और मानवीय ही बनाते हैं। इसीलिए ज्वीग की कहानियों के पात्र पाठकों के हृदय को इतनी गहराई से छू लेते हैं। हमारा विचार है कि इन पात्रों से परिचय पाना एक गहरा मानवीय अनुभव है, एक निजी उपलब्धि है, जिससे हिन्दी का कोई भी पाठक अपने को वंचित नहीं रखना चाहेगा। प्रस्तुत संग्रह में हमने स्टीफ़ेन ज्वीग की जिन कहानियों का चयन किया है, उनमें से 'विक्षिप्त' 'शतरंज का खेल' और 'एक अज्ञात स्त्री का पत्र' विश्व की सर्वश्रेष्ठ कहानियों के संग्रहों में प्रकाशित होती रही हैं। इससे भी इस संग्रह की महत्ता सिद्ध है।

शिवदानसिंह चौहान
विजय चौहान

विषय-सूची

१. शाही खेल	...	...	३
२. आतंक	...	...	५१
३. लैपोरेल्ला	...	...	६०
४. विक्षिप्त	...	...	११४
५. एक अज्ञात स्त्री का पत्र	...	...	१७८
६. अदृश्य संग्रह	...	...	२१७
७. गवर्नेस	...	...	२३०

शाही खेल

न्यूयार्क से ब्यूनो एयर्ज़ जाने वाले जहाज़ पर, जो आधी रात के रवाना होने वाला था, बड़ी चहल-पहल थी। लोग अपने मित्रों को छोड़ने आये थे। जहाज़ के नौकर तिरछी टोपियां पहने कमरों में आवाज़ें लगा रहे थे, मुसाफिरों का सामान, पार्सल और फूलों के गमले इधर-उधर हटाए जा रहे थे। बच्चे उछल-कूद मचा रहे थे और आर्केस्ट्रा के स्वर इस वातावरण को उत्तेजना प्रदान कर रहे थे। मैं डैक की सैरगाह पर खड़ा एक मित्र से बातें कर रहा था, इसी समय दो-तीन कैमरों की फ्लैश बत्तियों से हमारी आंखें चौंधिया गईं। ज़ाहिर था कि कोई प्रसिद्ध व्यक्ति जहाज़ पर यात्रा करने वाला था, और अख़बारों के फ़ोटोग्राफ़र और रिपोर्टर उसे घेरे हुए थे। मेरे मित्र ने भीड़ की ओर देख कर कहा—

"यह जेन्टोविक भी अजब आदमी है।"

मेरे चेहरे को भावशून्य देखकर मेरे दोस्त ने फिर कहा, "मिर्को जेन्टोविक विश्व-विख्यात शतरंज चेम्पियन! उसने हाल ही में एक नुमायशी मैच में अमेरिका को हराया है और अब वह अर्जेन्टाइना को फ़तेह करने जा रहा है।"

मेरे मित्र ने इस विश्व-विजेता की ख्याति और उसके जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का भी ब्यौरा सुनाया। मेरा दोस्त समाचार-पत्रों का नियमित पाठक था, इसलिए उसे ये सब बातें याद थीं। उसने बताया कि पिछले साल एक ही चाल से जेन्टोविक की गिनती शतरंज

की दुनिया के मशहूर चेम्पियनों—अलैखिन, कैपेब्लान्का, टार्टकोवर, लास्कर और बोगुलवोब की श्रेणी में होने लगी है। सन् १९२२ में नौ वर्ष के खिलाड़ी रेशेवस्की ने शतरंज की दुनिया में तहलका मचा दिया था। लेकिन जेन्टोविक का अभ्युदय भी कम सनसनी-खेज़ नहीं रहा। वह (प्रतिभाहीन होते हुए भी) इतना अच्छा खिलाड़ी कैसे बन गया? विश्वस्त रूप से मालूम हुआ है कि वह एक शब्द भी शुद्ध नहीं लिख सकता। उसके एक साथी ने उसका मज़ाक उड़ाते हुए कहा था, "ज़ेन्टोविक जितना मशहूर खिलाड़ी है, गंवार भी उतना ही मशहूर है!" ज़ेन्टोविक का पिता एक साधारण मल्लाह था। एक स्टीमर से टकराकर उसकी नाव उलट गई। जेन्टोविक उस समय बारह वर्ष का था। गांव के पादरी ने द्रवित होकर अनाथ बालक के पालन-पोषण का ज़िम्मा लिया। जेन्टोविक स्कूल में सबसे पिछड़ा विद्यार्थी था। पादरी ने उसके आलस और फूहड़पन को दूर करने के लाख यत्न किए, लेकिन लड़का वैसे का वैसा ही रहा।

मिर्को आंखें फाड़कर कापियों को देखता रहता। हिज्जे करना तो उसे आता ही न था। आसान से आसान बात भी उसके कूढ़ मग़ज़ में न घुसती थी और चौदह वर्ष का होने पर भी वह उंगलियों से गिनता था। किताब या अखबार पढ़ने के लिए उसे बड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। लेकिन आजतक किसी ने यह नहीं कहा कि वह गुस्ताख़ या जिद्दी था। वह आज्ञापालन के लिए सदैव तत्पर रहता था। पानी भरना, ईंधन के लिए लकड़ी काटना, खेत में काम करना, रसोई धोना—यह सब काम वह बड़े मनोयोग से, चाहे आहिस्ता ही सही, करता था। दयालु पादरी को सिर्फ़ एक ही बात अखरती थी—इस भोंदू की असहयोग भावना। वह बिना आदेश पाए अपने से कोई काम न करता, न और बच्चों की तरह सवाल ही पूछता। किसी ने उसे बच्चों के साथ खेलते हुए नहीं देखा। ख़ाली वक्त में वह जानवरों की तरह आंखें फाड़कर न जाने क्या सोचा करता था। शाम के समय जब

पादरी अपना देहाती पाइप लेकर पुलिस सार्जेन्ट के साथ शतरंज खेलने बैठता तो यह भोंदू लड़का पल्थी मारकर आलस भरी आंखों से खेल देखता रहता।

सर्दियों में एक दिन शाम को दोनों दोस्त बाज़ी लगाकर बैठे थे, इसी समय किसी स्लेज की घंटियों की आवाज़ सुनायी दी और एक किसान ने आकर खबर दी कि उसकी मां मृत्यु-शैय्या पर पड़ी है, शायद प्रार्थना के लिए अभी समय बचा है। पादरी फ़ौरन किसान के साथ चला गया। उधर पुलिस सार्जेन्ट ने अभी अपनी बीयर समाप्त नही की थी। वह पाइप सुलगाकर जाने के लिए अपने भरकम बूट पहनने ही वाला था कि उसका ध्यान मिर्को की ओर गया जो टकटकी बांधे मोहरों की ओर देख रहा था।

"कहो, क्या बाज़ी खत्म करने का इरादा है ?" सार्जेन्ट ने मज़ाक किया। वह जानता था कि उस भोंदू लड़के को चाल चलने की भी तमीज़ नही। लड़के ने शरमाकर हामी भरी और पादरी के स्थान पर बैठ गया। चौदह चालों के बाद ही गार्जेन्ट को मात हुई और उसे मानना पड़ा कि यह हार निश्चय ही उसकी अपनी असावधानी का परिणाम नहीं थी। दूसरी बाजी में भी ऐसा ही हुआ।

"वाह रे बलभ के गधे !" लौटकर पादरी ने अपने सार्जेन्ट मित्र से, जो बाइबिल में इतना पारंगत न था, लडके का मज़ाक उड़ाते हुए कहा। दो हज़ार बरस पहले एक गूंगे ने भी पाण्डित्यपूर्ण भाषण देकर सबको हैरत में डाल दिया था। अधिक रात हो जाने पर भी पादरी उस फूहड़ लड़के का चमत्कार देखने का लोभ न छोड़ सका। मिर्को ने पादरी को भी फ़ौरन मात दे दी। वह बहुत सोच-बूझ कर चाल चलता था और उसकी दृष्टि मोहरों पर ही लगी रहती थी, लेकिन जीत हमेशा उसी की होती थी। इस घटना के बाद पादरी और सार्जेन्ट उस लड़के को एक बार भी मात न दे सके।

पादरी के मन में इस अनाथ बालक की आकस्मिक प्रतिभा का

रहस्य जानने की तीव्र इच्छा पैदा हुई। गांव के नाई की मदद से मिर्को का हुलिया संवार कर वह उसे पास के शहर में ले गया, जहां एक कॉफ़ी हाउस में बहुत से शतरंज के नामी खिलाड़ी जमा होते थे। पादरी के साथ भूरे बालों वाले पन्द्रह वर्ष के लड़के को देखकर खिलाड़ियों को बड़ा कौतूहल हुआ। मिर्को ने उस दिन भेड़ की खाल की जैकेट और ऊँचे बूट पहने थे। वह आंखें नीची करके चुपचाप खड़ा रहा। कुछ देर बाद खेल शुरू हुआ।

पहली बाज़ी में मिर्को हार गया क्योंकि उसके स्वामी ने कभी सिसली में प्रचलित ढंग से क़िला न बाँधा था। अगली बाज़ी, जिसमें शहर का सबसे नामी खिलाड़ी खेला था, बराबर रही। लेकिन तीसरी, चौथी और बाद की सभी बाज़ियाँ मिर्को जीतता गया। वह बिजली की तरह अपने विरोधियों की चालें काटता था।

आमतौर पर यूगोस्लाविया के छोटे शहरों में सनसनी-खेज़ घटनाएँ बहुत कम होती हैं, इसलिए शहर के खिलाड़ियों का एक देहाती लड़के के हाथों मात खा जाना एक ऐतिहासिक घटना थी। खिलाड़ियों ने सर्वसम्मति से निश्चय किया कि लड़के को अगले दिन शतरंज के क्लब के सम्मानित सदस्यों, विशेषकर काउन्ट सीमज़िक के सामने, जो शतरंज के दीवाने थे, पेश किया जाय। पादरी को भी अपने इस धर्म-पुत्र पर कम गर्व न था, लेकिन वह अपने गिरजे में रविवार की प्रार्थना को हर्गिज़ नहीं छोड़ सकता था। इसलिए वह लड़के को वहीं छोड़कर गाँव वापस चला गया। खिलाड़ियों ने मिर्को को एक स्थानीय होटल में ठहराया, जहाँ उसने जीवन में पहली बार पानी का नल देखा।

इतवार की शाम को कॉफ़ी हाउस में बड़ी भीड़ थी। मिर्को चार घंटों तक लगातार, एक भी शब्द बोले बग़ैर, खेलता रहा था। शतरंज के बड़े-बड़े दिग्गज उसके आगे मात खा गये। अंत में उससे कहा गया कि अब उसे एक साथ सब खिलाड़ियों का मुकाबला करना पड़ेगा। मिर्को को इस खेल के नियम समझने में काफ़ी देर लगी, लेकिन एक बार

समझने के बाद वह अपने चरमराते हुए जूतों के साथ एक मेज़ से दूसरी मेज़ पर जाकर चालें चलता। आठ में से सात बाज़ियाँ वह जीत गया।

खिलाड़ियों में गंभीर किस्म की कानाफूँसी होने लगी। वैसे तो यह नवोदित चैम्पियन पूरा गँवार था, लेकिन सब के मन में राष्ट्रीय स्वाभिमान जाग्रत हो उठा था। उन्होंने सोचा, क्यों न इस महान् प्रतिभा द्वारा अपने शहर को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति दिलायी जाय। वॉंदवील के एक दलाल ने, जो स्थानीय फ़ौजी टुकड़ी के मनोरंजन के लिए कलाकार सप्लाई किया करता था, वायदा किया कि वह इस लड़के को अपने साथ वियाना लेजाकर किसी बड़े पेशेवर खिलाड़ी से उसे शतरंज की तालीम दिलायेगा, और साल भर तक लड़के का पूरा खर्च उठायेगा। काउन्ट सीमज़िक ने जिन्होंने, साठ साल के अनुभव में कभी इतना प्रबल विपक्षी नहीं देखा था, फ़ौरन वॉंदवील के दलाल की गारंटी पर दस्तख़त कर दिये। उसी दिन से मल्लाह के बेटे मिर्को के आश्चर्यजनक कारनामों का सूत्रपात हुआ।

मिर्को छः महीने के भीतर ही शतरंज के सब गूढ़ भेदों को जानकर पारंगत हो गया। लेकिन उसमें एक भारी कमी रह गई थी, जिसको लेकर लोग उसकी हँसी उड़ाने लगे। वह एक भी चाल को याद नहीं रख सकता था, जिसे पेशेवर खिलाड़ी 'आँख मूँदकर खेलना' कहते हैं। वह कल्पना के विस्तृत क्षेत्र में अगली चालों को नहीं देख सकता था। उसके लिए ठोस बत्तीस मोहरें और चौंसठ सफेद और काले ख़ानों की मौजूदगी ज़रूरी थी। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पाने के बाद भी वह अपने साथ शतरंज की बिसात और मोहरें लेकर चलता था। जिनकी सहायता के बगैर उसके लिए किसी कठिन चाल को समझना दूभर हो जाता था। वह आँखों से देखे बिना, सिर्फ कल्पना के सहारे ही, शतरंज न खेल सकता था। हालांकि यह दोष अपने आपमें इतना महत्वपूर्ण नहीं, लेकिन एक ख्याति-प्राप्त खिलाड़ी के अन्दर कल्पना का इतना अभाव उचित

नहीं लगता। शतरंज के प्रेमियों में इस बात को लेकर गरमागरम बहसें होती थीं। संगीत-प्रेमियों में उस संगीत निर्देशक की टीका-टिप्पणी होती है जो लिखी हुई सरगम की सहायता के बिना आर्केस्ट्रा का संचालन नहीं कर सकता। लेकिन इस कमी से मिर्को की उत्तरोत्तर बढ़ती ख्याति में कोई अंतर न पड़ा। सत्रह साल की उम्र तक पहुँचते उसने एक दर्जन इनाम जीत लिए थे। अठारह बरस की उम्र में वह हँगरी का चैम्पियन खिलाड़ी हो गया, और बीस बरस की उम्र में वह संसार का चैम्पियन घोषित किया गया। बड़े से बड़े खिलाड़ी, जो प्रतिभा, कल्पना-शक्ति और साहस में मिर्को से कहीं अधिक थे, उससे मात खा गये, जिस तरह नैपोलियन को फूहड़ कुटुज़ोव के आगे हार माननी पड़ी और विजेता हनीबाल को फेबियस कंकटेटर के आगे, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह बचपन से ही भोंदू था, सिर झुकाना पड़ गया, इसी तरह संसार के श्रेष्ठ खिलाड़ी, जिनमें बड़े-बड़े ख्याति-नामा दार्शनिक, गणितज्ञ, कलाकार और लेखक भी थे, मिर्को जैसे भोंदू और गँवार छोकरे से हार गये। मिर्को इतना नीरस व्यक्ति था कि चतुर से चतुर पत्रकार भी उसके व्यक्तित्व पर नाटकीय लेख नहीं तैयार कर सकता था। यद्यपि अखबारों में उसके बारे में कोई दिलचस्प कहानी नहीं छप सकी, फिर भी उसके व्यक्तिगत जीवन के बारे में दिलचस्प कहानियाँ प्रचलित थीं, क्योंकि शतरंज का मैदान छोड़ते ही मिर्को का व्यक्तित्व अत्यन्त हास्यास्पद हो उठता था। बढ़िया पोशाक पहनने, टाई में जड़ाऊ मोतियों का पिन लगाने और नाखूनों को नुकीला रखने के बावजूद भी उसके गँवारपन में कोई फ़र्क नहीं आया था। उसने अपनी प्रतिभा और ख्याति का उपयोग धन कमाने में किया था। उसके लालच और कमीनी हरकतों से अन्य खिलाड़ी तंग आ जाते थे। वह सस्ते होटलों में ठहरता। उसे फीस के बदले छोटे से छोटे क्लब में खेलने से परहेज़ न था। उसने साबुन के एक व्यापारी के हाथ विज्ञापन के लिए अपनी तस्वीर बेची थी और तीव्र आलोचना के बावजूद 'शतरंज का दर्शन' नाम की एक घटिया

किताब पर अपना नाम छपने दिया जिसे एक विद्यार्थी ने किसी मुनाफ़ाखोर प्रकाशक के लिए लिखा था। संसार का चैम्पियन घोषित होने के बाद वह अपने को विश्व का सबसे महान् व्यक्ति समझने लगा था। यह सोचकर कि उसने बड़े-बड़े दिग्गजों को मात दी है और वह उनसे कई गुना अधिक कमाने लगा है, उसका गंवार, हीन-भावना-ग्रस्त स्वभाव उद्दंड हो गया था।

"आप ही बताइये कि एकदम इतनी ख्याति पाकर उसका ओछा दिमाग़ मदोन्मत्त क्यों न हो जाता ?" मेरे मित्र ने ज़ेन्टोविक की लोलुपता की चर्चा करते हुए कहा, "उसका अहंकार स्वाभाविक ही है। जब वह देखता है कि वह शतरंज के मोहरों को चलाकर एक हफ्ते में इतना धन पैदा कर लेता है, जितना उसके गाँव के सारे परिवार मिलकर नहीं पैदा कर पाते। इसके अलावा जो व्यक्ति रैम्ब्राँ, बीटोवन, दाँते और नैपोलियन के अस्तित्व तक से बेखबर है, वह अपने आप को महान् समझने लगे तो क्या आश्चर्य है ? उसके दिमाग़ में तो सिर्फ एक ही बात चक्कर काटती रहती है कि पिछले कई महीनों से उसे कोई मात नहीं दे सका है। दुनिया शतरंज और पैसे के अलावा और चीज़ों की भी क़द्र करती है, यह वह स्वप्न में भी नहीं सोच सकता। फिर वह अपने को महान् व्यक्ति क्यों न समझे ?"

इन दिलचस्प बातों को सुनकर मैं मिर्को के व्यक्तित्व के प्रति विशेषरूप से आकर्षित हो गया, क्योंकि मुझे एकांगी प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों के अध्ययन में बड़ा आनन्द मिलता है। अपने को कठोर सीमाओं में बाँधकर ही मनुष्य शाश्वत सत्य के करीब पहुँचता है। दुनियां से उदासीन रहने वाले लोग भी दीमक की तरह अपने विचारों की एक छोटी-सी दुनियां तैयार कर लेते हैं। इसलिए मैंने अपनी यात्रा के अगले बारह दिन इस एकांगी प्रतिभा वाले विलक्षण जीव के सूक्ष्म अध्ययन करने में गुज़ारने का निश्चय किया।

मेरे दोस्त ने मुझे चेतावनी दी, "तुम्हें निराशा होगी, क्योंकि अभी

तक कोई भी जेंटोविक का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में सफल नहीं हो सका। ठेठ देहाती होने के कारण वह किसी के सामने अपने जीवन के नग्न सत्य को प्रकट नहीं होने देगा। मामूली शराबखाने के लोगों के सिवा वह किसी से बातचीत नहीं करता। किसी शिक्षित और सुसंस्कृत व्यक्ति को देखते ही वह अपने खोल में घुस जाता है। इसीलिए आज तक किसी को उसकी अज्ञानता और फूहड़पन को नज़दीक से देखने का अवसर नहीं मिला।"

मेरे दोस्त की बात सच निकली। दो दिन तक तो जेन्टोविक के दर्शन भी नसीब न हो सके। मुझमें इतनी ढिठाई न थी कि ज़बरदस्ती उससे मिलने के लिए उसकी केबिन में चला जाता। कभी-कभी वह डैक की सैरगाह पर आता था, लेकिन वह नैपोलियन की तरह अपने दोनों हाथ पीठ के पीछे बाँधकर गम्भीर मुद्रा में चहलक़दमी करता, मानो कोई गहरी दार्शनिक समस्या सुलझा रहा हो—कम से कम वह ज़ाहिर तो यही करता था। वह कभी लाउंज में या स्मोक-रूम में दिखाई नहीं देता था। मुझे एक विश्वस्त बेयरे से मालूम हुआ कि वह दिन भर अपनी केबिन में शतरंज बिछाकर बैठा रहता है और नई-नई चाल सोचा करता है।

तीन दिन के बाद मेरा धैर्य समाप्त हो गया। उसकी क़िलेबंदी के आगे मेरे मन्सूबे ढह गये थे। मैंने आज तक शतरंज के किसी नामी खिलाड़ी को नजदीक से नहीं देखा था, न ही मैं इस बात की कल्पना कर सकता था कि कोई व्यक्ति शतरंज के चौंसठ खानों में अपने जीवन को सीमित कर सकता है। इतना तो मैं अपने अनुभव से भी जानता था कि शतरंज शाही खेल है और अन्य सब खेलों की तरह इसमें तिकड़म या संयोग से जीत नहीं मिलती, बल्कि बुद्धि की तीक्ष्णता ही काम देती है। लेकिन क्या शतरंज को खेल कहना उचित होगा? क्या यह कला और विज्ञान नहीं है? क्या यह हज़रत मुहम्मद के कफ़न की तरह स्वर्ग और धरती का अद्भुत संयोग नहीं है, क्योंकि प्राचीन होते हुए भी यह

चिर-नवीन है ? इसमें आवृत्ति भी है और कल्पना की उड़ान भी। रेखागणित के सीमित क्षेत्र में बँधा होने पर भी इसमें असंख्य आकस्मिक संयोग हैं। विचारोत्तेजक होते हुए भी यह निष्प्रयोजन है। इसका गणित कला, और स्थापत्य स्वयंसिद्ध होते हुए भी निर्जीव है। लेकिन इस सब के बावजूद यह महान् पुस्तकों और उपलब्धियों से कहीं अधिक स्थायी और चिरंतन है। शतरंज सब कालों और देशों में महान् रही है। वह कलाकार निश्चय ही महान् होगा, जिसने संसार को इतनी बड़ी विभूति प्रदान की, जो मानव-मात्र का मनोरंजन करती है, बुद्धि को कुंठित नहीं होने देती और आत्मा को स्फूर्ति देती है। इस कला का आदि-अन्त एक रहस्य है। नन्हे बच्चे भी इसके सरल नियमों को सीख सकते हैं। मूर्ख से मूर्ख इसमें निपुणता प्राप्त करने के लिए लालायित रहते हैं। चौंसठ खानों के इस सीमित क्षेत्र में महान् कलाकारों का जन्म होता है, जिनमें कल्पना, धैर्य और शिल्प का अनुपात गणितज्ञों, कवियों और संगीतकारों के समान होते हुए भी उनसे भिन्न स्तर का होता है। मस्तिष्क की रचना में रिसर्च करने वाला कोई विद्वान् अवश्य शतरंज के इन पंडितों के मस्तिष्क के तन्तुओं की चीर-फाड़ करके किसी विशेष मांसपेशी या स्नायु-केन्द्र का जरूर पता लगा सकता है, जो केवल शतरंज के खिलाड़ियों के भीतर ही पाया जाता है। विशेषकर जेंटोविक के मस्तिष्क में, जहाँ मूर्खता और प्रतिभा का अद्‌भुत संयोग है, वह स्नायु-केन्द्र या मांसपेशी ऐसी दिखायी देगी, जैसे किसी भारी चट्टान के भीतर सोने की एक महीन तार छिपी हो। यह सोचना तर्क-संगत है कि ऐसा असाधारण खेल, जिसके लिए असाधारण प्रतिभा की आवश्यकता होती है, दिमाग में अपने लिए विशेष चेतना-केन्द्र अवश्य बना लेता होगा। लेकिन एक तीक्ष्ण बुद्धि वाला व्यक्ति अपनी समस्त शक्तियों का सफेद और काले चारखानों की संकीर्ण सीमा में किस तरह बाँध लेता है, इसकी मैं कल्पना नहीं कर सकता। बत्तीस मोहरों की सीधी तिरछी चालों में ही जिसकी विजय होती है, घोड़े और प्यादे जैसे मामूली शब्द

जिसके लिए अमरत्व और परम सुख के द्योतक हैं—ऐसा आदमी जो पागल हुए बगैर लगातार अपनी ज़िन्दगी के दस-बीस-तीस-चालीस साल लकड़ी के युद्ध-क्षेत्र में काठ के बादशाह को घेरने के प्रयास में लगा देता है।

ऐसी ही एकांगी प्रतिभा का एक व्यक्ति (या कहूँ कि रहस्यमय मूर्ख) मेरे साथ उसी जहाज़ में सफ़र कर रहा था, और मैं मन में तीव्र जिज्ञासा होते हुए भी उससे नहीं मिल पा रहा था। मैंने मन ही मन व्यूह-रचना शुरू कर दी। क्या मैं किसी बड़े समाचार-पत्र में छपाने के लिए उसकी इण्टरव्यू लेने जाऊँ? या पैसे का लालच देकर उसे स्कॉट-लैंड में शतरंज खेलने के लिए निमंत्रित करूँ? अंत में मैंने निश्चय किया कि शिकारी जंगली चिड़िया को फांसने के लिए मुंह से मादा चिड़िया की आवाज़ निकालता है। मैं भी शतरंज के ज़रिये ही ज़ेन्टोविक से क्यों न भेंट करूं? मैं शतरंज को सदा से मनबहलाव का साधन समझता रहा था, मानसिक व्यायाम के रूप में नहीं। मैं शतरंज 'खेलता' हूँ, शतरंज के भक्तों की तरह यह खेल मेरा आराध्य देवता नहीं। जिस तरह प्रेम के लिए दो प्राणियों की ज़रूरत होती है, उसी तरह शतरंज भी अकेले नहीं खेली जा सकती। मैं नहीं जानता था कि जहाज़ पर शतरंज के अन्य प्रेमी भी हैं। उन्हें अपनी मांदों में से निकालने के लिए मैंने धूम्रपान वाले कमरे में एक आदिम ढंग का जाल बिछाया। मैं और मेरी पत्नी शतरंज बिछाकर बैठ गये (मेरी पत्नी खेल में मुझसे भी ज्यादा नौसिखिया है)। हमने अभी मुश्किल से छः चालें ही चली होंगी कि एक महाशय शतरंज बिछी देखकर रुक गये। एक दूसरे महाशय ने खेल देखने की इजाज़त मांगी, और देखते-देखते मैकवर नाम का एक स्कॉट इंजीनियर भी आकर खेल में शामिल हो गया। उसने कैलि-फोर्निया में तेल के कूएँ खोदकर अतुल धन कमाया था। वह स्वास्थ्य और सम्पन्नता की जीती-जागती मूर्त्ति था। उसके चेहरे की सुर्ख रंगत से मालूम होता था कि उसने जीवन-भर दिल खोलकर ह्विस्की पी है।

उसके चौड़े कन्धे साफ़ बता रहे थे कि वह सफलता का पुजारी है, और मनबहलाव के खेलों में भी हार जाना वह अपने आत्म-सम्मान के खिलाफ़ समझता है, क्योंकि जीवन में उसने निर्मम होकर अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा करना सीखा था। दौलत ने उसका दिमाग़ सातवें आसमान पर चढ़ा दिया था, और ठोस शरीर वाला वह आदमी इतना आत्म-रत था कि वह किसी भी प्रकार के विरोध को अपना व्यक्तिगत अपमान समझता था। पहली बाजी में हार जाने पर वह एक घंटे तक मन में कुढ़ता रहा और बार-बार सफाई पेश करने लगा कि उसकी तनिक-सी लापरवाही से खेल चौपट हो गया। तीसरी बार हारने पर उसने पास के कमरे से आनेवाली आवाज़ों को अपनी हार का कारण बताया। वह हर हारी हुई बाजी के बाद बदला लेने के लिये कटिबद्ध हो जाता था। उसके अहंकार को देखकर पहले तो मुझे हँसी आई, फिर मैंने सोचा, क्यों न उसके अहंकार की लग्गी से जेंटोविक को फांसा जाये।

तीसरे दिन मेरी स्कीम सफल होती दिखाई दी। शायद जेंटोविक ने डैक की सैरगाह से हम लोगों को खेलते देखा था। अपने पेशे के हथियारों की नौसिखियों के हाथ दुर्गत होती देखकर उसे ग़ुस्सा आ गया होगा। उसने क्षण भर के लिये रुक कर आग्नेय नेत्रों से हमारी तरफ देखा था। मैकवर की चाल को देखकर जेंटोविक को विश्वास हो गया होगा कि हम लोग नितान्त मूर्ख हैं और हमारे साथ खेलना अपना समय नष्ट करना है। फिर तिरस्कार भरे ढंग से, जैसे कोई प्रबुद्ध पाठक किसी रद्दी जासूसी उपन्यास को देखकर नाक-भौं सिकोड़ता है, वह कमरे से बाहर चला गया। मुझे एक कविता की पंक्तियाँ याद हो आईं, "तुम विधाता के तराज़ू में मिट्टी से भी निकृष्ट साबित हुए हो!" उसकी तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से मेरी आत्मा तिलमिला उठी और मैंने चिढ़कर मैकवर को ताना दिया, "मालूम होता है, उस्ताद को तुम्हारी चाल पसंद नहीं आई!"

"कौनसा उस्ताद!"

मैंने उसे जेंटोविक के बारे में बताया और कहा कि हम लोगों की हस्ती ही क्या है जो हम उसके तिरस्कार पर बुरा मनायें। गरीब लोग पानी से ही घी का काम लेते हैं। लेकिन मुझे यह देखकर हैरानी हुई कि मेरे शब्दों का मैकवर पर उल्टा ही असर पड़ा। वह फौरन उत्तेजित हो उठा, और बाज़ी पटक कर खड़ा हो गया। उसकी महत्त्वाकांक्षा को नई स्फूर्ति मिल गई थी। उसने घोषणा की कि जो भी हो वह जेंटोविक से एक बाज़ी खेलकर रहेगा। मैकवर ने एक बार शतरंज के एक चैम्पियन को 'लगभग' हरा ही डाला था। (वह चालीस आदमियों की टीम का एक सदस्य था)। मैकवर ने मुझसे पूछा, "क्या आप जेंटोविक को खेलने के लिये निमंत्रित कर सकते हैं?" मैंने उसे समझाया कि जेंटोविक अपरिचित लोगों के साथ बोलना तक पसंद नहीं करता, फिर उसे हम जैसे रद्दी खिलाड़ियों के साथ बैठने में भला क्या मज़ा आयेगा?"

मैकवर के अहंकार को भला चोट कैसे न पहुँचती। उसने खीझकर उत्तर दिया कि जेंटोविक की क्या मजाल जो उसका निमंत्रण टाल सके! वह सब समझ लेगा। वह खेल छोड़कर जेटोविक से मिलने डैक पर चला गया। मुझे विश्वास था कि उस विशाल कंधों वाले व्यक्ति की कोई भी इच्छा अपूर्ण नहीं रह सकेगी।

मैं बेचैनी से प्रतीक्षा करता रहा। दस मिनट बाद मैकवर मुंह लटकाये लौटा।

"कहो क्या समाचार है?" मैंने पूछा।

"आपका कहना ठीक था। वह निरा गंवार है। मैंने अपना परिचय दिया, फिर भी उसने मुझसे हाथ नहीं मिलाया। मैंने उससे कहा कि क्या वह जहाज़ के यात्रियों के साथ खेलने का सम्मान हमें प्रदान करेगा? लेकिन उसने जवाब दिया कि वह फीस लिये बगैर एक भी बाज़ी नहीं खेलता। उसकी फीस २५० डालर फ़ी बाज़ी है।"

मुझे यह सुनकर हँसी आ गई। कोई आदमी लकड़ी के मोहरों को खानों में इधर-उधर चलाकर इतना पैसा कमा सकता है, यह मैंने कभी

नहीं सोचा था। मैंने मैकवर से पूछा, "तो फिर आपने भी उससे शिष्टता-पूर्वक विदा ली होगी ?"

लेकिन मैकवर ने संजीदा स्वर में उत्तर दिया, "कल दोपहर के तीन बजे इसी स्मोक-रूम में शतरंज का मैच होगा। देखते हैं उस्ताद कितनी जल्दी हमारा कीमा बनाता है।"

"क्या सचमुच तुम उसे ढाई सौ डालर देने का वादा कर आये हो ?" मैंने पूछा।

"क्यों नहीं, यह उसका पेशा ठहरा। मानलो अगर मेरे दांत में दर्द उठता तो क्या कोई डेन्टिस्ट मुफ्त में ही मेरा दांत निकाल देगा ? फिर जेटोविक तो उस्ताद ठहरा, उसे मनमानी फीस मांगने का अधिकार है। मैं किसी किस्म की पेचीदगी नहीं चाहता। किसी का अहसान उठाने की बजाये मैं नक़द डालर खर्चना बेहतर समझता हूं। फिर ढाई सौ डालर क्या चीज़ है ! उतना पैसा तो मैं कई-कई बार क्लब में हार जाता हूँ। फिर अगर एक और रद्दी खिलाड़ी ज़ेंटोविक से हार जाये तो कोई हर्ज़ नहीं।"

मुझे यह देखकर हैरानी हुई कि 'रद्दी खिलाड़ी' शब्द से मैकवर के दिल पर कितनी गहरी चोट लगी है। लेकिन चूँकि वह ज़ेन्टोविक की फ़ीस अदा कर रहा था, इसलिए मैंने चुप रहना ही उचित समझा। हमने फौरन चार-पाँच और खिलाड़ियों को मैच की खबर दे दी और शोरगुल से बचने के लिये स्मोकरूम में बहुत से मेज़ रिज़र्व करवा लिये।

अगले दिन नियत समय पर हम लोग स्मोकरूम में जमा हो गये। ज़ेन्टोविक के सामने की कुर्सी मैकवर को दी गई। वह अपनी घबराहट को छिपाने के लिये बार-बार तेज़ तम्बाकू वाली सिगारें सुलगा रहा था, और घड़ी में टाइम देख रहा था। उस्ताद ने हमें दस मिनट तक इन्तज़ार करवाई, वरना पता कैसे चलता कि ज़ेन्टोविक कमरे में दाख़िल हुआ है ? वह चुपचाप बिना किसी अभिवादन के आकर

अपनी जगह पर बैठ गया। "तुम लोग तो मुझे जानते ही हो, तुम्हारे बारे में जानने की मुझे रत्ती भर उत्सुकता नहीं।" उसकी धृष्टता का यही अर्थ था। उसने रूखे, पेशेवर ढंग से खेल की शर्तें सुनानी शुरू कर दीं। चूंकि जहाज़ में ज्यादा शतरंजें नहीं थीं, इसलिए उसने कहा कि वह अकेला सब खिलाड़ियों से खेलेगा, और हर चाल चलने के बाद कमरे के कोने में चला जायेगा, ताकि हम लोग निश्चिन्त भाव से अगली चाल सोच सकें। चाल चलकर हम एक चम्मच से शीशे का गिलास बजायेंगे और वह वापिस लौट आयेगा। उसने कृपा करके हमें हर चाल चलने के लिए दस-दस मिनट का समय दिया। भीरू छात्रों की तरह हमने उस्ताद की सब शर्तें मान लीं। जेन्टोविक ने काले मोहरे पसन्द किए और खड़े-खड़े ही एक चाल चल दी, और कोने में जाकर एक सचित्र पत्रिका के पन्ने उलटता हुआ सुस्ताने लगा।

बाज़ी का अन्त वही हुआ जो होना था। हम लोग चौबीसवीं चाल में ही हार गये। एक विश्व-विजेता के लिए आधे दर्जन मामूली खिलाड़ियों को हराना उसके बांये हाथ का खेल था। लेकिन हमें इस बात का सचमुच दुःख था कि उसने अपने बर्ताव से यह साफ़ ज़ाहिर कर दिया था कि हम सब भी उसकी नज़र में फ़कत काठ के निर्जीव मोहरे हैं और वह अपने बाँये हाथ से ही भिनगों की तरह हमें खत्म कर सकता है। उसकी इस हरकत से मुझे आवारा कुत्तों के प्रति लोगों का दुर्व्यवहार याद आया, जिनके आगे वे लापरवाही से रोटी के टुकड़े फेंक देते है। मेरा विश्वास है कि अगर वह संवेदनशील प्राणी होता तो एक दोस्त की तरह हमारी हिम्मत बँधाता और हमारी ग़लतियों की ओर इशारा करता। लेकिन खेल खत्म होने के बाद ही यह अर्ध-मानव, शतरंज का स्वचालित यन्त्र, 'मात!' कह कर उठ खड़ा हुआ। मैं भी एक पराजित की भांति उसे विदा करने के लिये खड़ा हो गया। इतने में ही मैकवर ने भर्राई आवाज़ में कहा, "एक बाज़ी और!"

उसकी इस चुनौती को सुनकर मैं सन्न रह गया। मैकवर इस

समय एक खूँखार घायल योद्धा की तरह दिखायी दे रहा था । मालूम नहीं यह जेन्टोविक की धृष्टता का असर था, या उसके आहत अहंकार का । लेकिन इस समय मैकवर का चेहरा तमतमा गया था । उसके नथुने फूल गये थे और वह अपना जबड़ा फैलाकर ज़ोर-ज़ोर से सांस ले रहा था । उसकी आँखों से प्रतिशोध की क्रूर भावना झलक रही थी । ठीक ऐसा ही भाव मैंने रूलेट के उन जुवारियों की आँखों में भी देखा है, जो लगातार छ:-सात बार हारने के बाद विक्षिप्त हो जाते हैं । मैं समझ गया कि यह बौराया मैकवर अपनी सारी जायदाद भी दाँव पर रखकर सिर्फ़ एक बाज़ी जीतने की आशा में जेन्टोविक से खेलता जायगा, खेलता जायगा और ब्यूनो एयर्ज़ पहुँचने से पहले जेन्टोविक हज़ारों डॉलर का मालिक हो जायगा ।

जेन्टोविक ने संयत स्वर में कहा, "जैसी आपकी मर्ज़ी ! इस बार आप लोग काले मोहरे लेंगे ।

दूसरी बाज़ी में भी कोई विशेष नयी बात नहीं हुई । कुछ और तमाशबीन जमा हो गये, और वातावरण में सरगरमी आ गयी । मैकवर टकटकी बाँधे, इस तरह मोहरों को देख रहा था, जैसे वह मैस्मरेज़म के जादू से उन्हें जिताना चाहता हो । मुझे लगा कि केवल विजयोल्लास में भरकर "मात !" शब्द चिल्लाने के लिए ही वह एक हज़ार डॉलर सहर्ष खर्च कर देता । उसका उत्साह किसी अज्ञात मार्ग द्वारा हमें भी प्रेरित कर रहा था । हर चाल के ऊपर गरमागरम बहस होने लगी । जेन्टोविक को बुलाने से पहले हम अन्तिम क्षण तक झगड़ते रहते । सत्रहवीं चाल पर पहुँचने के बाद हम एक ऐसी चाल चलने लगे जिससे प्यादा आख़िरी खाने से पहले वाले खाने में पहुँच जाता । अगली चाल में ही हम उसका वज़ीर मार लेते । लेकिन मन ही मन हमें सन्देह भी हो रहा था कि शायद जेन्टोविक ने हमें मात देने के लिए ही कहीं यह जाल न रचा हो । बहुत देर तक बहस करने के बाद भी हम इस बारे में निश्चिन्त न हो पाये । दस मिनट की अवधि पूरी होने

वाली थी । हमने तय किया कि प्यादा चल ही देना चाहिए । मैकवर ने प्यादे की ओर हाथ बढ़ाया ही था कि किसी ने उसकी बाँह खींचकर धीमे स्वर में कहा, "ईश्वर के लिए, कहीं ऐसा न कर बैठना !"

हम सबने मुड़कर उस व्यक्ति की ओर देखा । उसे मैंने पहले भी कई बार डेक की सैरगाह पर देखा था । उसकी उम्र पैंतालीस के लगभग होगी । उसका रंग बिल्कुल पीला था । उसके चेहरे से असाधारण प्रतिभा झलकती थी । उसने हमें समझाया, "आप अगर वज़ीर मार लेंगे तो वह शुतुर से हमला करेगा, जिसे आप घोड़े से पीटेंगे । फिर वह अपना प्यादा बढ़ाएगा, जिससे आपका रुख़ ख़तरे में पड़ जाएगा । उसे आप अगर घोड़े से पीटना चाहेंगे, तब भी नहीं पीट पायेंगे और नौ-दस चालों के अन्दर ही वह आपको मात दे देगा । सन् १९२२ में अलेखिन ने भी बोग्लोबोव के साथ खेलते हुए ऐसी ही ग़लती की थी !"

मैकवर के हाथ से प्यादा छूट गया और वह हम सब की तरह आँखें फाड़कर उस आश्चर्यजनक व्यक्ति की ओर देखने लगा, जो देवदूत के समान हमें संकट से उबारने के लिए सहसा प्रकट हुआ था । जो आदमी अगली नौ चालों तक सोच सकता है, वह निश्चय ही कोई प्रथम श्रेणी का खिलाड़ी होगा । हो सकता है वह जेन्टोविक को शतरंज-चैम्पियनशिप में हराने के लिए ब्यूनो एयर्ज़ जा रहा हो । ऐसे नाज़ुक क्षण में उसका वहाँ आना हमारे लिए दैवी घटना से कम न था ।

मैकवर ने कृतज्ञ भाव से पूछा, "आप क्या चलने को कहते हैं ?"

"अभी प्यादा आगे बढ़ाने की ज़रूरत नहीं । अपने घर की हिफ़ाज़त पहले कर लें । सबसे पहले बादशाह को बचाइये । उसके बाद शायद वह बांयी ओर हमला करेगा । उसे आप रुख़ से रोक सकते हैं । दो और चालों की देर है कि उसका प्यादा भी मारा जायगा । अगर आप इसी तरह खेलते रहे तो चौमोहरी होकर बाज़ी बराबर छूट जायगी । ऐसी स्थिति में आप और कुछ नहीं कर सकते ।"

हम सब चकित होकर उसका मुंह ताकने लगे । उसकी कुशाग्र

बुद्धि ने हमें चकाचौंध कर दिया था। ऐसा लगता था, मानो वह शतरंज की किसी पत्रिका में से पढ़कर सुना रहा हो। उसकी इस सलाह ने संजीवनी बूटी का काम किया। उसने हमें न सिर्फ़ हार से बचाया, बल्कि जेन्टोविक के साथ बराबरी के दर्जे पर पहुँचने की आशा दिलायी। हम आदरपूर्वक एक ओर हट गये, ताकि वह आसानी से खेल का निरीक्षण कर सके।

मैकवर ने फिर पूछा, "तो फिर हम बादशाह को बचायें ?"

"बिल्कुल।"

मैकवर ने ऐसा ही किया। ज़ेन्टोविक अपनी सुस्त चाल से वापिस मेज़ पर आया और उसने प्यादा बढ़ा दिया। उस देवदूत ने ठीक ही कहा था कि जेन्टोविक प्यादा बढ़ायेगा। वह मैकवर के कान में फुसफुसा रहा था, "रुख आगे बढ़ाओ, फिर वह प्यादा बचाएगा, लेकिन इससे कोई फ़ायदा नहीं होगा, तुम फिर घोड़ा बढ़ा देना सब ठीक हो जाएगा। इस समय पीछे हटने की बजाय आगे बढ़ना ठीक रहेगा।"

हम टुकुर-टुकुर उसका मुंह देखने लगे। लगता था जैसे वह फ़ारसी बोल रहा हो। लेकिन मैकवर ने उसके आदेश का पालन किया। हमने जेन्टोविक को बुलाने के लिये चम्मच बजाया। इस बार जेन्टोविक चाल चलने के लिए काफी देर तक सोचता रहा। उसके माथे की त्यौरियां चढ़ गई थीं। उसने वही चाल चली जो हमारे अपरिचित मित्र ने बताई थी। लेकिन जाने से पहले जेन्टोविक ने वक्रदृष्टि से हम लोगों की ओर देखा। उसे पहले कभी इतने प्रबल विरोध का सामना नहीं करना पड़ा था।

उसके इस कौतूहल से हमारी उत्तेजना और भी बढ़ गई। अभी तक तो हम निराश भाव से खेल रहे थे, लेकिन अब सब लोग जेन्टोविक का दर्प तोड़ने के लिए आकुल हो रहे थे। हमारे मित्र ने हमें अगली चाल भी बता दी थी। इस बार चम्मच बजाते हुए मेरी उंगलियां कांप रही थीं। इस बार हमारी पहली जीत हुई। जेन्टोविक जो पहले

लापरवाही से खड़े होकर चालें चलता था, घबराकर कुर्सी पर बैठ गया। हम समझ गये कि वह आकाश से उतरकर ज़मीन पर आ गया है। हमारा हीन भाव क्षण-भर में ही काफ़ूर हो गया। हम चाहते थे कि कम से कम वह कुर्सी पर बैठकर हमारे साथ बराबरी का तो परिचय दे। वह बड़ी देर तक मोहरों की ओर देखता रहा। आवेश से उसका मुंह खुल गया था, जिससे वह बिल्कुल गंवार मालूम होने लगा। फिर उसने एक चाल चली और उठकर चला गया। उसके जाते ही हमारे मित्र ने कहा : "वाह ! शानदार चाल चली है ! लेकिन अपना मोहरा पिटने मत दो। उसे भी बदले में अपना मोहरा देने के लिए मजबूर कर दो। फिर देखियेगा, ईश्वर भी उसे नहीं बचा सकेगा, चौमोहरी हो जाएगी।"

मैकवर ने ऐसा ही किया। बाद की चालें केवल दो व्यक्तियों के बीच चल रही थीं। हम सब तो दृश्य मात्र रह गये थे। न हम इस गोरखधन्धे को ठीक से समझ पा रहे थे। मोहरे बड़ी तेजी से आगे-पीछे बढ़ाये-हटाये जा रहे थे, सात चालों के बाद जेन्टोविक ने कहा, "चौमोहरी !" क्षण भर के लिए कमरे में सन्नाटा छा गया। सहसा ड्रांइगरूम के रेडियो में से नृत्य-संगीत सुनायी दिया। खिड़कियों में से हवा के झोंके भीतर आ रहे थे। सब लोग चुपचाप बैठे रहे। इस घटना ने सबको हैरत में डाल दिया था। एक अजनबी ने विश्व-विजेता खिलाड़ी की हेकड़ी निकाल दी थी। इससे बड़ा चमत्कार और क्या होता ? मैकवर के चेहरे से परम सन्तोष टपक रहा था, और वह बार-बार प्रसन्नतासूचक शब्द बोल रहा था। मैंने ग़ौर से जेन्टोविक के चेहरे की तरफ़ देखा। उसका चेहरा बाज़ी ख़त्म होने के पहले ही पीला पड़ गया था, लेकिन वह अब भी लापरवाही का अभिनय कर रहा था। उसने रौबीली आवाज़ में पूछा,

"सज्जनों, क्या आप तीसरी बाजी भी खेलना चाहते हैं ?"

लेकिन वह मैकवर की बजाय हमारे उस अजनबी दोस्त की ओर

देख रहा था, जिसने हमारी हार जीत में बादल दी थी। जिस तरह घोड़ा नये सवार के बोझ का अनुमान उसके बैठने के ढंग से लगाता है, उसी तरह जेन्टोविक भी जान गया था कि उसका असली प्रतिद्वन्द्वी कौन है। हम सबकी दृष्टि भी उसी ओर लगी थी। लेकिन कुछ जवाब देने से पहले ही मैकवर ने घोषणा कर दी—

"वह तो होगा ही ! लेकिन इस बार आप अकेले ही जेन्टोविक से खेलिये।"

इसके बाद जो हुआ वह असाधारण था। अजनबी, जो अभी तक शतरंज के मोहरों की ओर देख रहा था, दुबारा खेलने का प्रस्ताव सुनकर चौंक गया। उसने घबराये स्वर में कहा,

"नहीं, नहीं, तीसरी बाजी का सवाल ही नहीं उठता। आप लोग मुझे क्षमा करें। बीस-पच्चीस बरस से मैंने शतरंज नहीं खेली·····मुझे खेद है कि मैंने आपके रंग में भंग डालकर भारी बदतमीजी की है।··· मैं आपके खेल में अधिक खलल नहीं डालूँगा।" यह कहकर वह चला गया।

"लेकिन ऐसा नहीं हो सकता !" मैकवर ने पागलों की तरह हवा में मुक्का मारते हुए कहा "मैं यह मानने को तैयार नहीं कि इन महाशय ने पच्चीस साल तक शतरंज नहीं खेली। वाह ! वे तो हर चाल को पहले से ही बता देते थे। यह कैसे हो सकता है ?"

मैकवर ने जेन्टोविक की ओर देखते हुए पूछा।

जेन्टोविक ने लापरवाही से उत्तर दिया, "मैं इस मामले में भला क्या राय दे सकता हूँ ? लेकिन इस आदमी की एकाध चाल मुझे जरूर दिलचस्प लगी। इसीलिए मैं उसे खेलने का एक मौका और देना चाहता था। अगर आप फिर खेलना चाहें तो कल तीन बजे मुझे बुला सकते हैं।"

उसके जाते ही हम लोग खिलखिला कर हँस पड़े। सब जानते थे कि जेन्टोविक ने सहृदयता के कारण खेलने की इच्छा नहीं प्रकट की.

बल्कि वह सहृदयता की आड़ में अपनी झेंप मिटाना चाहता है। हम उसके अहंकार को टूटता देखने के लिए व्याकुल थे। अगले ही क्षण हम शान्तिप्रिय यात्री युद्ध के लिये आतुर हो उठे। जेन्टोविक की हार की ख़बर दुनिया के अखबारों में छप जायेगी, इस विचार की कल्पना से ही हम उत्तेजित हो उठे थे। हम उस अपरिचित व्यक्ति के बारे में सोचने लगे जिसने आकर अपनी नम्रता से जेन्टोविक के अक्खड़पन को मात दे दी थी। हमें निश्चय हो गया कि हो न हो वह छिपा रुस्तम है और किसी व्यक्तिगत कारण से अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन नहीं करना चाहता। हमने निश्चय किया कि जो भी हो, उस व्यक्ति को कल जेन्टोविक से ज़रूर खेलना होगा। मैकवर ने जेन्टोविक की फ़ीस देना मंजूर कर लिया। इसी बीच हमारे साथियों ने एक बेयरे से मालूम कर लिया कि वह व्यक्ति आस्ट्रिया का निवासी है। आस्ट्रियन होने के नाते, मुझे उसके पास निमंत्रण लेकर भेजा गया।

जब मैं उसके पास पहुंचा तो वह एक डैक-चेयर पर बैठकर कोई पुस्तक पढ़ रहा था। मैंने ग़ौर से उसके चेहरे की ओर देखा। वह कुछ थका-सा दिखाई दे रहा था। इतनी छोटी उम्र में ही उसके बाल सफेद होने लगे थे और उसके गालों का रंग मुरझा गया था। न जाने क्यों, मुझे ऐसा लगा कि किसी गहरे शोक ने उसे इतनी जल्दी बूढा बना दिया है। मुझे देखते ही वह शिष्टतापूर्वक उठकर खड़ा हो गया और उसने अपना परिचय दिया। उसके नाम से मालूम हुआ कि वह आस्ट्रिया के बहुत प्राचीन और प्रतिष्ठित खानदान से ताल्लुक रखता है। उसी खानदान का एक व्यक्ति विश्वविख्यात संगीतज्ञ शूबर्ट का गहरा मित्र था, और एक व्यक्ति सम्राट् का चिकित्सक था। डाक्टर बी० (उसका यही नाम था) मेरा प्रस्ताव सुनकर हक्का-बक्का रह गया। उसे यह जानकर हैरानी हुई कि जेन्टोविक उसके खिलाफ़ खेल रहा था। उसे इस बात पर विश्वास ही नहीं होता था। मैं उसे यह नहीं बताना चाहता था कि मैच की फ़ीस मैकवर अदा कर रहा है। बहुत संकोच

के बाद डाक्टर बी० ने मैच में भाग लेना स्वीकार किया, लेकिन एक शर्त पर, कि हम लोग उसे कुशल खिलाड़ी समझ कर लम्बी-चौड़ी उम्मीदें न बांध बैठें। उसके चेहरे पर मासूम मुस्कान थी।

"क्योंकि मुझे तो शतरंज के नियम भी अच्छी तरह मालूम नहीं। मैं सच कहता हूँ, मैंने बीस साल से शतरंज के मोहरों की शक्ल तक नहीं देखी। उससे पहले भी मैं अच्छा खिलाड़ी बिल्कुल नहीं था।"

उसने यह बात इतनी सादगी से कही कि मुझे उसके कथन पर फ़ौरन विश्वास हो गया। लेकिन मैंने उसे उसकी स्मरण-शक्ति और तीक्ष्ण बुद्धि पर बधाई दी। "मालूम होता है आपने शतरंज के सिद्धान्तों का गम्भीर अध्ययन किया है।" उसके चेहरे पर फिर वही स्वप्निल मुस्कान आ गई।

"ईश्वर जानता है, मैंने शतरंज को कितना समय दिया है, लेकिन वह तो परिस्थिति-जन्य अध्ययन था। इसके पीछे एक लम्बी कहानी है। क्या आप आध घंटा....."

उसने सामने वाली डैक-चेयर की ओर इशारा किया। मैंने सहर्ष उसका निमंत्रण स्वीकार कर लिया। डैक पर हम दोनों अकेले थे, डा० बी० ने अपना पढ़ने का चश्मा उतार कर एक ओर रख दिया और अपनी कहानी शुरू की।

"आप बियाना के रहने वाले हैं और हमारे खानदान के नाम से परिचित हैं, यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई। लेकिन आपने शायद मेरे पिता की वकालत की फ़र्म का नाम नहीं सुना होगा, क्योंकि हम लोग केवल इने-गिने घरानों को कानूनी सलाह देते थे और बड़े-बड़े ईसाई मठों की जायदाद की देखरेख करते थे। मेरे पिता किसी समय उन मठों की प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य थे। साथ ही हम राजपरिवार के लोगों का धन कारोबार में लगाते थे। अब वे जमाने बीत गये। मेरे एक चचा बादशाह के निजी चिकित्सक थे और दूसरे चचा बड़े पादरी थे। हमें राजघराने के बहुत से रहस्यों की रक्षा करनी पड़ती थी। मेरे पिता हम

काम में बड़े योग्य थे। मंदी और आर्थिक संकट के काल में भी उन्होंने राजघराने के लोगों का नुकसान नहीं होने दिया। जर्मनी की बागडोर संभालने के बाद जब हिटलर ने धार्मिक संस्थाओं और मठों की जायदादें ज़ब्त करनी शुरू कीं तो हमें राजघराने के आर्थिक हितों की सुरक्षा के लिये विदेशी बैंकों से गुप्त समझौते करने पड़े। हम पब्लिक की नज़रों से बचने के लिये कभी शाहीमहल में नहीं आते-जाते थे, अख़बारों में विज्ञापन नहीं देते थे, यहाँ तक कि हमने अपने दफ़्तर के बाहर नाम की तख्ती भी नहीं लटकाई थी। सच पूछिये तो किसी पुलिस के अधिकारी को यह शक भी नहीं हुआ था कि शाही परिवार के पत्रवाहक खुफ़िया तौर पर विदेशों से अपना पत्र-व्यवहार हमारे दफ़्तर की मार्फ़त करते थे।

"उधर हिटलर का राष्ट्रीय समाजवादी (नात्सी) दल युद्ध से पूर्व हर देश में ग़रीबों और बेकारों की सेनाओं का संगठन कर रहा था। हर सरकारी दफ़्तर और व्यापारिक संस्था में उनकी गुप्त कमेटियाँ मौजूद थीं। उनके जासूस हर गली-मोहल्ले में, यहां तक कि राजमहल के कमरों में भी रहते थे। हमारे छोटे से दफ़्तर में भी एक भेदी पैदा हो गया—वह था हमारा अदना सा क्लर्क जिसे मैंने एक पादरी की सिफारिश पर रखा था। लेकिन हम उससे छोटे-मोटे काम लेते थे, जैसे फाईलें रखना, टेलीफ़ोन सुनना आदि। उसे हमारी डाक खोलने की इजाजत नहीं थी। ख़ास-ख़ास चिट्ठियाँ मैं ख़ुद टाइप करता था और उनकी कोई प्रतिलिपि दफ़्तर में नहीं रहती थी। सारे ज़रूरी ख़त मैं घर ले जाता था। मैं अपने डाक्टर चचा को डाक्टरी मशविरा देने के बहाने ही शाही परिवार से मिलता था, इसलिये किसी जासूस को हमारी गतिविधि पर संदेह नहीं हुआ। लेकिन दुर्भाग्य से हमारे महत्त्वाकांक्षी क्लर्क ने यह अनुभव किया कि हम उस पर विश्वास नहीं करते। हो सकता है मेरी अनुपस्थिति में किसी संदेहवाहक ने "बैरन फ़र्न" की बजाये "हिज़ मैजेस्टी" का जिक्र किया हो या उस बदमाश ने चुपके से कोई ख़त खोल कर पढ़ लिया हो। लेकिन मुझे पता चले बगैर उसने बर्लिन से हमारी

गतिविधि पर निगरानी रखने का आदेश-पत्र प्राप्त कर लिया था। बाद में जेल जाकर मुझे मालूम हुआ कि वह आदमी, जो हमेशा कामचोर था, बाद में इतना मेहनती कैसे हो गया था, और वह किसलिये डाक-खाने में डाक ले जाने के लिए सदा उत्सुक रहता था। मुझे अपनी लापर-वाही पर बड़ा रंज होता है, लेकिन क्या हिटलर की चालाकी के आगे संसार के बड़े-बड़े कूटनीतिज्ञों की पराजय नहीं हुई ? हिटलर के बियाना में दाखिल होने से एक दिन पहले जब 'एस-एस'[1] के वर्दीधारी सैनिकों ने आकर मुझे गिरफ्तार कर लिया, तब मुझे आभास हुआ कि जरूर पिछले कई महीनों से गेस्टापो[2] की मुझ पर कृपादृष्टि रही होगी। सौभाग्य से रेडियो पर शुश्निग का विदाई-भाषण सुनते ही मैंने बहुत से महत्त्वपूर्ण खत जला दिये थे और कुछ विदेशी बैंकों की रसीदें और अन्य काग़ज़ात मैले कपड़ों की गठरी में छिपाकर अपनी विश्वस्त नौकरानी के हाथ अपने चचा के घर भिजवा दिये थे। इसके बाद ही पुलिस आकर मुझे पकड़ ले गई।"

यह कहकर डाक्टर बी० सिगार सुलगाने के लिये रुक गया। दिया-सिलाई की रोशनी में मैंने देखा, आवेश से इसके ओंठ कांप रहे थे। सारे चेहरे पर एक अज्ञात बेचैनी छा गई थी।

"आप सोच रहे होंगे कि मैं आपको नाज़ियों के अमानुषिक अत्या-चारों की कहानी सुनाऊँगा, नहीं मुझे यह सब नहीं सहना पड़ा। मुझे उन अभागे आस्ट्रियावासियों के कैम्प में नहीं भेजा गया, जहां कैदियों के शरीर और आत्मा को यातनायें दी जाती थीं, बल्कि मुझे उन धनी व्यक्तियों की श्रेणी में रखा गया, जिनसे राष्ट्रीय समाजवादी दल (नात्सी) को गुप्त सूचनाएँ और धन मिलने की आशा थी। वे जान गये थे कि उनके दुश्मनों के विश्वासपात्र होने की हैसियत से हमें मठाधीशों और

---

१. हिटलर द्वारा संगठित युवकों की नात्सी सेना।

२. नात्सी खुफ़िया पुलिस।

शाही परिवार के सब कच्चे-चिट्ठे मालूम हैं। उन्हें यह भी शक था कि हमने इन संस्थाओं का बहुत सा पैसा उनकी लोलुप दृष्टि से दूर विदेशी बैंकों में भिजवा दिया है। इसलिए उन्होंने मुझे इस विशेष कैम्प में भेज दिया। आपको याद होगा कि हमारे चान्सलर महोदय और बैरन रॉस्त्स चाइल्ड को भी कँटीले तारों से घिरे कैम्प में नज़रबन्द नहीं किया गया था, बल्कि एक शानदार होटल में सम्मानपूर्वक ठहराया गया था, जिसमें उन दिनों गेस्टापो (नात्री खुफ़िया पुलिस) का दफ्तर था। मुझे भी वहीं ठहराया गया।

"होटल का कमरा—सुनने में कितना आराम देह मालूम होता है? लेकिन हम 'प्रमुख व्यक्तियों' को सीली बैरकों की बजाय होटल के कमरों में रखना भी एक चाल थी। मारने-पीटने या शारीरिक यंत्रणाएँ देने की बजाय उन्होंने हमारे साथ दुख देने के अधिक सूक्ष्म तरीके बरते। मनुष्य की आत्मा को सब से अधिक पीड़ा मानव-सम्पर्क से अलग अकेला रहने से होती है। उन्होंने हमें अलग-अलग कमरों में बन्द करके बाहर की दुनिया के द्वार हमारे लिए बन्द कर दिये, ताकि भूख और ठंड की बजाय मानसिक दबाव से हमारे बंद ओंठ खुल जायें।

"मेरे कमरे को देखकर कोई उसे जेल की कोठरी नहीं कहता। वहाँ मेज-कुर्सी, पलंग, नहाने का टब, जालीदार खिड़की सभी कुछ तो था। लेकिन दरवाज़ा दिन-रात बन्द रहता था। मेज़ पर कोई किताब, अख़बार, पेन्सिल या काग़ज़ नहीं था। खिड़की से केवल एक ईंट की दीवार नज़र आती थी। उन्होंने मुझे शून्य के घेरे में बन्द कर दिया था। मेरी सब चीजें छीन ली गयी थीं, मेरी घड़ी·····ताकि मैं समय न जान सकूँ; मेरी पेन्सिल·····ताकि मैं अपने विचारों को लिपि-बद्ध न कर सकूँ; मेरा चाकू·····ताकि मैं आत्महत्या न कर सकूँ; यहां तक कि सिगरेट भी·····ताकि मेरे ख़ून में गरमी न आ सके। सिवा वार्डर के किसी दूसरे इन्सान की शक्ल कभी देखने को नहीं मिलती थी, लेकिन वार्डर को मुझ से बात करने या मेरे सवालों का जवाब देने की इजाज़त

नहीं थी। सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक किसी इन्सान की आवाज़ मेरे कानों में नहीं आती थी। आँखों, कानों और स्पर्श के लिए कोई सहारा न था। मैं अकेला था, साथ देने के लिए बेजान चीज़ें थीं, मेज़, कुरसी, पलंग, टब। चुप्पी के समुद्र में मैं उस ग़ोताख़ोर की तरह था जो जानता है कि उसकी रक्षा की डोरी टूट चुकी है और वह समुद्र के अगाध तल से कभी ऊपर नहीं खींचा जायेगा। उस शून्यता में मेरे करने, देखने और सुनने के लिए कोई चीज़ नहीं थी। देश और काल से परे वहाँ शून्य ही शून्य था। मैं कमरे में टहलता था, मेरे विचार भी मेरे साथ टहलते, लेकिन विचारों को भी कोई धुरी चाहिये, जिसके इर्दगिर्द वे चक्कर काट सकें। शून्य के भार से दब कर विचार भी चेतना के अथाह तल में डूब जाते। सुबह से लेकर शाम तक मेरे जीवन में एक भी घटना न होती, बस प्रतीक्षा, प्रतीक्षा! सोचते, सोचते, सोचते मेरी कनपटियाँ दुखने लगीं। कुछ भी तो नहीं घटता था उस जीवन में—था केवल एकान्त, एकान्त, निविड़ एकान्त!

"पन्द्रह दिन तक बाहर की दुनिया से मेरा सम्पर्क टूटा रहा। युद्ध की भयंकर से भयंकर घटनाओं की ख़बर भी वहाँ नहीं मिल सकती थी, क्योंकि जीवन मेज़, कुर्सी, पलंग और टब तक ही सीमित था। कमरे की दीवार की एक-एक रेखा मेरे दिमाग़ की तहों में अंकित हो गई थी। एक दिन सहसा मेरी बुलाहट हुई। मैं दिन और रात के फ़र्क को भी भूल गया था। बहुत से बरामदों को पार करके मुझे एक ऐसे कमरे में ले जाया गया, जहां सैनिक वर्दियाँ पहने बहुत से लोग बैठे थे। मेज़ पर फाइलों का ढेर लगा था। मुझ से सवाल पूछे गये, सच्चे और झूठे, सीधे और टेढ़े, बुद्धिमानी और मूर्खता से भरे। मैंने उनके जवाब दिये, अपरिचित और रहस्यमयी उँगलियाँ फाइलों में चलने लगीं और उन खौफ़नाक उँगलियों ने एक रिकार्ड तैयार किया, लेकिन उस समय सब से ज्यादा खौफ़नाक चीज यह थी कि मुझे यह न मालूम था कि गेस्टापो को मेरी सरगर्मियों का कितना पता चल गया है और वे मुझ से कितना और

निकलवाना चाहते हैं। मैंने गिरफ़्तार होने से पहले जो कागज़ात अपनी नौकरानी को दिये थे, वे मेरे चचा तक पहुँचे भी या नहीं ? क्लर्क के विश्वासघात की सीमा कहाँ तक है ? ख़ुफ़िया विभाग ने अब तक मेरे कितने पत्र पकड़े हैं, और वे किसी मठ के फूहड़ पादरी को रिश्वत देकर उससे न जाने कितना उगलवा चुके हैं, मैं यही सोच रहा था।

उन लोगों ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी। अमुक मठ के नाम पर मैंने कितनी सिक्योरिटियाँ ख़रीदीं, मेरा पत्र-व्यवहार किन-किन बैंकों से हुआ, क्या मैं अमुक व्यक्ति को जानता हूँ या नहीं, क्या मैंने स्विट्ज़रलैण्ड में किसी व्यक्ति को ख़त लिखा है या नहीं--मैं सोच रहा था मैं क्या जवाब दूं, ताकि वे जितना जानते हैं उससे अधिक न जान पायें, लेकिन वे कितना जान चुके हैं, यह मैं कैसे जानता ? मैं नाम बताकर नाहक़ किसी की जान ख़तरे में नहीं डालना चाहता था। न ज़रूरत से ज्यादा झूठ बोलकर अपने प्राण ख़तरे में डालना चाहता था।

"पूछताछ में इतनी बुराई नहीं थी, लेकिन उसके बाद अपनी कोठरी में लौटना मुझे बहुत अखरने लगा। मैं एकान्त में बैठ कर सोच रहा था, मुझे उनके सवालों का क्या जवाब देना चाहिये था। मन ही मन मैं अपनी स्मृति को कुरेद कर सारे नाटक को दुहरा रहा था। मुझे क्या कहना चाहिये था, क्या मेरे किसी उत्तर से उन्हें कोई शक तो नहीं हो गया ? रह रह कर यही विचार मेरे मस्तिष्क में चुनकर काट रहे थे। यहाँ तक कि नींद में भी वे मेरा पीछा न छोड़ते थे।

"पूछताछ तो एक घंटे में ही ख़त्म हो जाती थी, लेकिन उसके बाद मुझे वही यातना सैकड़ों बार सहनी पड़ती थी। मेरे कमरे का वातावरण वही था। एक भी नई चीज़ वहां नहीं आई थी, यहां तक कि दियासलाई की तीलियां भी नहीं, जिनसे मैं खेल सकता। मैं जान गया कि हमें होटल के आरामदेह कमरों में किस भयंकर मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से ठहराया गया है। नजरबन्दों के कैम्प में शायद पत्थर ढोते-ढोते हमारे हाथ लहूलुहान हो जाते, शरीर जाड़े में ठिठुर जाता, हमें दो दर्जन

आदमियों के साथ एक ही बदबूदार कोठरी में बंद रखा जाता, लेकिन वहाँ कम से कम हमें इन्सानों के चेहरे तो देखने को मिलते। नीला आकाश, जगमगाते तारे तो कोई न छीन सकता। कम से कम कैम्प के अहाते में एकाध पेड़ तो होता ही, जिस पर जा कर नज़रें टिक जातीं। लेकिन इस कमरे में तो कोई भी ऐसी चीज़ नहीं थी, जिसे देखकर मैं अपनी मानसिक वेदना को भूल सकता। इसीलिये तो उन्होंने हमें यहाँ बंद कर दिया था, ताकि मेरे हृदय में घुटन पैदा हो और मैं अपने मन में उनडते हुए विचारों को थूकने के लिये मजबूर हो जाऊं। वे जो कुछ जानना चाहते हैं वह उन्हें बता दूँ और अपने स्नेही मित्रों और सम्बन्धियों को गिरफ़्तार करवा दूँ।

"एकान्त के भीषण दबाव से मेरी नसें टूट रही थीं। पागलपन से बचने के लिये मैं किसी व्यसन की तलाश में था। मैंने बचपन से सीखी हुई कविताओं का, होमर की रचनाओं का, क़ानून की किताबों का आश्रय लिया। जब वह खज़ाना समाप्त हो गया तो मैंने गणित के सवाल हल करने शुरू कर दिये, लेकिन किसी केन्द्रशक्ति के अभाव में मेरी स्मृति बिखर जाती थी। मैं किसी भी विषय में सोच नहीं पाता था। रह-रह कर मेरे मन में एक ही विचार आता था। पुलिस को कौनसी बातें मालूम हो गई हैं? कल मैंने उन्हें क्या जवाब दिये थे? अगली बार मैं उन्हें क्या जवाब दूँगा?

"चार महीनों तक मेरी मानसिक दशा इसी तरह रही। पूरे चार महीने। कितना छोटा वाक्य है। इसे बोलने में एक चौथाई सैकिंड लगता है—चार महीने। लेकिन एकान्त में समय कितनी देर से बीतता है, यह शब्दों में बताना असम्भव है। एकान्त, जो आत्मा के भीतर घुसकर उसमें छेद कर देता हो; सब तरफ़ शून्यता ही शून्यता हो, क़ब्रिस्तान की सी शान्ति हो, एक ही वार्डर हो, जो बिना देखे खाना भीतर ढकेल देता हो। दिमाग में बार-बार एक ही विचार आ रहा हो—ऐसे में पागल होना लाज़िमी है।

"मुझे दिमाग़ की ख़राबी के लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लगे। पहली बार जब मुझे पूछताछ के लिये बुलाया गया था तो मेरा दिमाग़ बिल्कुल साफ़ था। मैं सोच-बूझकर हर सवाल का जवाब दे रहा था। मुझे क्या कहना चाहिये, क्या नहीं कहना चाहिये—इसकी तमीज़ थी। लेकिन अब मैं हकला कर बोलने लगा था। और मेरी आंखें उस क़लम की निब पर लगी रहती थीं जो मेरे शब्दों को तेज़ी से लिपिबद्ध करता जा रहा था। मुझे लगता था जैसे मस्तिष्क के स्नायुओं पर से मेरा नियन्त्रण हटता जा रहा है और मैं किसी दिन पुलिस को सब कुछ बता दूँगा। शून्यता के पंजे से बचने के लिये बारह व्यक्तियों के साथ विश्वासघात कर डालूँगा। उससे मुझे सिर्फ़ इतना फ़ायदा होगा कि मैं आज़ादी से सांस ले सकूंगा।

"एक दिन शाम को मेरी विक्षिप्ति बहुत बढ़ गई। जब वार्डर मेरा खाना रखकर चलने लगा, तो मैंने चिल्लाकर उससे कहा, "मुझे पुलिस के अधिकारियों के पास ले चलो। मैं सब कुछ बता दूंगा। मुझे सब मालूल है कि किन बैंकों में पैसा रखा है। मैं सारे भेद बता दूँगा।" सौभाग्य से वार्डर बहुत दूर जा चुका था, इसलिए उसने मेरी बातें नहीं सुनीं, या शायद उसे मेरी बातें सुनने की कोई इच्छा न थी।

"इसी आपद्काल में एक ऐसी घटना घटी जिसने मुझे कुछ समय में लिए पागलपन से बचा लिया। जुलाई के अन्तिम हफ़्ते के मुझे एक बार फिर पूछताछ के लिए दफ़्तर में बुलाया गया था। मुझे वह दिन अच्छी तरह याद है क्योंकि उस दिन मूसलाधार बारिश हो रही थी। मैं एक कमरे में बैठा अपनी बारी आने की प्रतीक्षा कर रहा था। हर बार अधिकारियों के आने से पहले मुझे कमरे में प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। इसमें भी एक चाल थी। आधी रात के समय कैदियों को अचानक बुला कर वे उनमें तीव्र उत्तेजना पैदा कर देते थे, और उसके बाद उनके शरीर और आत्मा को पीड़ा देने के लिए जानबूझ कर उन्हें दो या तीन घंटों तक प्रतीक्षा करवाते थे। २७ जुलाई को उन्होंने विशेष रूप से

मुझे बुलाने में देरी की। मैं दो घंटे तक प्रतीक्षालय में खड़ा रहा, इस लिए मुझे वह तारीख अच्छी तरह याद है।

"कमरे की दीवार पर एक कैलेंडर लटका हुआ था—मेरी टाँगें खड़े-खड़े थक गई थीं। आप कल्पना नहीं कर सकते, उस समय मैं किसी छपी हुई चीज़ को देखने के लिये कितना बेचैन हो रहा था, मै भूखे भेड़िये की तरह कैलेन्डर की तारीखों पर टूट पड़ा—'२७ जुलाई' मैंने इस तारीख को बार-बार याद किया। फिर मैं सोचने लगा कि आज वे जालिम न जाने मुझ से कौनसा सवाल पूछ बैठेंगे। वे हर बार नये सवाल पूछकर मुझे तंग करते थे। खड़े रहने के बावजूद भी वह कमरा मुझे अच्छा लग रहा था क्योंकि वह मेरा कमरा नहीं था। उसमें एक की बजाय दो खिड़कियाँ थी, और खिड़की की दहलीज में वे छेद नहीं थे, जिन्हें मैं अपने कमरे की खिड़की में लाखों बार देख चुका था। दरवाज़े पर रोगन किया हुआ था। कोने में फ़ाईल रखने की एक अलमारी और कपड़े टांगने की खूंटी थी, जिस पर तीन या चार गीले फ़ौजी कोट लटक रहे थे—मेरे सैय्यादों के कोट। मेरी भूखी आँखों को देखने के लिये नई चीज़े तो मिलीं—मैं कमरे की हर चीज़ को आँखें फाड़कर देख रहा था।

"उन कोटों की एक-एक तह मैने देखी। मैंने एक कोट के कॉलर पर पानी की एक बूँद देखी। आपको सुनकर हँसी आयेगी कि मैं उत्तेजित होकर बूँद के फर्श पर गिरने की प्रतीक्षा करने लगा। कुछ मिनटों तक मेरे प्राण उस बूँद में ही अटके रहे। जब बूँद गिर गई तो मैं कोटों के बटन गिनने लगा। दो में आठ बटन थे, तीसरे में दस थे। मैं फिर कोटों पर सिले निशानों से उन कोटों के पहनने वालों के पदों का अनुमान लगाने लगा। मेरी बुभुक्षित आँखों को इन क्षुद्र बातों में बड़ा रस मिल रहा था। अचानक मेरी दृष्टि कोट की जेबों की ओर गई। मैंने पास जाकर देखा कि उसमें चौकोर आकृति का उभार था। जेब में एक किताब थी। मेरे घुटने काँपने लगे—किताब !

"चार महीनों से मैंने कोई किताब नहीं देखी थी, किताब के वाक्यों, पृष्ठों की कल्पना से ही मेरा मन रोमांचित हो उठा। मैं क्षणभर के लिये अपने पागलपन को भूल गया। मेरी आँखें मानों जेब में छेद कर रही थीं। इसके बाद एक ऐसा क्षण आया जब मैं अपने लालच पर क़ाबू न पा सका। किताब का स्पर्श पाने की कल्पना से ही मेरी उंगलियों में गुदगुदी होने लगी। मैं अनायास ही उधर खिचता गया।

'वार्डर ने मेरी इस हरकत की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। उसने सोचा होगा कि बेचारा दो घंटे लगातार खड़े होने के कारण थक गया है। इसलिये दीवार का सहारा लेना चाहता है। फिर मैं कोट के नज़दीक आकर जेब में रखी चीज़ को टटोलने लगा। मेरी उंगलियों को चार महीने में पहली बार कागज का स्पर्श प्राप्त हुआ। सचमुच वह किताब थी! इसी समय मेरे मन में बिजली-सी कौंध गई, मैं इस किताब को चुराकर अपने साथ क्यों न ले जाऊं? इस विचार ने मेरे मन पर तेज़ विष का सा असर फैला दिया। मेरे कान सनसनाने लगे, हृदय की धड़कन तेज़ हो गई और मेरे हाथ बर्फ जैसे ठंडे हो गये। लेकिन मैं अपनी आत्मा की मांग ठुकरा न सका। हाथ पीछे करके मैंने कोट की जेब में से आहिस्ता-आहिस्ता वह किताब निकाल ली। मेरा चेहरा अब भी वार्डर की तरफ था, इसलिये उसे कोई संदेह न हुआ। अगले क्षण किताब मेरे हाथों में थी। लेकिन उसके बाद मेरे मन में भय व्याप गया। मैं सोचने लगा, अब क्या करना चाहिये। मैंने किताब को अपनी पतलून के पीछे कमर की पेटी में खोंस लिया और कमर पर हाथ रखकर चलने का अभ्यास करने लगा। किताब पेटी में से खिसकी नहीं। मेरी चालाकी सफल हो गई थी।

इसके बाद मेरी सुनवाई हुई। इस बार मुझे बहुत अधिक सतर्क रहना पड़ा, क्योंकि मेरा सारा ध्यान मुकद्दमे की कारवाई की तरफ़ न होकर पेटी में खोंसी हुई किताब की तरफ था। उस दिन सौभाग्य से मुझे जल्दी ही छुट्टी मिल गई और मैं किताब को अपने कमरे तक लाने

में कामयाब हो गया, हालांकि बरामदे में से गुज़रते वक्त एक बार किताब मेरी पतलून में से खिसक कर बाहर गिरने ही वाली थी, जिसे मैंने खांसी का बहाना करके दुबारा पेटी में खोंस लिया था।

आप समझते होंगे कि मैंने कोठरी में घुसते ही किताब पढ़नी शुरू कर दी होगी। बिल्कुल नहीं! मैं सबसे पहले किताब की कल्पना में रस लेना चाहता था। उसके बारे में दिवा-स्वप्न देखना चाहता था। मैं मन ही मन प्रार्थना कर रहा था कि उस किताब में बहुत से बारीक छपाई वाले पृष्ठ हों ताकि मैं उसे जल्द ही खत्म न कर सकूँ। फिर मैं चाहता था कि वह किसी कठिन विषय की पुस्तक हो ताकि मुझे घोर मानसिक परिश्रम करना पड़े—केवल मनोरंजन मुझे नहीं चाहिये था। मैं चाहता था—ज़रा मेरे इस चाहने की धृष्टता तो देखिए—कि वह गेटे या होमर की रचना हो। आखिर मेरे लिए अपनी उत्सुकता को रोक पाना कठिन हो गया। मैंने अपने बिस्तर पर लेटकर काँपते हुए हाथों से किताब निकाली।

"लेकिन पुस्तक का मज़मून देखकर मुझे न सिर्फ निराशा ही हुई, बल्कि मेरा मन खीज से भर गया। क्या इसी पुस्तक के लिए मैंने इतना खतरा और तकलीफ़ मोल ली थी! वह शतरंज के विश्वविजेताओं द्वारा खेली गई डेढ़ सौ बाजियों का संग्रह था। अगर मैं ताले में बन्द न होता तो फौरन ही उस किताब को फाड़कर खिड़की से बाहर फेंक देता। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि उस खुराफ़ात का क्या करूँ। विद्यार्थी काल में अन्य लड़कों की तरह मैंने मनोरंजन के लिये शतरंज सीखी थी। लेकिन यह सिद्धान्त-ग्रंथ मेरे किस काम का था? बिना मोहरों के, बिना किसी साथी के, भला कोई शतरंज जैसा खेल खेल सकता है? मैं भूमिका और नियमों की तलाश में पन्ने पलटने लगा। उसमें चैम्पियन खिलाड़ियों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले चिह्न ए १—ए२, घोड़ा—एफ़—घोड़ा—जी ३ आदि थे। मेरे पल्ले कुछ न पड़ा। इस बीजगणित को समझने की कुंजी मेरे पास न थी। बाद में सोचने पर

मैंने अनुमान लगाया कि ए, बी, सी, अक्षर लम्बी सीधी कतारों के लिये हैं। १ से लेकर आठ तक के अंक बाईं से दाईं कतारों के लिए हैं और प्रत्येक मोहरे की स्थिति के सूचक हैं। बड़ी मग़ज़पच्ची के बाद मैं इस सांकेतिक भाषा को कुछ-कुछ समझने लगा।

"मैंने सोचा क्यों न एक झूठमूठ की शतरंज बनाकर इन चालों की परीक्षा कर ली जाये। सौभाग्य से मेरे बिस्तर की चादर में रंगीन चारखाने बुने हुए थे। मैंने चौंसठ खानें गिनकर अपनी शतरंज बनाई, और किताब की जिल्द फाड़कर उसे अपने गद्दे के नीचे छिपा दिया। फिर डबल रोटी के टुकड़ों से मैंने बादशाह, वजीर और बाकी मोहरें तैयार किये (उनकी भोंडी सूरतें देखकर हँसी आती थी)। मैंने किताब की चालों को देखकर अपने बिस्तर पर चालें चलनी शुरू कर दीं। लेकिन मेरे आटे के मोहरे, जिनमें से आधे मैंने मट्टी से रंग दिये थे, किताब की चालों के आगे न चल सके। कुछ दिन तक तो मुझे हर चाल पन्द्रह बीस बार चलनी पड़ती थी। लेकिन दुनिया भर में शतरंज सीखने के लिये और किसके पास इतना समय और धैर्य था? और किसमें सीखने की इतनी प्रबल आकांक्षा थी?

"हर बाज़ी सीखने में मुझे पूरा एक सप्ताह लगता। उसके बाद मुझे मोहरों की ज़रूरत न रही, मैं चारखानों की सहायता के बगैर ही मोहरों की स्थिति समझ सकता था। ए १, ए २, सी७, सी८, के छपे हुए अंक जो पहले मेरे लिये रहस्य थे, अब साकार हो गये। शतरंज की बिसात और मोहरे मेरे मानस-पटल पर बिछ गये और पुस्तक देखते ही मुझे उनकी स्थिति का सही अन्दाज़ लग जाता, ठीक उसी तरह जैसे कोई अभ्यस्त संगीतकार छपी हुई सरगम को देखकर सब स्वरों की एक साथ और अलग-अलग कल्पना कर लेता है।

"पन्द्रह दिन के बाद मैं किताब में छपी सब चालों को अपनी याददाश्त की सहायता से खेल सकता था, जिसे शतरंज की भाषा में 'आँख मींचकर खेलना' कहते हैं। वह चोरी मेरे लिये कितनी हितकर

साबित हुई यह मैं तभी समझ सका। अब मुझे एक महान् उपलब्धि हो गई थी। मैं बिना किसी ठोस चीज़ की सहायता से एक नई दुनिया में प्रवेश कर सकता था, जिसमें शून्य मेरा पीछा नहीं कर सकता था। उन डेढ़ सौ बाजियों ने मुझे समय और काल की घुटन से मुक्ति दिला दी।

"इस नये शौक के आकर्षण को ताजा बनाये रखने के लिए मैंने अपनी दिनचर्या को इस प्रकार बाँटा : दो बाज़ियाँ सुबह, दो बाज़ियाँ दोपहर के समय, और शाम को इन चारों बाज़ियों का पुनः अभ्यास। इस दिनचर्या ने मेरे जीवन को नई स्फूर्ति दी। शतरंज में सबसे आश्चर्य-जनक गुण यह है कि आदमी मानसिक शक्तियों को सीमित परिधि में रखते हुए भी थकान नहीं महसूस करता, बल्कि इससे मानसिक संतुलन में और भी अधिक सहायता मिलती है। पहले तो मैं उन चैम्पियन खिलाड़ियों की चालों को यान्त्रिक ढंग से दुहराता रहा, लेकिन बाद में मुझे शतरंज में एक कलात्मक सुख मिलने लगा। मैं शतरंज के युद्ध-क्षेत्र में सेनाओं के झूठमूठ आक्रमण और क़िलेबंदियों के नाटकों के पीछे-छिपे हुए शिष्ट अभिनय को समझने लगा था। मैं दूरदर्शिता, संयोग और सुरक्षा के शिल्प से परिचित हो गया और प्रत्येक चैम्पियन खिलाड़ी की शैली को पहचानने लगा। जैसे कुछ प्रबुद्ध पाठक किसी कविता की कुछ पंक्तियाँ पढ़कर ही बता सकते हैं कि वह कविता अमुक कवि ने लिखी है। जिस महान् कला को मैंने खेल समझ कर अपने मनोरंजन के लिए शुरू किया था, वह मेरी आत्मा की चिरसंगिनी बन गई। अलेखिन, लैस्कर, बोग्लुबोव और टारटेकोवर आदि महान् खिलाड़ी मेरे प्रिय साथी बन गये।

"मेरे सुनसान कमरे में ये साथी सदा मौजूद रहते थे और शतरंज के नियमित अभ्यास से मेरी बौद्धिक कुंठायें दूर हो गई थीं। शतरंज के अनुशासन ने मेरे दिल और दिमाग़ को छुरी की धार की तरह तेज़ कर दिया था। मुकद्दमे की कारवाइयों में भी मैं आने वाले सवालों का

अन्दाज़ लगा लेता था, पुलिस की झूठी धमकियों का रहस्य जान गया था। मुझे लगता था कि इस बीच गैस्टापो के अधिकारी मुझे आदर की दृष्टि से देखने लगे थे। शायद उन्हें मेरी ढिठाई पर आश्चर्य हो रहा होगा।

"मेरा यह सुख ढाई महीने से अधिक चिरस्थायी न रह सका। ढाई महीने के बाद मुझे फिर शून्य ने आ घेरा। इस बीच मैंने शतरंज इतनी बार खेली थी, कि शतरंज में मुझे अब कोई नवीनता न दिखाई देती थी। उसका आकर्षण समाप्त हो चला था। उन बाज़ियों में भला अब मुझे क्या आनन्द मिल सकता था, जिनकी एक-एक चाल मुझे कंठस्थ हो गई थी। पहली चाल चलते ही सारी बाज़ी का नक्शा मेरी आँखों के सामने आ जाता था। खेलने में अब न कोई उत्तेजना थी, न आश्चर्य था, न पेचीदगी ही। अगर मुझे कोई शतरंज की ऐसी पुस्तक मिल जाती, जिसमें नई चालें होतीं तो शायद मेरा ध्यान बंट जाता। लेकिन नई पुस्तक पाना असंभव था इसलिए मैंने विक्षिप्ति से बचने के लिए एक नया उपाय सोचा। पुरानी बाज़ियों की बजाय मैंने नई चालों की कल्पना की, और मैं अपनी चली हुई चालों को खुद ही काटने लगा।

"पता नहीं आपने कभी इस शाही खेल के बौद्धिक पक्ष के बारे में सोचा है या नहीं। अगर इस खेल में संयोग का तत्व रहता तो इसके खेलने में कोई मज़ा न था। शतरंज का आकर्षण मूलतः इस बात में है कि दो व्यक्ति परस्पर-विरोधी दिशाओं में सोचते हैं। सफ़ेद मोहरों की आगामी चालों से अपरिचित काले मोहरे सफ़ेद मोहरों को पीट देना चाहते हैं, उधर सफ़ेद मोहरे घात लगा कर काले मोहरों को युद्धक्षेत्र से बाहर खदेड़ देना चाहते हैं। लेकिन जब एक ही व्यक्ति सफ़ेद और काले दोनों रंगों के मोहरे चलता है, तब उसके मन की स्थिति क्या होगी, ज़रा इसका अनुमान लगाइये। एक ही मस्तिष्क जानने, और न जानने दोनों का अभिनय करता है। सफ़ेद मोहरों का साथ देते समय वह इस

बात को भूल जाना चाहता है कि अभी कुछ क्षण पहले उसने काले मोहरों के साथी के रूप में सफ़ेद मोहरों का अनिष्ट चाहा था। इस तरह का बौद्धिक द्वन्द्व चेतना की विशृङ्खलता का सूचक है। आप स्विच दबाकर अंधेरा या प्रकाश कर सकते हैं। शतरंज में अपने खिलाफ़ खेलना उतना ही विडम्बनापूर्ण है जितना अपनी परछाई से प्रतियोगिता करना।

"ख़ैर, विक्षिप्ति की उस अवस्था में मैं महीनों तक इस असंभव प्रयास के पीछे लगा रहा। पागलपन से बचने का मेरे पास उस समय यही एकमात्र तरीक़ा था। शून्यता के खूंख्वार पंजों से बचने के लिये मैंने अपने व्यक्तित्व को सफेद मोहरों और काले मोहरों में बांट दिया था।"

डाक्टर बी० कुर्सी की गद्दी के सहारे आंख मूंद कर कुछ क्षण तक आराम करता रहा। मुझे लगा वह उन अप्रिय स्मृतियों के दावानल को बुझाने की कोशिश कर रहा था। उसके ओंठ आवेश से कांप रहे थे। कुछ देर बाद उसने अपनी उत्तेजना पर क़ाबू पाकर कहा :

"मुझे अफ़सोस है कि अगली घटनायें मुझे अच्छी तरह याद नहीं। आप समझ गये होंगे कि इस द्वैत के अभिनय से मेरा व्यक्तित्व कितना अनुशासनहीन हो गया था। मैं आपको पहले भी बता चुका हूँ कि बिना साथी के, शतरंज खेलना निरर्थक है। लेकिन अगर लकड़ी के मोहरे और बिसात बिछी हो तो इसको कुछ हद तक सार्थक भी बनाया जा सकता है, क्योंकि और न सही तो मोहरों की दूरी तो बनी रहती है। आप कभी उठकर सफेद मोहरों की तरफ़ आ जायेंगे और कभी काले मोहरों की तरफ़, और बारी-बारी से दोनों के दृष्टिकोणों का समर्थन करेंगे। लेकिन मुझे तो यह संघर्ष काल्पनिक युद्धक्षेत्र में करना पड़ता था, और चौंसठ घरों की स्थिति का ध्यान रखना पड़ता था। कल्पना में ही अपने से हारना-जीतना होता था। मेरी चेतना न जाने कितने टुकड़ों में बिखर गई थी। आप मेरी मानसिक दशा का अन्दाज़ नहीं लगा सकते।

"मैं आपको उन घटनाओं की और अधिक गहराई में नहीं ले जाना चाहता। इस काल्पनिक नाटक में मुझे दोनों पक्षों की आगामी चालें

सोचनी पड़ती थीं, और एक की बजाय दो दिमाग़ों से काम लेना पड़ता था। लेकिन व्यक्तित्व के खंडित होने का मुझे इतना भय नहीं था। सबसे बड़ा ख़तरा तो यह था कि मैं अपनी ही बनाई हुई इस भूलभुलैया में स्वयं भी भटक गया। पहली डेढ़ सौ बाज़ियां मेरे दिमाग़ की उपज न थीं, न ही उन्हें सीखने में मुझे कोई विशेष मेहनत करनी पड़ी थी। यह तो ऐसा ही था, जैसे विद्यार्थी कानूनी पुस्तकों या कविताओं को रटते हैं। यह तो स्मरण-शक्ति का व्यायाम मात्र था। 'प्रतिदिन चार बाज़ी' खेलना मेरे लिये उसी तरह था जैसे कोई विद्यार्थी स्कूल से मिला काम करता है। अगर मैं कोई चाल भूल जाता तो किताब से देखकर अपनी भूल सुधार लेता था। अपने आप को भूलने के लिये मैं दूसरों द्वारा खेली गई चालों को खेलता था। हार-जीत की मुझे परवाह न थी। अलैखिन और बोग्लोवोव में कौन अच्छा खिलाड़ी है—इससे मुझे कोई सरोकार न था। क्योंकि मैं उस खेल का शौक़ीन दृष्टा मात्र था। लेकिन जबसे मैंने अपने विरुद्ध खेलना शुरू किया तो मेरा व्यक्तित्व भी विद्रोही हो गया। दोनों पक्ष जीतने के लिये आतुर रहते थे। दोनों एक-दूसरे की अगली चालों को ताड़ना चाहते थे। एक-दूसरे को नीचा दिखाकर मेरे अहंद्वय को परम संतोष प्राप्त होता था। अपनी हार पर दोनों को दुःख होता था।

"कोई भी स्वस्थ मन का व्यक्ति इस उन्माद की कल्पना नहीं कर सकता। लेकिन मेरा मन स्वस्थ कहां था? उसे तो बिना क़सूर ही एकाकीपन के नर्क में झोंक दिया गया था। मैं ऐसी चीज़ की तलाश में था, जिस पर मैं अपने मन की समूची घृणा उँडेल सकूं।

"मेरा सारा ग़ुबार निकला शतरंज पर। मेरा मन दो खिलाड़ियों में बंट गया और दोनों उन्मत्त होकर एक-दूसरे पर टूट पड़े। पहले मैं बहुत सोच-समझकर ठंडे दिमाग़ से चाल चलता था। लेकिन धीरे-धीरे मेरे स्नायु उत्तेजित होते गये। एक पक्ष के चाल चलते ही दूसरा पक्ष उसे पीटने के लिये मोहरा आगे बढ़ाता। एक बाज़ी के ख़त्म होते ही मैं

अपने को अगली बाज़ी के लिये ललकारता। हारा हुआ पक्ष विजेता से बदला लेने के लिये तड़प उठता।

"इस उन्माद की अवस्था में मैं आपको अपने ख़िलाफ़ खेली गई बाज़ियों की अनुमानित संख्या भी नहीं बता सकता। शायद वे एक हज़ार से भी ज्यादा थीं। मेरे सर पर शतरंज का भूत सवार हो गया था। सुबह से लेकर शाम तक मैं बादशाहों, वज़ीरों और प्यादों के अलावा और कोई बात नहीं सोच सकता था, 'किलेबन्दी करना' और 'मात देना, यही मेरे जीवन के दो उद्देश्य रह गये थे। मेरा सारा व्यक्तित्व शतरंज के चौंसठ खानों में बिछ गया था। शौक से नशा पैदा हुआ। नशे से मजबूरी पैदा हुई और अंत में उस मजबूरी ने पागलपन का रूप धारण कर लिया। मुझे रात में भी शतरंज के सपने आते थे। मैं शतरंज की भाषा में सोचने लगा था। जीवन की समस्याओं को शतरंज के नियमों से सुलझाना चाहता था। कई बार मेरी नींद खुल जाती और मैं अपने को पसीने में तर पाता, जीते-जागते लोग मेरे सपनों में शतरंज के मोहरे बनकर आते थे।

"जब मुझे मुकद्मे के लिये पुलिस अधिकारियों के सामने बुलाया गया तो मैं बिल्कुल विक्षिप्त अवस्था में था। मेरे ऊटपटांग ज़वाब सुनकर लोग एक-दूसरे की ओर ताक रहे थे। दरअसल मैं अपने कमरे में लौटने के लिये व्याकुल हो रहा था ताकि फिर शतरंज की नई बाजी शुरू हो। मुझे अपने खेल में किसी भी प्रकार का खलल पसन्द नहीं था, यहां तक कि वार्डर का पन्द्रह मिनट तक मेरे कमरे में झाड़ू लगाना और दो मिनटों तक मेरा खाना परसना भी मुझे बहुत अखरने लगा था। कई बार मैं खेल में इतना तन्मय हो जाता कि खाना मेज पर ही ठंडा हो जाता था। मेरी भूख मर गई थी। लेकिन प्यास बहुत बढ़ गई थी। इस खेल के बुखार ने मेरे गले को सुखा दिया था। मैं दो ही घूंट में पानी की सारी बोतल खत्म कर देता और वार्डर से और पानी मांगता। मेरी जीभ हमेशा खश्क रहती थी।

"अंत में मेरी उत्तेजना इतनी बढ़ गई कि मैं एक मिनिट भी बिना खेले नहीं रह सकता था और कमरे में चक्कर काटकर चालों के बारे में सोचता जाता था। ज्योंही चाल चलने का समय निकट आता, तो मेरी रफ्तार और भी तेज हो जाती। मैं जीतने के लिये—अपने से बाज़ी जीतने के लिए बेक़रार रहता था। मैं अपनी नालायकी और सुस्ती पर बेसब्री से कांपने लगा। एक खिलाड़ी दूसरे को चुनौती देता "जल्दी करो, जल्दी।" मैं अब जान गया हूं कि मेरी यह हालत स्नायविक थकान के कारण हुई थी। जिसे डाक्टर चाहें कुछ कहें, मैं 'शतरंज का ज़हर कहूँगा।

"एक समय ऐसा भी आया, जब इस विक्षिप्ति ने मेरे मन के साथ ही साथ मेरे शरीर को भी रोगी कर दिया। मेरा वज़न घटने लगा, मुझे नींद मुश्किल से आती थी, और कमजोरी से मेरे हाथ कांपने लगे थे। मैं पानी का गिलास तक उठाकर ओठों से नहीं लगा सकता था। आंखें खोलने में मुझे तकलीफ होती, लेकिन शतरंज की बाज़ी शुरू होते ही मेरे शरीर में पागलों की सी उत्तेजना आ जाती और मैं मुट्ठी बांधकर कमरे के चक्कर काटने लगता। कई बार मुझे अपनी भर्राई आवाज सुनाई देती, "शह लीजिए!" "मात!"

"यह नौबत कहाँ तक पहुंची, यह बताने में मैं असमर्थ हूँ। मुझे सिर्फ इतना याद है कि एक दिन सुबह जब मैं सोकर उठा तो मुझे अजब सा महसूस हो रहा था। मेरे शरीर का बोझा न जाने कहां गायब हो गया था। मैं अपने अन्दर एक नई शांति और सुखद थकान का अनुभव कर रहा था। आंखें खोलने को जी नहीं चाहता था। कुछ मिनिटों तक मैं इसी तरह लेटा रहा। सहसा मेरे कानों में कुछ आवाज़ें सुनाई दीं। जीती-जागती आवाजें, सचमुच की आवाजें, धीमी आवाज़ें। पुलिस के अधिकारियों की कठोर, साजिशभरी आवाजों के अलावा मैंने कई महीनों से कोई आवाज न सुनी थी। मैंने मन ही मन कहा, "तुम सपना देख रहे हो। कहीं आँखें मत खोल बैठना, वरना फिर तुम अपने को उसी

कोठरी में पाओगे, और वही कुर्सी-मेज़ और दीवारें देखोगे। यह सपना है। इस सपने को टूटने मत दो।"

"लेकिन कौतूहल की जीत हुई। मैंने सावधानी से धीरे-धीरे आंखें खोलीं। चमत्कार! मैं एक बड़े कमरे में लेटा था। पास ही बिना सींखचों की एक खिड़की थी, जिसमें से वृक्ष दिखाई दे रहे थे—हवा में झूमते हुये हरे वृक्ष —! दीवारें सफेद थीं, कमरे में धूप आ रही थी। मैं एक नये पलंग पर लेटा हुआ था—कानों में धीमी आवाजें आ रहीं थीं।—यह सपना नहीं हो सकता था।

"मैंने चकित होकर करवट बदली होगी—फौरन किसी के कदमों की आहट हुई और सफेद कपड़े पहने एक औरत, मेरे सिरहाने आ खड़ी हुई। वह नर्स थी, सिस्टर! मेरे भीतर आनन्द की एक लहर दौड़ गई। एक साल से मैंने किसी औरत को नहीं देखा था। मैं आंखें फाड़ कर उसकी ओर देखता रहा, मेरी बुभुक्षित आँखों को देखकर उसने मुझे मीठे स्वर में डांटा, "चुपचाप लेटे रहिये—हिलिये मत!" मेरे प्राण उसकी आवाज़ में अटक गये। क्या सचमुच में एक औरत की आवाज़ सुन रह था। क्या सचमुच संसार में नीरस, प्रश्नसूचक आवाज़ों के अलावा भी कोई आवाज़ें होती हैं? मुझे इतनी आसानी से विश्वास कैसे होता। मैं ग़ौर से उसके गोल, नन्हें ओठों की ओर देखने लगा। वह मुझे देखकर मुस्कराई। मैं सोचने लगा संसार में अब भी ऐसे लोग मौजूद हैं जो दूसरों से मीठे स्वर में बोलते हैं और मुस्कराते हैं—उसने ओठों पर उंगली रख के मुझे चुप रहने का इशारा किया और वहां से चली गई। लेकिन मैं उसके आदेश पर न चल सका। मुझे अभी इस चमत्कार पर विश्वास नहीं हुआ था। मैंने उठकर बैठने की कोशिश की, लेकिन मेरे दांये हाथ में सफेद गद्दीनुमा चीज़ बंधी थी—मैंने सोचा और इस नतीजे पर पहुंचा कि या तो पुलिस ने मुझे घायल किया है या मैंने खुद अपने हाथ में चोट लगा ली है। मैं एक हस्पताल में था।

"दोपहर के समय एक बुज़ुर्ग, स्नेहशील डाक्टर मुझे देखने आया।

वह मेरे परिवार को अच्छी तरह जानता था। उसने मेरे डाक्टर चचा की बड़ी तारीफ की। शायद मेरे मन में अपने प्रति विश्वास पैदा करने के लिये। बातचीत के दौरान में उसने मुझसे कई सवाल पूछे, जिनमें से एक सवाल बड़ा विचित्र था : क्या मैं गणितशास्त्री हूँ या रसायनवेत्ता ? मैं दोनों में से कुछ भी नहीं था।

"लेकिन बुखार की बेहोशी में तुम कुछ फ़ार्मूले बोल रहे थे। सी ३—सी ४। हमें तो कुछ समझ में नहीं आया।"

"मैंने उनसे पूछा, कि मैं हस्पताल में किस लिये लाया गया था ?"

"चिन्ता की कोई बात नहीं। सिर्फ तुम्हारे स्नायुओं में भयंकर तनाव पैदा हो गया था।" उसने सावधानी से चारों ओर देखने के बाद धीमे से पूछा, "तुम १३ मार्च को गिरफ़्तार हुए थे न ?"

मैंने सर हिलाकर हामी भरी।

"इसी लिये तुम्हारी यह दशा हुई है। हमारे पास पहले भी ऐसे बहुत केस आ चुके हैं," उसकी सहानुभूतिपूर्ण बातचीत से मुझे विश्वास हो गया कि मैं सुरक्षित हूँ।

दो दिन बाद डाक्टर ने खुद ही मुझे सारी घटना सुनाई। वार्डर ने मेरे कमरे से चीखों की आवाज़ सुनी थी। वह ज्यों ही मेरे कमरे में आया, मैंने उसकी गर्दन दबोच कर कहा, "क्या तुम चलोगे नहीं, डरपोक, बदमाश।" मैंने इतनी ज़ोर से उस पर हमला किया कि उसे सहायता के लिये चिल्लाना पड़ा। जब पुलिस मुझे घसीट कर डाक्टरी मुआयने के लिये ला रही थी, तो मैं क्रोध में अंधा होकर खिड़की के सींखचों से जा टकराया था—जिससे मेरे हाथ में गहरी चोट आ गई थी। पिछले कुछ दिनों से मैं तेज़ बुखार में था और प्रलाप कर रहा था। डाक्टर ने बताया कि अब मेरा दिमाग़ बिल्कुल ठीक है। उसने मेरे कानों के नज़दीक आकर कहा, "चिन्ता न करो, मैं अधिकारियों को अभी तुम्हारे स्वस्थ होने की रिपोर्ट नहीं भेजूँगा, वरना वे आकर फिर तुम्हें उसी नर्क में ले जावेंगे। मुझ पर विश्वास, रखो।"

"पता नहीं उस दयालु डाक्टर ने पुलिस को क्या रिपोर्ट दी, लेकिन कुछ ही दिनों बाद मुझे रिहाई मिल गई। हो सकता है, उसने मुझे पागल कहा हो, या खुद गैस्टापो की मुझ में दिलचस्पी ही खत्म हो गई हो। क्योंकि हिटलर ने इस बीच बोहीमिया पर अधिकार कर लिया था। मेरी रिहाई इस शर्त पर हुई थी कि मैं पंद्रह दिनों के भीतर ही आस्ट्रिया छोड़ दूं। इन पंद्रह दिनों में फिर मुझे सरकारी कार्रवाई से मग़ज़मारना पड़ा। फ़ौजी सर्टिफ़िकेट, पुलिस कार्रवाई, टैक्स और स्वास्थ्य सम्बन्धी सर्टिफ़िकेट, पासपोर्ट, विज़ा आदि। मेरे पास अतीत की घटनाओं के बारे में सोचने के लिये कोई समय न था। जरूर ही इन्सान के दिमाग़ में कोई ऐसा स्विच होता होगा, जो खतरा देख कर अपने आप बुझ जाता है। क्योंकि हर बार, जब मैं अपनी क़ैद के बारे में सोचने लगता था, तो मेरे दिमाग़ की बत्ती बुझ जाती थी। आज इतने हफ़्तों बाद, इस जहाज़ में आकर मेरी स्मरण-शक्ति को जागने का साहस हुआ है।

"इसलिये आप मेरे विलक्षण व्यवहार का कारण समझ गये होंगे। कल अचानक स्मोक रूम में घूमते हुए मेरा ध्यान आपकी शतरंज की ओर गया। हैरानी और भय से मेरे पैर वहीं रुक गये। मैं भूल गया था कि लोग सचमुच के मोहरों से खेलते हैं। मुझे यह भी याद न रहा था कि इस खेल में दो आदमी आमने-सामने बैठते हैं। बहुत सोचने पर मुझे याद आया कि ये लोग वही खेल खेल रहे हैं जिसे मैं महीनों, लगातार खेलता आया था, और शतरंज की किताब में छपे हुये संकेत, इन जीते जागते मोहरों की नक़ल-मात्र थे। उन मोहरों को देखकर मेरी हालत उस खगोल-शास्त्री जैसी हुई, जो काग़ज़ पर आंकड़ों द्वारा एक नये ग्रह का पता लगाता है—लेकिन जिस दिन सचमुच उस ग्रह को अपनी आंखों से देखता है, तो उसके आश्चर्य और कौतुक की सीमा नहीं रहती। मैं मन्त्रमुग्ध होकर लकड़ी के बने वज़ीरों, बादशाहों और प्यादों को देख रहा था। मैं अपनी कल्पना के मोहरों से उनका मिलान कर रहा था। उसके बाद मेरे मन में आप लोगों का मैच देखने की उत्सकता हुई। मुझे

अपनी धृष्टता पर बाद में बड़ा खेद हुआ। लेकिन आपके दोस्त की ग़लत चाल को देखकर मुझे लगा जैसे मेरे दिल में किसी ने छुरा भोंक दिया हो। अनजाने में ही मैंने उसे चाल चलने से रोक लिया था, जैसे कोई किसी बच्चे को बारजे में लटका देख कर, उसे थाम लेता है। बाद में मुझे अपनी इस हरकत पर बड़ी शर्म आई।"

मैंने डाक्टर बी० को विश्वास दिलाया कि कल की घटना से सब लोग कितने खुश हुए थे और अब उसके प्रति मेरे दिल में आदरभाव और भी बढ़ गया है, इसलिये उसे कल के मैच में जरूर शामिल होना पड़ेगा।

"आप लोग मुझ से ज्यादा उम्मीदें न रखें। मेरे लिये तो सिर्फ यह एक परीक्षा होगी—यह जानने के लिये कि मैं एक आप जैसे आदमी की तरह सचमुच की शतरंज खेल भी सकता हूँ या नहीं। हो सकता है, जो बाज़ियाँ मैंने खेली हैं, उनमें शतरंज के नियमों का पालन न किया गया हो। क्या आप सचमुच विश्वास करने लगे हैं कि मैं एक विश्वविजेता के साथ टक्कर ले सकूँगा? मैं तो सिर्फ यह जानने के लिये उत्सुक हूँ कि मैंने जेल में जो खेली थी, क्या वह शतरंज थी, या कुछ और। क्या मैं पागल हो गया था, या शतरंज में पारंगत?"

इसी समय जहाज़ के घन्टे ने डिनर की सूचना दी। मुझे डाक्टर बी० के पास बैठे दो घन्टे बीत गये थे। यहाँ मैंने केवल संक्षेप में इसकी कहानी दुहराई है। उसे धन्यवाद देकर मैं अपनी केबिन की ओर जाने लगा तो उसने मुझे आवाज़ देकर वापिस बुलाया और घबराये स्वर में कहा:—

"एक बात और···आप अपने मित्रों से कह दीजिये कि मैं सिर्फ एक बाज़ी ही खेलूँगा।·····यह मेरी अन्तिम बाजी होगी।·····मैं शतरंज की दुनियाँ में फिर से क़दम नहीं रखना चाहता—मैं फिर शतरंज के बुखार में बीमार नहीं पड़ना चाहता, उसकी स्मृति मेरे लिये आज भी दुखदायी है। इसके अलावा डाक्टर ने मुझे साफ़ शब्दों में शतरंज खेलने से मना किया था। शतरंज के पागलपन का रोगी—एक बार स्वस्थ हो

जाने के बाद भी बीमार पड़ सकता है, इसलिये मुझे शतरंज से बिल्कुल दूर रहना चाहिये। आज़मायश के लिये मैं सिर्फ एक बाज़ी खेलूंगा। इससे ज्यादा नहीं।"

अगले दिन तीन बजे हम लोग स्मोक रूम में जमा हुए। जहाज़ के दो शतरंज-प्रेमी अफ़सर भी छुट्टी लेकर हमारा खेल देखने आ गये थे। जेन्टोविक भी आज ठीक समय पर पहुँच गया था। मोहरों के चुनाव के बाद वह ऐतिहासिक बाज़ी शुरू हुई।

मुझे अफसोस है कि वह बाजी हम जैसे नौसिखिये दर्शकों के सामने खेली गई। शतरंज के कलाकार उन चालों से वंचित रहेंगे, जैसे संगीतकार बीटोवन की कुछ स्वर-रचनाओं से वंचित रह गये हैं।

बाद में हम सब नौसिखिये मिल कर उस बाजी की चालों को याद करने की कोशिश करने लगे लेकिन कामायाब नहीं हो सके। इसका कारण यह था कि हमारा ध्यान खेल की बजाय, खिलाड़ियों पर केन्द्रित था। दोनों खिलाड़ियों के बौद्धिक स्तर का अन्तर खेल के आरम्भ में ही प्रकट हो गया था। जेन्टोविक यान्त्रिक ढंग से खेलने का अभ्यस्त था, इसलिये सारा समय उसका ध्यान मोहरों पर ही लगा रहता था। सोचने के लिये उसे सारे शरीर की मांसपेशियों की सहायता लेनी पड़ती थी। इसके विपरीत डाक्टर बी० शान्तभाव से खेल रहा था—सच्चे कला-प्रेमी की तरह, जो खेल के क्रीड़ातत्त्व में आनन्द लेता है। वह खेलते हुए हमें चालों का रहस्य समझाता जा रहा था और मोहरों की तरफ एक सरसरी निगाह डालकर अपना सिगरेट सुलगाने लगता था। लगता था कि वह जेन्टोविक की हर चाल को पहले से ही जानता था।

सात-आठ चालों के बाद बाज़ी एक नई मंजिल पर पहुँची। जेन्टोविक किसी गहरे सोच में पड़ गया। हम समझ गये कि असली प्रतियोगिता अब शुरू होने वाली है। लेकिन सच पूछिये तो मामूली दर्शक इस खेल की पेचीदगी को ठीक-से नहीं समझ पाता। दोनों खिलाड़ियों के दांव-पेच के पीछे छिपे हुए रहस्य को समझना हमारी बुद्धि से बाहर

की चीज थी। हम सिर्फ मोहरों का आगे बढ़ना और पीछे हटना ही देख रहे थे। छः सात अगली चालों की बात सोचना हमारे लिये नितांत कठिन था।

हम इस मूक नाटक को देखते देखते ऊबने लगे थे, जेन्टोविक तो हर चाल से पहले इतनी देर तक सोचने लगा था कि डाक्टर बी० के चेहरे पर भी खीज दिखाई देती थी। ज्यों-ज्यों बाजी लम्बी होती गई डाक्टर बी० की बेचैनी भी बढ़ती गई। वह बार-बार कागज पर कुछ लिखता जाता था और धातुमिश्रित पानी के गिलास पर गिलास खत्म करता जाता था। यह साफ़ जाहिर था कि उसका दिमाग़ जेन्टोविक के दिमाग़ से कहीं अधिक तेजी से काम कर रहा है। जेन्टोविक बहुत सोचने के बाद जब कोई मोहरा आगे बढ़ाता तो डाक्टर बी० के चेहरे पर विचित्र मुस्कान आ जाती। लगता था कि वह पहले से ही दिमाग़ में हर चाल का खाका बना चुका था। जेन्टोविक जितनी ही देर लगाता, उतनी ही डाक्टर बी० की बेचैनी बढ़ती जाती और वह क्रोध से ओंठ काटने लगता। लेकिन जेन्टोविक को जल्दी नहीं थी, वह मनोयोग से खेल रहा था। इक्तालीस चालें चली जा चुकी थीं। दर्शकों में अब मैच के प्रति उदासीनता छा गई थी। जहाज के शतरंज प्रेमी-अफसरों में से एक तो उठकर बाहर चला गया था, दूसरा कोई पुस्तक पढ़ रहा था, और बीच-बीच में मोहरों की स्थिति देख लेता था। अचानक जेन्टोविक ने अपना शुतर चलने के लिये जब हाथ बढ़ाया तो डाक्टर बी० का सारा शरीर उत्तेजना से कांप उठा, और उसने खूँखार बिल्ली की तरह झपट कर अपना वज़ीर आगे बढ़ाया और विजेता के स्वर में कहा, "लो तुम्हें मात हो गई।" यह कहकर वह आराम से कुर्सी की गद्दी पर लेट गया और अपनी दृष्टि से जेन्टोविक को चुनौती देने लगा। उसकी आँखें एक अद्भुत प्रकाश से चमक रहीं थीं।

चौंककर हम सब लोग यह देखने के लिए जमा हो गए कि आखिर वह कौनसी चाल थी जिससे डाक्टर बी० ने जेन्टोविक की बाज़ी खत्म

होने से पहले ही मात की घोषणा कर दी थी। लेकिन शतरंज का बोर्ड देखने पर हमें कोई ऐसा ख़तरा नज़र नहीं आ रहा था। शायद डाक्टर बी० का इशारा किसी आगामी परिस्थिति की ओर था। जिसको समझने की दूरदर्शिता हम नौसिखियों में नहीं थी। ज़ेन्टोविक अब भी बड़े मनोयोग से खेल रहा था। उसने डाक्टर बी० की चुनौती की ओर ध्यान तक न दिया था। कुछ देर तक ज़ेन्टोविक ने कोई चाल न चली। हम सब उत्सुक दृष्टि से खेल के ख़त्म होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इसी समय मेज़ पर रखी घड़ी ने अलार्म बजाया। तीन मिनट गुज़र गये, सात मिनट, आठ मिनट, लेकिन ज़ेन्टोविक निश्चिन्त बैठा रहा। उसके अन्दर की बेचैनी उसके फूले हुए मोटे नथुनों में व्यक्त हो रही थी।

इस लम्बी प्रतीक्षा ने सबको बेचैन कर दिया। डाक्टर बी० अपनी जगह से उठकर कमरे में टहलने लगा। उसकी चाल तेज़ होती गई, सब लोग दंग होकर उसकी इस बेचैनी को देख रहे थे। मेरा मन किसी अज्ञात आशंका से काँपने लगा। मैं समझ गया था कि वह अनजाने में ही अपने बन्दी-जीवन की दिनचर्या को दुहरा रहा है, क्योंकि वह किसी अदृश्य अलमारी की टक्कर से बचने के लिए आधे रास्ते से ही वापिस लौट जाता है। जेल की कोठरी में भी वह चिड़ियाघर में बन्द जानवर की तरह चक्कर काटता होगा। उसके हाथों की मुट्ठियां इसी तरह बंधी रहती होंगी। इसी तरह वह बेचैन होकर दिन में हज़ारों चक्कर लगाता होगा। लेकिन इस समय उसका दिमाग़ विक्षिप्त नहीं था, वह बार-बार मेज़ के पास आकर देखता था कि जेन्टोविक ने चाल चली या नहीं। लेकिन दस मिनट बीतने पर भी जेन्टोविक निश्चिंत बैठा रहा।

उसके बाद एक ऐसी घटना हुई, जिसकी हम में से किसी ने कल्पना नहीं की थी। ज़ेन्टोविक ने मोहरा चलने के लिए हाथ आगे बढ़ाया, लेकिन कोई चाल चलने की बजाय उसने सब मोहरे उठाकर पीछे हटा दिए। उसने बाज़ी अधूरी छोड़ दी, ताकि हम लोग उसकी हार का दृश्य

न देख पायें। लेकिन क्या यह चमत्कार नहीं था कि एक विश्वविजेता खिलाड़ी, एक अनजान आदमी के आगे आत्मसमर्पण कर डाले, जिसने पिछले पच्चीस वर्षों से शतरंज को छुआ तक नहीं था। डाक्टर बी० ने सब के सामने विश्व के चैम्पियन खिलाड़ी जेन्टोविक को अप्रतिभ कर दिया था।

सब लोग इस जीत की खुशी में पागल हो रहे थे। केवल एक आदमी शान्तभाव से बैठा था : वह था जेन्टोविक। कुछ देर बाद उसने डा० बी० से पूछा :—

"दूसरी बाज़ी होगी ?"

"ज़रूर" डाक्टर बी० के इस उत्साहपूर्ण उत्तर को सुनकर मुझे घबराहट हुई, क्योंकि डाक्टरों ने उसे शतरंज खेलने से मना कर रखा था। लेकिन मेरे कुछ कहने से पहले ही वह शतरंज के मोहरे ठीक करने लगा। उसके हाथ आवेश से कांप रहे थे। मैं उसकी यह दशा देखकर भयभीत हो गया। शायद उसकी पुरानी विक्षिप्ति फिर लौट आई थी। उसके होंठ लगातार कांप रहे थे, मालूम होता था उसे तेज़ बुखार है।

मैने उसे धीमे से समझाया, "बस—इतना ही काफ़ी है। आप थक गये होंगे।"

"थकान ! हा, हा !" उसने हँसकर मेरा मज़ाक उड़ाया। "मैं इस बीच सत्रह बाज़ियां खेल सकता था। मुझे सिर्फ जागते रहने में थकान महसूस होती है। क्यों महाशय आप पहली चाल कब चलेंगे ?"

अन्तिम शब्द उसने धृष्ट स्वर में जेन्टोविक से कहे थे। जेन्टोविक ने शान्तभाव से उसकी ओर देखा। लेकिन उसकी आँखों से दृढ़ निश्चय झलक रहा था। दोनों के हृदय घृणा और प्रतिहिंसा से दहक रहे थे। वे अब शतरंज के खिलाड़ी होने की बजाय योद्धा बन गये थे और एक दूसरे को समूल नष्ट करने पर तुले थे। जेन्टोविक ने जान-बूझकर पहली चाल चलने में देर कर दी, क्योंकि वह जान गया था कि उसका प्रतिद्वन्द्वी देर करने से कितना चिढ़ता है। उसने प्यादा चलने में चार मिनिट

लगा दिये, जिसके उत्तर में डा० बी० ने फ़ौरन अपना प्यादा चल दिया। जेन्टोविक ने फिर देरी लगा दी। जैसे बिजली चमकने के बाद बादलों की गर्जन होती है, उसी तरह हम चाहते थे कि दोनों खिलाड़ी एक-दूसरे की चाल को फ़ौरन काटें। लेकिन जेन्टोविक पत्थर की तरह निश्चल बैठा रहा। वह किसी गहरे सोच में पड़ा था। मैंने डाक्टर बी० की प्रतिक्रिया देखी। वह इस बीच पानी के तीन गिलास पी चुका था। मुझे याद आया, जेल में भी उसे ऐसी ही प्यास लगी थी। क्या उसकी उत्तेजना फिर तो नहीं लौटने वाली थी? उसके माथे पर पसीने की बूंदें चमक रही थीं और उसके हाथ में ज़ख्म का दाग़ और भी लाल दिखाई दे रहा था। लेकिन वह अपनी उत्तेजना को काबू में रखे हुए था। चौथी चाल के बाद जब जेन्टोविक फिर सुस्त हो गया तो डाक्टर बी० ने गुस्से से लाल होकर कहा—"तुम चलोगे या पत्थर बने रहोगे?"

जेन्टोविक ने शान्तभाव से उत्तर दिया, "जहां तक मुझे याद है, मैंने आप लोगों को प्रत्येक चाल के लिए दस मिनिट दिये थे। मैं खेल में कभी जल्दबाजी नहीं करता। यह मेरा उसूल है।"

डा० बी० चुपचाप अपने ओंठ चबाने लगा। मेज़ के नीचे मुझे उसकी टांगें हिलती हुई नज़र आ रहीं थीं। उसका खून क्रोध से खौल रहा था। आठवीं चाल के बाद फिर दोनों में झड़प हुई। डाक्टर बी० जेन्टोविक की सुस्ती से तंग आकर मेज़ पर उंगलियों से तबला बजा रहा था। जेन्टोविक ने अपना फूहड़ देहाती चेहरा उठाकर कहा—

"मेहरबानी करके तबला बजाना बन्द कर दीजिये। इससे मेरी चाल में विघ्न पड़ता है।"

"हा! हा! यह तो दीख ही रहा है!" डाक्टर ने हंसकर उत्तर दिया।

जेन्टोविक का चेहरा क्रोध से लाल हो गया। उसने बिगड़ कर पूछा—

"क्या मतलब ?"

डाक्टर को फिर हंसी आ गई। "मतलब यह कि घबराहट के मारे आपका बुरा हाल है !"

जेन्टोविक सर झुकाकर चुप हो गया। सात मिनट तक उसने कोई चाल न चली। खेल की रफ्तार मातमी हो गई थी। जेन्टोविक जानबूझ कर सुस्त हो गया था। डाक्टर बी० की बेचैनी बढ़ती जाती थी। मुझे लगा कि खेल की बजाय उसका ध्यान कहीं और चला गया है। वह शान्तभाव से अपनी कुर्सी पर बैठा था। वह शून्य दृष्टि से छत की ओर देख रहा था और अस्पष्ट आवाज़ में कुछ बुदबुदा रहा था। मेरा ख्याल था कि वह मन ही मन नई चालों की कल्पना कर रहा था, जिसका तात्कालिक बाज़ी से कोई संबंध न था। हमें बार-बार उसे स्मरण करवाना पड़ता था कि अब उसकी बारी है। दो-तीन मिनट तक तो वह गुमसुम-सा रहता था। मुझे विश्वास हो गया कि वह बिल्कुल भूल गया है कि वह एक मैच में भाग ले रहा है और किसी भी क्षण उसकी विक्षिप्ति विस्फोटक रूप में प्रकट होगी। उन्नीसवीं चाल खत्म होते ही विस्फोट हुआ। जेन्टोविक ने अपना मोहरा उठाया ही था कि डाक्टर बी० ने अपना शुतुर उठाकर तीन घर आगे रख दिया और ज़ोर से चिल्लाया—

"शह ! अपना बादशाह बचाइये !"

सब लोगों की उत्सुक आंखें मोहरों की तरफ लगी थीं। एक मिनिट की चुप्पी के बाद जेन्टोविक ने चकित भाव से हम लोगों की तरफ देखा। वह किसी अज्ञात संतोष से मुस्करा रहा था। उसने विजेता के स्वर में उदासीनता का अभिनय करते हुए कहा :

"माफ़ करें मुझे तो कहीं शह नज़र नहीं आती ! आप सज्जन देख सकते हैं।"

हमने बोर्ड की ओर देखा। सचमुच जेन्टोविक का प्यादा, शुतुर के हमले से बादशाह की रक्षा कर रहा था। ऐसी स्थिति में शह का

कोई सवाल ही नहीं उठता था। हम घबराकर डाक्टर बी० की ओर देखने लगे। शायद उसने जल्दबाज़ी में शुतुर ग़लत घर में रख दिया था। हमारी घबराहट देखकर डाक्टर बी० ने बोर्ड की ओर इशारा किया और लड़खड़ाती ज़बान में कहा :

"लेकिन बादशाह एफ़ ७ में होना चाहिये। ग़लती आपकी है। आपने ग़लत चाल चली है। सब मोहरे ग़लत जगह रखे हुए हैं। आपका प्यादा जी ४ की बजाय जी ५ में होना चाहिये, अरे, अरे यह तो कोई दूसरी बाज़ी है, यह तो···

वह चुप हो गया। मैंने पूरी ताक़त लगाकर उसकी बांह पकड़ ली, लेकिन उसे मेरा स्पर्श तक मालूम न हुआ। उसने नींद में विचरण करने वाले व्यक्ति की तरह मेरी ओर देखकर पूछा :

"आप···आप क्या चाहते हैं ?" मैंने उसके हाथ के ज़ख्म की ओर इशारा करते हुए पूछा, "कुछ याद है ?" उसने घाव की ओर देखा। अचानक उसका सारा शरीर पत्ते की तरह कांपने लगा। उसके ओंठ पीले पड़ गये। उसने फुसफुसा कर कहा :

"ईश्वर के लिये मुझे जल्दी बताओ, क्या मैं फिर कोई बदतमीज़ी कर बैठा हूँ ? क्या मुझे फिर वही·····?"

"नहीं, नहीं ! लेकिन आप फ़ौरन खेल छोड़कर मेरे साथ बाहर चले आइये। याद है, डाक्टर ने आपसे क्या कहा था ?"

वह फ़ौरन उठकर खड़ा हो गया और उसने शिष्टतापूर्वक जेन्टोविक को सम्बोधित करके कहा, "मैं अपनी ग़लती के लिये क्षमा चाहता हूँ। मेरा दिमाग़ चकरा गया था। इस बाज़ी में जीत आपकी ही रही। यह निश्चित है।" फिर एकत्रित लोगों की ओर देखकर उसने कहा, "मैं आप सब सज्जनों से भी क्षमा चाहता हूँ। मैंने कल भी आपसे कहा था कि मैं कोई अच्छा खिलाड़ी नहीं हूँ। मेरे कारण आपको इतनी तकलीफ़ हुई। यह मेरा शतरंज का आखिरी खेल था।"

वह जिस लजीले और रहस्यमय ढंग से हमारे सामने आया था

उसी ढंग से वापिस चला गया। लोग उसके विलक्षण व्यवहार पर टीका-टिप्पणी करने लगे। मैकवर ने मुंह बिचका कर कहा, "गधा कहीं का !" मेरे सिवा किसी को मालूम न था कि वह अब कभी शतरंज के मोहरों को हाथ नहीं लगायेगा। अंत में ज़ेन्टोविक ने अधूरी बाज़ी की ओर देखकर उदार भाव से कहा :

"खेल का मज़ा जाता रहा, यह बहुत बुरा हुआ। लेकिन उस आदमी में शतरंज खेलने की प्रतिभा है। आज उसने चालें सोचने में काफी दूरदर्शिता दिखाई थी।"

आतंक

आयरीन अपने प्रेमी के फ्लैट की सीढ़ियों से उतर कर नीचे आ रही थी। सदा की तरह आज भी उसके मन में एक अज्ञात आतंक छाया था। उसकी आँखों के आगे बार-बार अँधेरा छा जाता था। उसके घुटने कांप रहे थे और वह गिरने से बचने के लिए रेलिंग का सहारा लेकर उतर रही थी। जब कभी भी वह अपने प्रेमी से मिलने के लिए आती, उसकी यही अवस्था हो जाती थी। अभिसार के बाद इस तरह की अवस्था निश्चय ही हास्यास्पद कही जाएगी। प्रेमी के यहाँ आने से पहले अगर उसे घबराहट होती तो उसका कारण समझ में आ सकता था, क्योंकि वह एक टैक्सी में बैठकर वहाँ आती थी और टैक्सी को गली के कोने में खड़ी करके भागती हुई अपने प्रेमी के फ्लैट में पहुँचती थी। मिलन की उन सुखद घड़ियों में वह अपनी घबराहट भूल जाती थी, लेकिन जब घर लौटने का समय आता, तो आयरीन के मन में एक विचित्र पाप की भावना भर जाती, जिसके आतंक से वह बिल्कुल पागल हो जाती थी। उसे लगता जैसे सामने की गली भी उसे सन्देह की दृष्टि से देख रही है। उसकी यह मानसिक अवस्था अपने प्रेमी से विदा लेने से पूर्व ही शुरू हो जाती थी। वह एकदम वहाँ से भागकर अपने मध्यवर्गीय जीवन के उस सुरक्षित घेरे में घुस जाना चाहती थी जिसमें वह सदा से रहती आयी थी। ऐसे समय में प्रेमी के मधुर सम्बोधन भी उसे अप्रिय लगने लगते थे। उसका प्रेमी उसे

सान्त्वना देता, लेकिन आयरीन सोचती रहती कि कहीं उसे गली में कोई परिचित न मिल जाय, कहीं कोई सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर न पहुँच जाय। वह दरवाजे के पीछे कान लगाकर खड़ी हो जाती। लेकिन निचली मंज़िल पर पहुँचते ही भय का असली रूप उसके सामने प्रकट होता और गली तक पहुँचते-पहुँचते वह जोर से हांफने लगती।

आज वह खुली हवा में सांस लेने के लिए कुछ देर तक ज़ीने में खड़ी रही। सहसा दरवाज़े पर किसी ने दस्तक दी। आयरीन ने घबराकर जाली से अपना चेहरा ढक लिया और तेज़ी से बाहर निकलने की तैयारी करने लगी। अभी वह दहलीज़ तक ही पहुँची थी कि एक औरत से उसकी टक्कर हो गई। आयरीन "मुझे क्षमा करें" कहकर वहां से खिसक जाना चाहती थी, लेकिन उस औरत ने दोनों बाहें फैलाकर उसका रास्ता रोक लिया, और कर्कश आवाज़ में आयरीन को धिक्कारने लगी।

"आज मैंने तुम्हें पकड़ ही लिया। क्या तुम्हें अपने पति, घर-बार और धन-दौलत से सन्तोष नहीं है, जो एक ग़रीब स्त्री के प्रेमी को छीनने के लिए यहां आती हो?"

"आपको ग़लतफ़हमी हो गई है", कहकर आयरीन ने दरवाज़े की ओर बढ़ने की कोशिश की। इस पर वह मोटी-ताजी औरत दरवाज़े के बीचों-बीच इस तरह खड़ी हो गई जैसे बोतल के मुंह में डाट लग जाती है। उसने चिल्लाकर आयरीन की भर्त्सना की।

'नहीं, नहीं, मुझे ग़लतफ़हमी बिल्कुल नहीं हुई! मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती हूं। तुम इस समय सीधे एडवर्ड के फ्लैट से आ रही हो। एडवर्ड मेरा सर्वस्व है। समझ गई? अब तो मैंने तुम्हें पकड़ ही लिया। मैं भी सोच रही थी कि आखिर उसके पास मुझ से मिलने के लिए आजकल समय क्यों नहीं रहता। आज मालूम हुआ कि तुम जैसी कमीनी औरत....."

"ईश्वर के लिए इतने ज़ोर से मत चिल्लाओ !" आयरीन ने भयभीत स्वर में कहा।

यह सुनकर वह औरत आयरीन को नफ़रत से घूरने लगी। उसको भयभीत देखकर उसका दुस्साहस और भी बढ़ गया, और उसके ओठों पर एक कटु मुस्कान फैल गई। उसने फिर ताना मारते हुए कहा, "ज़रा इस सुहागिन स्त्री के लच्छन तो देखो कि पराये घरों में मुँह मारती फिरती है। उस पर श्रीमती जी ने चेहरे पर नक़ाब डाल रखा है, ताकि दुनिया की नज़रों में सती-साध्वी बनी रहे·····!"

"आख़िर तुम चाहती क्या हो ? तुम कौन हो ? हटो, मुझे देर हो रही है·····"

"ओहो, देर हो रही है ! हो क्यों न ! आख़िर अपने पति महाशय के पास जा रही हो न, जहाँ गरम पानी से नहा-धोकर तुम नौकरानी की सहायता से बढ़िया पोशाक पहनोगी और उसके बाद बड़ी सजधज से पति के आने की प्रतीक्षा का स्वांग रचोगी ! मेरे जैसी ग़रीब स्त्री बेशक भूखों मरे। उससे तुम्हें क्या ?·····तुम तो मेरे जीवन के आख़िरी सहारे को भी चुराने से नहीं झिझकी ?"

आयरीन ने अपने बटुए में हाथ डाला और नोटों का एक पुलिंदा निकालकर उस औरत के हाथ में थमाते हुए भर्राई आवाज़ में कहा, "बस, बस·····यह लो और मुझे जाने दो ! मैं वायदा करती हूँ कि फिर कभी इधर नहीं आऊँगी।"

औरत ने पैसे ले लिए और भर्त्सना के स्वर में बोली, "गंदी कुतिया !"

आयरीन लड़खड़ाते क़दमों से सड़क पर पहुँची, जहाँ उसकी टैक्सी खड़ी थी। आने-जाने वालों के चेहरे देखकर उसके शरीर में मानों काठ मार गया था। वह परेशान होकर टैक्सी की पिछली सीट पर बैठ गई। ड्राइवर ने पूछा, "श्रीमती जी, अब किधर चलूं ?" आयरीन

शून्य दृष्टि से ड्राइवर का मुंह ताकती रही, फिर सिर्फ इतना कह पाई, "स्टेशन।"

अचानक उसे शक हुआ कि शायद वह औरत उसका पीछा कर रही है। उसने ज़ोर से कहा, "जल्दी करो! तेज़ी से गाड़ी चलाओ!"

रास्ते में उसे अनुभव हुआ कि आज की मुलाकात से वह कितनी घबरा गई थी। उसके हाथ ठंडे पड़ गये थे और उसका रोम-रोम कांप रहा था। उसकी सांस घुट रही थी, मुंह का स्वाद कड़वा हो गया था और माथे पर पसीने की धारें फूट रही थीं। वह अचानक अपने को बीमार महसूस करने लगी थी और उस दुःस्वप्न को भूलने के लिए ज़ोर से चीखना और हाथ पटकना चाहती थी। लेकिन उस प्रौढ़ा का बेहूदा चेहरा अब भी उसे याद आ रहा था। छिः! उसके मुंह से प्याज़ की कितनी बदबू आ रही थी! उसके हाथ कितने कठोर थे! वह बेचैनी से ड्राइवर को स्पीड बढ़ाते हुए देखने लगी। उसने बटुए में हाथ डालकर देखा कि उसके पास टैक्सी का भाड़ा चुकाने के लिए पैसे हैं या नहीं, लेकिन स्टेशन तक पहुँचने के लिए वह पैसा काफ़ी नहीं होगा, यह देखकर उसने टैक्सी रोकने का हुक्म दिया और ड्राइवर के हाथ में भाड़ा थमाकर नीचे उतर आई। उसने पैदल स्टेशन पर पहुँचने का निश्चय किया। कमज़ोरी के कारण उससे चला नहीं जा रहा था, फिर भी वह किसी तरह घर पहुँच ही गई। वह एकदम अपने कमरे में जाकर आराम करना चाहती थी, लेकिन उसे ख्याल आया कि जल्द-बाज़ी करने से उसके पति को सन्देह हो सकता है।

हॉल में नौकरानी ने उसका कोट लेकर खूंटी पर टांग दिया। ऊपर के कमरे से उसके बच्चों का कोलाहल सुनाई दे रहा था। अपना परिचित वातावरण पाकर उसका खोया आत्मविश्वास लौट आया और वह उंगलियों से अपने बाल संवारकर बड़ी मासूमी से खाने के कमरे में दाखिल हुई जहाँ उसका पति बैठा अखबार पढ़ रहा था।

"डार्लिङ्ग! आज तुमने बड़ी देर कर दी!" पति ने स्नेह भरे

स्वर में डांटा और पत्नी का माथा चूम लिया।

आयरीन ने मन ही मन अपने को धिक्कारा।

"आज किधर गई थीं ?"

"मैं·····मैं·····एयिली के घर गई थी। उसे बाज़ार में कुछ चीज़ें खरीदनी थीं।"

"गधी कहीं की। तुम्हें बहाना बनाना भी नहीं आता !" आयरीन ने अपने आपको डांटा। इससे पहले वह कोई न कोई बहाना गढ़ लेती थी; लेकिन आज मन पर छाये आतंक के कारण वह सब कुछ भूल गई थी। "मान लो कहीं·····पति को·····"

"क्या बात है आयरीन, तुम घबराई सी मालूम होती हो ? अरे तुमने तो अपना हैट भी नहीं उतारा।"

आयरीन उठ कर अपने कमरे में चली गई। उसने आइने में देखा, सचमुच उसकी आँखों में कितनी घबराहट भरी थी ! कुछ ही मिनटों में उसने अपने आप को संभाला और पति के पास जाकर बैठ गई।

नौकरानी ने खाना परसा और उसके बाद कोई विशेष बात नहीं हुई। पति-पत्नी आपस में अधिक बातचीत के आदी न थे। आयरीन फिर उसी दुर्घटना के बारे में सोचने लगी। मन को सान्त्वना देने के लिये वह घर के पर्दों और फ़र्नीचर की ओर देखने लगी, जिनके साथ उसके जीवन की अनेक सुखद स्मृतियां जुड़ी हुई थीं। घड़ी के अलार्म ने आयरीन के थके हुए स्नायुओं को शान्ति प्रदान की।

अगले दिन सुबह जब उसके पति आफ़िस चले गये तो वह एकान्त में बठकर कल की दुर्घटना के बारे में सोचने लगी। बड़ी कोशिश के बाद वह डर के शिकंजे से मुक्ति पाने में सफल हो गई। उसने सोचा कि उस औरत ने नक़ाब के भीतर से उसके चेहरे-मोहरे को नहीं पहचाना होगा। उसने निश्चय किया कि सावधानी बरतने के लिये वह अब अपने प्रेमी के घर कभी नहीं जायेगी। फिर उस औरत ने भला कहां तक आयरीन का पीछा किया होगा ? भय का अब कोई कारण नहीं था। वह ठंडे

दिमाग़ से अपने भावी प्रोग्राम के बारे में सोच रही थी। मान लो किसी दिन उस औरत ने आयरीन के पति को ख़बर कर दी तो वह साफ़ साफ़ कह देगी कि वह औरत पैसा ऐंठने के लिये उसे बदनाम करना चाहती है। स्मरण रहे कि आयरीन शहर के एक विख्यात बैरिस्टर की पत्नी थी, इसलिये उसे क़ानून का थोड़ा-बहुत ज्ञान हो गया था। उसने अपने पति से सुना था कि 'ब्लैकमेल' करने वालों को कड़ी सज़ा मिलती है।

आयरीन ने अपने प्रेमी को लिखा कि वह कुछ दिन के लिये उससे नहीं मिल सकेगी। एक बदसूरत मज़दूर औरत भी कार्ल ब्रस्टमैन की प्रेमिका रह चुकी है, यह जानकर आयरीन के अहंकार को बड़ी चोट पहुँची थी। उसके ख़त की भाषा से साफ़ ज़ाहिर होता था कि उसने यह प्रेम-सम्बन्ध शौकिया पैदा किया था, बात भी कुछ ऐसी ही थी।

आयरीन की मुलाक़ात उस प्यानो बजाने वाले युवक से एक पार्टी में हुई थी। अनजाने में ही वह उसकी प्रेमिका बन गई थी। न तो उस युवक के व्यक्तित्व में कोई विशेष आकर्षण था, न ही आयरीन के मन में वासना पैदा हुई थी। इसका कारण केवल इतना था कि वह अपनी सुस्ती के कारण कार्ल की प्रेमयाचना को ठुकरा नहीं सकी थी। इसके अलावा उसके मन में यह जानने की बड़ी जिज्ञासा थी कि कलाकारों का प्रेम कैसा होता है। आयरीन का विवाहित जीवन सुखमय था और उसे अपनी बौद्धिक, नैतिक या शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किसी प्रेमी की जरूरत नहीं थी। उसका अपना पति व्यक्तित्वशाली और स्नेहमय था। उसके दो प्यारे बच्चे थे और उसकी ज़िन्दगी में किसी तरह का अभाव नहीं था। लेकिन अभावहीन जीवन भी कई बार अभाव-पूर्ण जीवन की तरह असह्य हो उठता है। भूख की तरह तृप्ति भी एक अभिशाप है, अपने सुरक्षामय जीवन से ऊबी हुई आयरीन रोमान्स पाने के लिये लालायित थी।

इसीलिये जब उस युवक पियानोवादक ने आयरीन के शरीर की कामना की तो उसे कुछ नया-नया-सा लगा। वह मां और पत्नी के रूप

की आदी हो गई थी, इसलिये उसे प्रेमिका बनना अच्छा लगा। किशोरावस्था के बाद पहली बार उसने अपने शरीर में इतना संवेदन अनुभव किया था। सम्पन्न और तृप्त लोगों के बीच बैठ कर जब कार्ल पियानो बजाता तो उसके चेहरे पर एक विषाद-सा छा जाता, जो आयरीन को बहुत भला लगता। एक बार उसने कार्ल की असाधारण रूप से प्रशंसा की। कार्ल ने आंखें उठाकर आयरीन की ओर देखा। आयरीन का हृदय धक् से रह गया। वह भयभीत हो गई, लेकिन यह भय सुखद था। दोनों में इधर-उधर की बातें हुईं, जिनका सही अर्थ दो प्रेमी ही समझ सकते हैं। आयरीन कार्ल के अगले कन्सर्ट की उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगी। उसके बाद दोनों में अवसर मुलाक़ात होने लगी। कुछ दिनों बाद जब कार्ल ने कहा कि वह अपनी एक नई रचना पर उसकी राय सुनना चाहता है तो आयरीन के अहंभाव को परम तुष्टि मिली। आखिर एक विख्यात कलाकार ने उसे इस योग्य जो समझा था! वह रचना सुनने के लिये युवक के घर गई। कलाप्रेम का अन्त हुआ चुम्बनों और प्रेमलीला में। आयरीन को अपने दुःसाहस पर स्वयं आश्चर्य हुआ। वह जानबूझ कर अपने विवाह की पवित्रता को खंडित नहीं करना चाहती थी, लेकिन मन ही मन उसे अपने इस दुःसाहस पर गर्व हुआ। यह उत्तेजना क्षणिक थी। कुछ दिनों बाद उसके मन में कार्ल के प्रति अज्ञात घृणा-सी होने लगी और अपने अपराध पर ग्लानि भी। कार्ल के सँगीत और जीवन में अतिशय भावुकता थी, जबकि आयरीन का पति इतने वर्षों के विवाहित जीवन के बाद भी पत्नी के प्रति शिष्ट और संकोचशील था।

लेकिन पति से विश्वासघात करने के बाद आयरीन को अपने प्रेमी के अधिक निकट आना अनिवार्य होता गया। इन मुलाक़ातों में आयरीन को कोई विशेष सुख नहीं मिलता था, लेकिन वह वहाँ इसलिये जाती थी, क्योंकि वह इसकी आदी हो गई थी, और वहाँ जाना अपना कर्तव्य समझने लगी थी। महीने भर में ही उस युवक ने आयरीन के जीवन

में अपना स्थान बना लिया। उसके यहां जाना आयरीन के लिये उतना ही ज़रूरी और स्वाभाविक हो गया जितना अपने ससुराल में रहना और पार्टियों में जाना। उसके दाम्पत्य जीवन पर इस सम्बन्ध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। कार्ल का उसके जीवन में आना कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं थी। वह एक अतिरिक्त कार ख़रीदने के बराबर था। जल्द ही उस प्रेम की नवीनता समाप्त हो गई और वह उसके दाम्पत्य जीवन की तरह ही यन्त्रचालित हो गया।

कल की घटना के बाद आयरीन का मन खिन्न हो गया था। उसके जीवन में आजतक कोई अप्रिय घटना नहीं हुई थी। बचपन से ही मां-बाप ने उसे लाड़-दुलार से रखा था और उसकी सभी इच्छाएँ पूरी होती रही थीं। इस लाड़-दुलार ने उसे इतना आरामतलब बना दिया था कि वह किसी तरह के ख़तरे का मुक़ाबिला करने में असमथ थी, फिर वह एक प्रेमी के लिये अपने सुखी विवाहित-जीवन पर आँच कैसे आने देती !

शाम से पहले कार्ल का जवाब आ गया। उसने आयरीन से बार-बार प्रार्थना की थी कि वह ज़रूर आये। ख़त में मीठे उलाहने भी थे, जिन्हें पढ़ कर आयरीन का मन फिर डांवाडोल हो उठा। अपनी प्रशंसा से भरे उद्गारों को पढ़ कर उसके अहं को फिर तृप्ति मिली, उसे अपने निराश प्रेमी पर तरस आ गया। कार्ल ने लिखा था कि कम से कम वह अपना क़सूर जानना चाहता है। आयरीन का स्त्री-सुलभ कौतुक अभी अपने प्रेमी से और खिलवाड़ करना चाहता था। उसने कार्ल से एक रेस्त्रां में मिलने का वादा किया, जहाँ किशोरावस्था में वह एक अभिनेता से मिली थी। शादी के इतने बरस बाद उसे अपनी किशोरावस्था की यह घटना निरी मूर्खता मालूम हुई। वह सोचने लगी, "कौन जानता है, शायद एक बार फिर मेरे जीवन में रोमान्स आ रहा हो ?" रोमान्स की कल्पना-मात्र से आयरीन के शरीर में सिहरन दौड़ गई। उसके नीरस स्नायुओं को गुदगुदी और ताज़गी मिली।

इस बार आयरीन ने गाढ़े रंग का गाऊन और हैट पहना ताकि वह

'औरत' उसे आसानी से न पहचान सके। वह अपना नक़ाब भी साथ ले जाना चाहती थी, लेकिन उसने उसे वापिस दराज़ में रख दिया। वह संभ्रान्त वर्ग की महिला है, फिर उसे किसका डर है? और डर का विशेष कारण भी तो नहीं था।

लेकिन घर के सुरक्षापूर्ण वातावरण से बाहर क़दम रखते ही आयरीन का हृदय फिर भय से आच्छादित हो गया। वह उस तैराक की तरह कांपने लगी जिसने पानी को छुए बग़ैर ही ठंडे पानी में छलांग लगा दी हो। अगले ही क्षण आयरीन ने अपने भय पर क़ाबू पा लिया और उसकी चाल तेज़ हो गई। उसे खेद सिर्फ इस बात का था कि वह रेस्त्रां उसके घर के इतने नज़दीक क्यों था। रेस्त्रां के भीतर उसका प्रेमी एक कोने में बैठा बेचैनी से उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। आयरीन को देखते ही वह उठकर खड़ा हो गया। उसकी बेचैनी देखकर आयरीन के मन में खुशी के साथ-साथ एक खीज भी पैदा हुई। उसने कार्ल को शान्त रहने का संकेत किया और एक टेबल पर आकर बैठ गई। उसने बात घुमा-फिरा कर कार्ल को बताया कि वह अब उससे नहीं मिल सकेगी। अपने इन्कार से कलाकार की वासना को और भी जागृत होता देखकर आयरीन बड़ी प्रसन्न हुई। आध घंटे के भीतर जब वह घर लौटी तो उसका मन जीत के उत्साह से आलोकित हो रहा था। सड़क पर चलते हुए लोगों की प्रशंसाभरी दृष्टि पाकर वह फूली न समाई। इससे पहले उसने पुरुषों की प्रशंसा पाने की कभी कामना नहीं की थी। वह इतनी आत्मविभोर हो उठी कि फूलों की एक दुकान पर रुक कर उसने शीशे में अपना चेहरा देखा। लाल गुलाबों की पृष्ठभूमि में सचमुच वह बड़ी आकर्षक दिखाई दे रही थी। बरसों बाद आज वह इतनी खुश थी। मधुमास के दिनों में, यहां तक कि प्रेमी के स्पर्श में भी, उसे इतना स्पंदन और उल्लास नहीं मिला था। इस अलौकिक सुख के बाद, घर-गृहस्थी के घेरे में घुमना उसे रुचिकर न लगा। उसने अपनी चाल धीमी कर दी। घर के दरवाजे पर पहुँच कर वह क्षण भर के लिये रुक गई और खली

हवा में सांस लेकर उन विगत क्षणों का सौरभ समेटने लगी।

इसी समय किसी ने उसकी बांह को झटका दिया। आयरीन मानों आकाश से धरती पर आ गिरी।

"तुम आखिर मुझ से क्या चाहती हो, जो इस तरह मेरा पीछा कर रही हो ?" आयरीन ने क्रोध में आकर पूछा। उसके सामने वही औरत खड़ी थी।

लेकिन फ़ौरन आयरीन को अपनी मूर्खता का आभास हुआ, किन्तु अब क्या हो सकता था !

"श्रीमती वैगनर, मैं एक घंटे से आपके इन्तिज़ार में यहाँ खड़ी हूं।"

अच्छा, तो इस कम्बख्त को आयरीन का नाम और पता भी मालूम हो गया है ! सर्वनाश !

"तुम क्या चाहती हो ?"

"श्रीमती वैगनर, आप अच्छी तरह जानती हैं कि मैं किसलिये यहां आई हूँ !" औरत के स्वर में कठोरता थी।

"लेकिन मैं अब वहाँ नहीं जाती। मैंने तुमसे उसी दिन वादा कर दिया था..... ।"

"झूठ बोलने से क्या फ़ायदा ! मैंने आपको अपनी आंखों से रेस्त्रां में घुसते देखा था। जानती हैं, आजकल मैं बेकार हूँ, मालिक ने मन्दी के कारण मुझे नौकरी से अलग कर दिया है, इसलिये मैं सैर करने इस ओर आ निकली। भले घर की औरतें भी तो सैर करने निकलती हैं न ?"

उस औरत के शब्दों में कितना कटु व्यंग छिपा था ! आयरीन इस बेहूदा औरत के सामने लाचार थी। भय ने उसे फिर आ दबोचा था। मान लो कहीं नौकरों ने उनकी बातचीत सुन ली, या उसका पति कहीं आ जाय तो क्या होगा ? आयरीन ने अपने बटुए में से सारे पैसे निकाल कर उस औरत के हाथों में थमा दिये, लेकिन वे हाथ शिकारी जन्तु के पंजों की तरह अब भी फैले हुए थे।

"लाओ अपना बटुआ भी मुझे दे दो, नहीं तो पैसे कहीं गिर जायेंगे।" औरत ने भद्दे ढंग से हँसते हुए कहा।

आयरीन की खीज का पारावार न रहा, उसने उस औरत से जान छुड़ाने के लिये अपना कीमती बटुआ उसके आगे पटक दिया और दरवाज़ा बंद करके ऊपर चली गई।

उसके पति अभी दफ़्तर से नहीं लौटे थे। वह आहत पक्षी की तरह पलंग पर गिर पड़ी। लेकिन पति के क़दमों की आहट सुनते ही वह उठ बैठी और यन्त्रवत डाइनिंग रूम में चली गई। उसका सारा उल्लास समाप्त हो गया था।

इस दिन के बाद चिन्ता आयरीन की चिरसंगिनी बन गई। आयरीन क्षण-भर के लिए भी निश्चिन्त नहीं हो पाई। वह सोचती, आख़िर उस औरत को उसके नाम और मकान का पता कैसे चला? अब तो वह रोज आकर उसे धमकी देगी, यह निश्चित है। फिर वह अपने पति को बताये बग़ैर उस औरत की मांगें कैसे पूरी कर पाएगी? आयरीन ने अपने पति से सुना था कि ब्लैकमेल करने वालों का लालच दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है। मान लो एक-आध महीना चैन से गुज़र गया, लेकिन वह औरत फिर आयरीन के सुखी जीवन में अपनी कलुषित छाया डाले बग़ैर नहीं मानेगी। अगर किसी दिन आयरीन ने क्रोध में आकर उसे डांट दिया तो वह उसका घर तबाह कर देगी।

फिर क्या होगा? आयरीन चौबीसों घंटे यही सोचती रहती। उसे लगा कि किसी दिन उसके पति के नाम एक गुमनाम ख़त आयेगा, जिसे पढ़कर उसके पति के माथे में बल पड़ जायेंगे और वह आयरीन की बाहें पकडकर उससे सवाल पूछेगा और फिर क्या होगा? यहां आकर आयरीन की कल्पना-शक्ति जवाब दे जाती थी। वह अपने को एक अज्ञात भय के पंजों में जकड़ा पाती थी। वह सोचती, पता नहीं उस खत की उसके पति पर क्या प्रतिक्रिया होगी? उसके माँ-बाप क्या कहेंगे? फिर शादी के ये आठ बरस क्या सुखमय नहीं थे? आय-

रीन को किस बात की कमी थी ? वह दो बच्चों की माँ थी। उसका शानदार घर था और पति के सहवास में उसने अनगिनत क्षण बिताये थे। लेकिन फिर भी वह अपने पति के स्वभाव को ठीक से नहीं समझ पाई थी, भेद खुलने पर वह क्या सोचेगा ?·····इस विचार से आयरीन भयभीत हो उठी।

आयरीन का पति लैम्प की रोशनी में कुछ पढ़ रहा था। उसके विशाल मस्तक से उसके मेधावी होने का सुबूत मिलता था। उसके पतले ओंठ उसके चरित्र की दृढ़ता की याद दिलाते थे। इस शक्तिशाली व्यक्तित्व में एक अद्भुत सौन्दर्य था। आयरीन पति की आंखें देखना चाहती थी, लेकिन वे नीचे झुकी हुई थीं। उन्हीं में तो असली रहस्य छिपा था। आयरीन सोचने लगी, क्या वह उसे प्यार से डांटेगा या उसकी भर्त्सना करेगा ?·····आयरीन को इतने बरसों के बाद पति का चेहरा सुन्दर मालूम हुआ·····उसका हृदय गर्व से भर उठा। सहसा पति ने आँखें उठाकर उसकी ओर देखा। आयरीन ने अपना मुँह अँधेरे में कर लिया। वह पति से अपनी आँखों का भाव छिपाना चाहती थी।

तीन दिन तक आयरीन घर से बाहर नहीं निकली। नौकर-चाकर मालकिन के स्वभाव में आकस्मिक परिवर्तन देखकर हैरान रह गये। बच्चे पूछने लगे, "माँ, तुम टहलने क्यों नहीं जातीं ?" आया पड़ोसियों से कानाफूसी करने लगी। आयरीन ने भरसक प्रसन्न रहने की कोशिश की और घर की देखभाल में अपने को भूलने की कोशिश करने लगी। इससे नौकरों की हैरानी और भी बढ़ गई। भय ने उसे उद्विग्न कर दिया था, वह आराम से एक जगह नहीं बैठ सकती थी। जब कभी टेलीफोन की घंटी बजती तो उसका चेहरा पीला पड़ जाता। उसके जीवन की शान्ति चली गई थी। वे तीन दिन उसके विवाहित जीवन के आठ बरसों से भी लम्बे हो गये थे।

तीसरे दिन उसे याद आया कि उसे शाम को किसी जरूरी पार्टी

में शामिल होना है। उसने अपने मन के प्रेत से लड़ने का निश्चय किया। उसने सोचा सहेलियों से मिलकर वह अपने भय को कुछ घंटों के लिये भूल जायेगी और उसका मन फिर स्वस्थ हो जायेगा।

जब वह पति की बाहों का सहारा लेकर मोटर में सवार होने लगी तो उसने भय से आँखें मूद लीं। उसे सन्देह हुआ कि शायद वह औरत अब भी उसका पीछा करेगी। जब मोटर चल पड़ी तो उसकी जान में जान आई। सहेली के घर पहुँचकर वह इतनी खुश हुई जैसे उसे लम्बी क़ैद के बाद रिहाई मिली हो। यहां वह आज़ाद थी। उन लोगों के बीच थी जो उसका आदर करते थे, जो सुन्दर वस्त्र और गहनों से सजे थे, जिनके जीवन में चिन्ता की छाया तक न थी, जिनके लिए जीवन एक आनन्दमय नृत्य था। आयरीन जब पति की बाहों में बाहें डालकर पार्टी में शामिल हुई तो सब लोगों की आंखें उसकी ओर उठ गई। आयरीन को पता था कि वह सुन्दर है, इस आत्मविश्वास ने उसके सौन्दर्य को चार चांद लगा दिये।

साथ वाले कमरे से संगीत के स्वर सुनाई दे रहे थे। आयरीन भी अन्य जोड़ों के साथ नृत्य में शामिल हुई। उसके मन का सारा बोझ उतर गया, आज उसका शरीर लय के साथ थिरकने लगा। संगीत के रुकते ही वह फिर जड़वत् हो गई, लेकिन जब संगीत फिर शुरु हुआ तो उसकी चेतना लौट आई और वह अपने साथी के साथ नाचने लगी। आयरीन साधारण स्त्रियों की तरह फूंक-फूंककर कदम रखा करती थी, लेकिन इस उल्लासपूर्ण वातावरण में वह मुक्त-भाव से नाच रही थी। आज सब चीज़ें उसकी आत्मा की गहराइयों को छू रही थीं। अपने साथी के स्पर्श, प्रेममय शब्दों और हँसी के वातावरण के प्रति वह विशेष रूप से संवेदनशील हो गई थी। उसे लगा कि उसका शरीर, उसके कपड़े, सब इस अलौकिक सुख में बाधा बन गये हैं, वह सहर्ष निरावरण होने को तैयार थी।

"आयरीन! प्रिये तुम्हें क्या हुआ है?"

आयरीन ने मुड़कर अपने पति की ओर देखा। वह सोचने लगी क्या वह कोई ऐसी-वैसी बात कर बैठी है जिससे उसके पति को सन्देह हो गया है ?

"कुछ नहीं....." आयरीन ने भयभीत होकर उत्तर दिया।

पति की फौलाद-सी दृष्टि आयरीन के मन को भेदने लगी। आयरीन पीड़ा से छटपटा उठी।

"तुम आज होश में नहीं हो", पति ने शान्त स्वर में कहा।

आयरीन को यह पूछने का साहस न हुआ कि आखिर वह क्या कहना चाहता था। उसके शरीर में कंपकपी दौड़ गई, उसे अपने पति के चौड़े कंधों का ख्याल आया "क़ातिल !" वह मन ही मन बड़बड़ाई। उसे आभास हुआ कि वह एक विवाहित स्त्री है और उसके पति का व्यक्तित्व कितना शक्तिशाली है...।

संगीत फिर शुरू हुआ। आयरीन अपने नये साथी के साथ यन्त्रवत नाचने लगी। लेकिन उसके पैर बोझिल हो गये थे, और उसकी आत्मा को असह्य यन्त्रणा हो रही थी। वह अपने साथी से माफी मांगकर चली आई। उसका पति पहले से उसकी प्रतीक्षा में बैठा था। फिर वही फौलादी नज़रें ! आखिर वह क्या चाहता है ? क्या उसे सचमुच सन्देह हो गया है ? आयरीन नज़रें चुराने के लिये अपने गाऊन की सिलवटें ठीक करने लगी। पति की चुप्पी उसे दुखदायी मालूम हो रही थी। उसने घबराकर पूछा,

"घर चलें ?"

"चलो।"

पति की आवाज़ में कठोरता थी। वह चुपचाप जाकर मोटर में बैठ गया, आयरीन उसके विशाल कंधों और सुडौल गर्दन को देखकर फिर भयभीत हो गई। समूर के कोट में भी उसे ठंड लग रही थी। उसे निश्चय था कि वह चारों तरफ़ से शत्रुओं से घिरी हुई है।

रात को आयरीन ने एक उदास सपना देखा—एक कमरे में बड़ी

बत्तियां जल रही थीं और संगीत बज रहा था। आयरीन कमरे में दाखिल हुई। वहां बहुत से लोग बैठे थे। एक युवक ने आकर उसकी कमर में हाथ डाल दिया और वह चिड़िया की तरह फ़र्श पर नाचने लगी। छत से लटके हुए क़न्दील आकाश के तारों की तरह दिखाई दे रहे थे। आयरीन को दीवारों पर लगे सैकड़ों शीशों में अपनी आकृति दिखाई दे रही थी। धीरे-धीरे आयरीन को जोश आता गया। युवक ने उसकी बांहें पकड़कर अपने नज़दीक खींच लिया, आयरीन का रोम-रोम सिहर उठा, उसने युवक की आंखों में आंखें डाल कर देखा, यह वही अभिनेता था, किशोरावस्था में जिसकी आयरीन पूजा करती थी। वह कुछ कहने ही वाली थी कि युवक ने अपने जलते हुए ओंठ आयरीन के ओंठों पर रख दिये, दोनों एक-दूसरे की बाहों में लिपटे हुए फिर नृत्य करने लगे। उन्हें समय और स्थान का कोई ज्ञान न रहा। इसी समय किसी ने आयरीन के कन्धे पर हाथ रखा। कमरे की बत्तियां बुझ गईं। संगीत बन्द हो गया और आयरीन कमरे में अकेली रह गई। उसकी कलाई को अपने फ़ौलादी पंजे में पकड़कर वही औरत कह रही थी, "चोट्टी कहीं की, मेरा प्रेमी मुझे लौटा दे!" दोनों औरतें एक-दूसरे पर टूट पड़ीं, लेकिन उस 'औरत' ने आयरीन को ज़मीन पर पटक कर उसका मोतियों का नैकलेस छीन लिया और उसके क़ीमती गाऊन के चिथड़े कर दिये। आयरीन का वक्ष निरावरण हो गया। इसी समय कमरे की बत्तियां जल उठीं और सब लोग वापिस आ गये। उस औरत ने आयरीन की ओर इशारा करते हुए कहा, "इसने मेरा प्रेमी चुरा लिया है! वेश्या, छिनाल।" आयरीन छिपने के लिये जगह तलाश करने लगी। लोगों की कामुक दृष्टि उसके नंगे शरीर को भेद रही थी। आयरीन ने अपने पति की ओर देखा जो दरवाज़े के बाहर अंधेरे में छिपा था। वह आयरीन को देखकर चुप रहा। आयरीन चीख़ती हुई एक कमरे से दूसरे कमरे में भागने लगी, भीड़ उसका पीछा कर रही थी। आयरीन का सारा गाऊन फट गया और वह अपने हाथों से अपनी नग्नता

को ढँकती हुई सीढ़ियों से नीचे उतर कर एक अंधेरे कमरे में जा पहुँची। लेकिन उसके सामने खुरदरे ऊनी कपड़े पहने वही औरत खड़ी थी। आयरीन भयभीत खरगोश की तरह वहां से भागी। उस औरत के सस्ते जूतों की आवाज़ भी उसका पीछा कर रही थी, हर गली और हर मकान में से उस औरत की छाया निकल कर आयरीन का रास्ता रोक रही थी। भागते-भागते आयरीन के घुटने सूज गये थे। घर पहुँचते ही आयरीन को दरवाजे पर उसका पति खड़ा मिला। उसके हाथ में एक छुरा था। उसने आयरीन के चेहरे पर अपनी फौलादी आंखें गड़ाकर पूछा, "तुम इतनी देर तक कहाँ थी ?" "कहीं नहीं !" इतने में वह औरत ज़ोर से हँसी और कहने लगी, "झूठ ! झूठ ! मैं जानती हूँ यह कहां से आई है !" पति ने छुरा उठा लिया आयरीन ज़ोर से चिल्लाई "दौड़ो ! दौड़ो ! मार डाला !"

वह बिस्तर में बैठकर अपनी आंखें मलने लगी। उसका पति उसके सिरहाने बैठा था। तो यह सपना था ! लेकिन पति उसके सिरहाने क्यों बैठा है ? कमरे की बत्ती किसने जलायी ? आयरीन भयभीत हो उठी। उसने पति के हाथों की ओर देखा। वहां कोई छुरा नहीं था। लेकिन वह इस तरह उसको ओर क्यों देख रहा था ?

आयरीन ने हँस कर पूछा, "तुम इतने गंभीर क्यों हो गये हो ? मैंने सिर्फ एक सपना देखा था।"

"तुम ज़ोर से चिल्लाई थीं ! मैंने पास वाले कमरे से तुम्हारी चीखें सुनी थीं।"

आयरीन सोचने लगी, "न जाने सपने में मैंने क्या क्या कह डाला होगा !" उसने सर नीचा कर लिया। लेकिन पति चुपचाप उसके चेहरे की ओर देख रहा था।

"क्या बात है आयरीन ! देख रहा हूँ, पिछले तीन-चार दिनों से तुम तुम नहीं रहीं। शायद तुम्हें तेज़ बुखार हो रहा है। तुम हर वक्त बेचैन रहती हो।"

आयरीन ने पति की बातें हँसी में उड़ाने की कोशिश की।

"नहीं, मुझसे कुछ मत छिपाओ। क्या तुम्हारे मन पर कोई बोझ है ? तुम इतनी चिन्तित किसलिये रहती हो ? घर के सब लोगों ने इस बात को महसूस किया है। प्यारी आयरीन, मुझ पर भरोसा रखो, मुझे बताओ।"

अपनी नंगी बांहों पर पति की उंगलियों का स्पर्श पाकर आयरीन के मन में आया कि वह पति की बलिष्ट देह से लिपट कर सब कुछ कह डाले।

लेकिन आयरीन के चेहरे पर लैम्प की रोशनी पड़ रही थी। वह शर्म से लाल हो गयी।

"चिन्ता न करो फ्रित्ज़, मेरी तबियत कुछ ठीक नहीं है। मैं कुछ दिनों में फिर स्वस्थ हो जाऊंगी।"

आलिंगन के लिए आगे बढ़ी बाहें पीछे हट गयीं। फ्रित्ज़ के चेहरे पर निराशा के बादल छा गये। वह अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ।

"पता नहीं क्यों, लेकिन मुझे कुछ दिनों से ऐसा लग रहा है, जैसे तुम मुझ से कुछ कहना चाहती हो·····यह सिर्फ तुम्हारे और मेरे बीच की बात है। इस वक्त हम कमरे में बिल्कुल अकेले हैं। आयरीन·····।"

आयरीन पति की दृष्टि से आहत होकर फिर पलंग पर लेट गई और सोचने लगी कि सिर्फ दो शब्दों से सारी स्थिति साफ हो सकती है। "माफ़ करदो" कहने पर फ्रित्ज़ उससे आगे कोई सवाल नहीं करेगा। लेकिन टेबिल लैम्प अब भी जल रहा था। शायद अन्धेरे में वह सब कुछ कह सकती थी। रोशनी में उसकी शक्ति लुप्त हो गई थी।

"तो मुझे बताने के लिए तुम्हारे पास कोई बात नहीं ?" पति की आवाज़ में कोमलता थी। आयरीन उसके सामने मन की व्यथा खोलने के लिए व्याकुल हो उठी थी, लेकिन आत्मा को कचोटने वाली वह

आयरीन ने हँसकर कहा, "न जाने तुम क्या सोचते हो ! मेरी नींद खराब हो गई थी, इसका अर्थ यह तो नहीं कि तुम मुझ पर शक करने लगो । शायद तुम यह भी सोचने लगो कि मैं·····कि मैं किसी प्रेमी के ध्यान में मगन रहती हूँ ।" अन्तिम शब्द सुनकर स्वयं आयरीन अपने झूठ पर लज्जित हो गई । उसने आँखें दूसरी ओर फेर लीं ।

"अच्छा, अब आराम से सो जाओ" फ्रित्ज़ की आवाज़ की कोमलता कठोरता में बदल गई थी ।

वह बत्ती बुझाकर चला गया, अन्धकार में प्रेत की तरह आयरीन को लगा जैसे वह ताबूत में बन्द हो गई हो । उसका शरीर खोखला हो गया था, उसके अंग-अंग में पीड़ा समाई थी । पीड़ा—पीड़ा—पीड़ा—।

अगले दिन जब वह अपने पति और बच्चों के साथ खाना खाने बैठी तो उसी समय नौकरानी ने एक खत लाकर दिया ।

"मैडम ! यह खत आपके लिये है । नीचे एक आदमी जवाब की प्रतीक्षा में खड़ा है ।"

आयरीन ने जल्दी से लिफ़ाफ़ा खोला और खत पढ़ते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया । उसमें लिखा था, "पत्रवाहक के हाथ फ़ौरन एक सौ क्राउन भेज दो ।" न लिखने वाले का नाम, न तारीख़ !

आयरीन उठकर अपने कमरे में चली गई, लेकिन उसके कैश-बाक्स की चाबी कहीं गुम गई थी । उसने सारी दराजें खोल डालीं । आख़िर चाबी मिल गई । कांपते हाथों से आयरीन ने नोट गिनकर लिफ़ाफे में रख दिये और स्वयं जाकर पत्रवाहक को दे आयी । ये सब काम उसने यान्त्रिक ढंग से किए जैसे वह किसी अदृश्य जादू के ज़ोर से यह सब कर रही हो । दो मिनिट बाद वह फिर अपनी कुर्सी पर आकर बैठ गई ।

सब लोग चुपचाप उसकी ओर देखने लगे । आयरीन हंसकर इस स्थिति का सामना करने वाली थी, लेकिन उसकी दृष्टि खुले हुए खत की ओर गई जो उसकी प्लेट के पास पड़ा था । आयरीन ने झट से उसे अपनी जेब में डाल लिया । फ़ौरन उसकी आँखें पति की आँखों से मिलीं,

जिनमें तीव्र भर्त्सना भरी थी। आयरीन को लगा मानो किसी ने उसके सीने में छुरा भोंक दिया हो। कल रात पार्टी में भी उसने इसी तरह देखा था। आयरीन अपनी घबराहट को छिपाने की कोशिश कर रही थी। सहसा उसके मन में एक पुरानी स्मृति जाग उठी। फ्रित्ज़ ने एक बार उसे बताया था कि उसने एक बार ऐसा केस लड़ा था, जिसमें सरकारी वकील ने चालाक गवाहों से निपटने के लिए एक खास तरीका अपनाया था। वह मेज़ पर पड़े क़ानूनी कागज़ों को पढ़ने में तल्लीन हो गया, और उसने ऐसा प्रकट किया जैसे उसे मुक़द्दमे में कोई दिलचस्पी नहीं। लेकिन जब कोई ज़रूरी सवाल पूछा जाता तो वह सर उठाकर अपराधी की ओर इस तरह देखता कि सारा झूठ तिनकों की तरह तितर-बितर हो जाता। तो क्या फ्रित्ज़ भी यही चाल चल रहा है? वह जानती थी कि फ्रित्ज़ को अपराध के मनोवैज्ञानिक पहलुओं में कितनी अधिक दिलचस्पी है। पेशेवर जुआरी को जुए में, कामुक व्यक्ति को वासना में जितनी दिलचस्पी होती है, उससे कहीं अधिक दिलचस्पी फ्रित्ज़ को अपराधी की मनोवृत्तियों में थी। अपराध का सुराग लगाते वक्त उसकी जिज्ञासा पराकाष्ठा पर पहुँच जाती थी, और वह उत्तेजना में खाना-पीना भी भूल जाता था। किसी बड़े मुकद्दमे से कई दिन पहले ही वह गहरी सोच में पड़ जाता था और लगातार सिगरेट पीता रहता था। वह अपनी सारी शक्ति अदालत के लिए बचाना चाहता था। एक बार आयरीन फ्रित्ज़ की पैरवी सुनने अदालत में गई थी। फ्रित्ज़ की आँखों में छिपी प्रतिहिंसा और उसके ओजपूर्ण भाषण को सुनकर वह थर्रा गई थी। दोबारा अदालत में जाने की उसकी हिम्मत नहीं हुई थी, लेकिन इस बार तो वह स्वयं अपराधी थी।

इस स्मृति ने आकर आयरीन को और भी भयभीत कर दिया। वह चुपचाप खाना खाती रही। खाने के बाद बच्चे नर्सरी की ओर भाग गए। फ्रित्ज़ उठकर अपनी लाइब्रेरी में चला गया।

आयरीन अकेली रह गई। उसने वह खत एक बार फिर पढ़ा,

"पत्रवाहक के हाथ फ़ौरन एक सौ क्राउन भेज दो !" गुस्से में आकर आयरीन ने खत को मरोड़ कर रद्दी कागज़ों की टोकरी में फेंक दिया, लेकिन अगले ही क्षण उसे कुछ याद आया। उसने टोकरी में से वह कागज़ उठाया और जलती हुई अंगीठी में फेंक दिया । फिर उसने चैन की सांस ली ।

लेकिन इसी समय किसी के क़दमों की आहट सुनाई दी । आयरीन ने देखा कि उसका पति दरवाजे के पास खड़ा है । उसका चेहरा लाल हो गया । फ्रित्ज़ ने अपनी सिगार सुलगाने के लिए दियासलाई जलाई । आयरीन ने देखा, क्रोध से फ्रित्ज़ के नथुने फड़क रहे थे, लेकिन उसने शान्तभाव से कहा,

"आयरीन, मैं तुम से यह कहने आया था कि तुम अपने प्राइवेट खत अगर मुझे न दिखाना चाहो तो मत दिखाओ ।"

आयरीन पत्थर की मूर्ति बनी खड़ी रही । फ्रित्ज़ एक-दो सैकेंड खड़ा रहा फिर ज़ोर से सिगार का धुंआ छोड़ता हुआ बाहर चला गया ।

आयरीन सोचने से बचने के लिये अपने मन को उलझाये रखना चाहती थी । घर में रहकर उसका दम घुटता था, वह अपनी सहेलियों से मिलना-जुलना चाहती थी, नहीं तो वह जानती थी कि वह पागल हो जाएगी । सौ क्राउन पाने पर कम से कम वह औरत कुछ दिन तो उसे सताना छोड़ ही देगी । उसे बाजार से कुछ जरूरी चीजें खरीदनी थीं । उसने घर से बाहर निकलने का अजब ढंग अपनाया था । जैसे ग़ोताख़ोर नदी में छलाँग लगाता है, उसी तरह वह जन समुद्र में ग़ोता लगाती थी । वह दुनियां की नजरों से अपने को बचाती सड़क के किनारे-किनारे चलने लगी । उसकी आँखें नीची थीं, ताकि उसे वह औरत.....लेकिन उस औरत का विचार अब भी उसका पीछा कर रहा था । किसी की बांह छू जाने पर वह चौंक उठती, किसी के भी क़दमों की आहट उसके लिए खतरे की घंटी थी । कोई भी परछांई, अमं-

गल सूचक थी। केवल किसी सहेली के घर में या टैक्सी में बैठकर ही वह अपने को सुरक्षित समझती थी।

एक भद्र पुरुष ने हैट उठाकर आयरीन का अभिवादन किया। आयरीन पहले तो घबरा गई, लेकिन उसने देखा कि वह उसके पति का पुराना दोस्त था और वह अपनी बीमारी की चर्चा करके सब लोगों को 'बोर' किया करता था, अक्सर आयरीन उससे पीछा छुड़ाने की कोशिश करती थी। तो भी आज उसकी उपस्थिति में वह अपने को सुरक्षित पा रही थी। लेकिन वह व्यक्ति दूर जा चुका था। इसी समय आयरीन ने एक आकृति अपनी ओर आती देखी, बिना उसकी ओर देखे ही वह तेजी से आगे बढ़ने लगी। वह जानती थी कि कोई उसका पीछा कर रहा है। जल्द ही वह अपनी बांहों पर उन खुरदरे हाथों का स्पर्श महसूस करेगी। कैसे बचा जाये? आयरीन के घुटने भय से कांप रहे थे। इसी समय पीछे से किसी ने पुकारा, "आयरीन!" लेकिन यह तो उस औरत की कर्कश आवाज़ नहीं थी। उसने पीछे मुड़कर देखा तो उसका प्रेमी कार्ल ब्रस्टमैन सामने खड़ा था। उसने आयरीन का अभिवादन करने के लिये हाथ आगे बढ़ाया, लेकिन आयरीन चुपचाप खड़ी रही—उसे कार्ल को अपने सामने देखकर हैरानी हो गई थी। पिछले कुछ दिनों से उसने कार्ल के बारे में सोचा तक न था। सहसा उसके पीले कातर चेहरे को देखकर आयरीन के हृदय में ज्वालामुखी दहकने लगा। उसके ओंठ आवेश से कांपने लगे। उसके क्रुद्ध चेहरे को देखकर कार्ल के आश्चर्य की सीमा न रही।

"आयरीन, तुम इस तरह मेरी ओर क्यों देख रही हो? क्या मैंने कोई क़सूर किया है?" कार्ल ने विनीत भाव से पूछा।

आयरीन आग्नेय नेत्रों से उसकी ओर देखकर व्यंग्य भरे स्वर में चिल्लाई, "जी नहीं, आपने कोई क़सूर नहीं किया, सिवा प्रेम-भरी मीठी, बातों के!"

कार्ल स्तब्ध हो गया। उसके मुंह से केवल इतना ही निकला, "लेकिन आयरीन—आयरीन!"

"ख़बरदार जो खुले आम कोई कांड मचाया। मैं तुम्हारा नाटक बहुत देख चुकी हूं। तुम्हारी चहेती सदा की तरह आज भी हमारा पीछा कर रही होगी, और तुम्हारे यहाँ से जाते ही मेरे पीछे पड़ जायेगी।"

"तुम क्या कह रही हो ? कौन चहेती ?"

आयरीन के मन में आया कि फौरन उस चालाक आदमी के गालों पर दो-चार थप्पड़ लगा दे। ज़िन्दगी में उसे कभी किसी पर इतना ग़ुस्सा नहीं आया था।

"लेकिन आयरीन·····मैंने क्या किया है ? तुमने अचानक मुझसे मिलना-जुलना बंद कर दिया। मैं दिन-रात तुम्हारी प्रतीक्षा में बैठा रहता हूँ·····आज सारा दिन मैं तुम्हारे घर के बाहर खड़ा रहा·····सिर्फ तुम्हारी शक्ल देखने के लिये·····।"

"अच्छा तो तुम भी मेरा पीछा करने लगे हो, क्यों ?" ग़ुस्से ने आयरीन को विक्षिप्त बना दिया था। अगर वह कार्ल को थप्पड़ मार सकती तो उसके हृदय का भार हल्का हो जाता। लेकिन उसके संस्कार इतने ओछे न थे। वह बिना उत्तर दिये चली गई और भीड़ में ग़ायब हो गई। कार्ल स्तब्ध होकर यह सब देखता रहा। फौरन वह भी पत्ते की तरह भीड़ की लहरों में बह गया।

अगले दिन आयरीन को फिर एक गुमनाम ख़त मिला, जिसमें और पैसों की मांग की गई थी। इस बार उस औरत ने दो सौ क्राउन माँगे थे जो आयरीन ने चुपचाप पत्रवाहक को दे दिए। बैंक में आयरीन का निजी हिसाब भी था, लेकिन वह जानती थी, कि रोज इतनी बड़ी रक़म निकालने से पति को ज़रूर शक होगा। उस औरत का लालच तो दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है, आज उसने दो सौ क्राउन मांगे हैं, कल चार सौ मांगेगी, परसों एक हज़ार। अगर आयरीन ने उसकी मांग न पूरी की तो रोज उसे गुमनाम ख़त मिलेंगे। फिर—फिर सर्वनाश को कौन रोक सकेगा ? आयरीन शान्ति की दो-चार घड़ियों के लिये इतनी बड़ी क़ीमत अदा कर रही थी। उसका पढ़ना-लिखना और सीना-पिरोना सब छूट गया

था। कई बार तो उसका सर इतनी जोर से चकराने लगता था कि वह निढाल होकर पलंग पर गिर पड़ती थी। इस थकान के बावजूद भी उसे नींद नहीं आती थी। साथ ही उसे प्रसन्न रहने का अभिनय भी करना पड़ता था। कितना साहस था उस औरत में ?

दुनियां में सिर्फ, सिर्फ एक व्यक्ति को आयरीन की आत्मा की यंत्रणा का पता था—वह था उसका पति जो सदा सावधान रहता था। आयरीन ने पहले से भी अधिक सावधानी बरतनी शुरू कर दी और वह पति पर निगरानी रखने लगी। दोनों नृशंसभाव से एक दूसरे पर जासूसी करने लगे। फ़ित्ज़ इन दिनों बहुत बदल गया था। अतीत के सुखमय विवाहित जीवन की स्मृति ने उसके हृदयको कोमल और संवेदनशील बना दिया था। वह आयरीन से इस तरह व्यवहार करता था जैसे आयरीन कोई मरीज़ हो, और डाक्टर की तरह मरीज़ के दर्द का हाल सुनने के लिये वह सदैव तैयार रहता था। आयरीन पति की इस सहृदयता के कारण और भी लज्जित थी और अपने मन का रहस्य मन में ही छिपाये रखती थी।

एक बार आयरीन जब सैर के बाद घर लौटी तो उसने बच्चों के कमरे में लड़ाई-झगड़े की आवाज़ें सुनी। उसका पति ऊँचे स्वर में नर्स को डांट रहा था, और बच्चों के सिसकने की आवाज़ें आ रही थीं। आयरीन का मन आशंका से कांपने लगा, ज़रूर उसकी अनुपस्थिति में कोई ख़त आया होगा। आयरीन मन को कड़ा करके जब ऊपर पहुँची तो उसे मालूम हुआ कि बच्चे लकड़ी के उस घोड़े के लिए आपस में झगड़ पड़े थे जो उनकी मौसी ने कुछ दिन पहले उन्हें भेंट दिया था। घोड़ा भाई का था इसलिए बहिन को उससे ईर्ष्या होती थी। भाई उसे घोड़े को हाथ तक नहीं लगाने देता था, इसलिए बहन ने क्रोध में आकर घोड़े को तोड़ डाला था और टुकड़े अलमारी में छिपा दिए थे। नर्स ने झगड़े का फैसला करने के लिए आयरीन के पति को बुला लिया था। जिस समय आयरीन कमरे में दाखिल हुई, मुकद्दमा बड़े ज़ोर-शोर से ज़ारी था। बच्ची ने क़सूर मानने से इन्कार कर दिया। नर्स गवाही दे

रही थी। आखिरकार बच्ची अपने ऊपर नियन्त्रण न रख सकी और फूट-फूट कर रोने लगी।

आयरीन ध्यान से पति के चेहरे की ओर देख रही थी। उसे लगा कि बच्ची की बजाय, जैसे उसी की किस्मत का फैसला हो रहा था। हो सकता है कल उसे भी इसी तरह अपराधी के रूप में पति के आगे पेश होना पड़े। जब तक बच्ची झूठ बोलती रही थी, फ्रित्ज़ उससे सख्ती से पेश आता रहा था, जब उसने अपनी ग़लती मान ली तो पिता का हृदय द्रवित हो गया, उसने बड़े प्रेम से बेटी को समझाया कि भाई का सुन्दर खिलौना तोड़कर उसने कितनी भारी ग़लती की है। जब उसे अपनी ग़लती समझ में आई तो वह और ज़ोर से रोने लगी।

आयरीन ने जाकर बच्ची को पुचकारा, लेकिन बच्ची ने माँ को अपने से दूर धकेल दिया। फ्रित्ज़ ने भी आयरीन को इस हमदर्दी के लिए डांटा, क्योंकि वह अपराधी को बिना सज़ा छोड़ दिये जाने के पक्ष में नहीं था। दोनों बच्चे कल एक पार्टी में निमन्त्रित थे। फ्रित्ज़ ने फैसला सुनाया कि हेलेन कल घर पर ही रहेगी। बच्ची फूट-फूटकर रोने लगी। उसका भाई रुदी जीत के उल्लास में कमरे से बाहर जाकर दौड़ लगाने लगा। फ्रित्ज़ ने उसे डांटा, और कहा कि दूसरे के दुःख पर खुशी मनाना बड़ी भारी बदतमीज़ी है। उसे तमीज़ सीखनी चाहिए, इसलिए कल दोनों में से कोई भी पार्टी में नहीं जायेगा। भाई-बहन दोनों एक-दूसरे का हाथ पकड़कर कमरे से बाहर चले गये। मुसीबत ने उन्हें एक कर दिया था।

अब पति-पत्नी कमरे में अकेले रह गये। आयरीन ने निश्चय किया कि वह बच्चों के झगड़े को आड़ बनाकर अपने बारे में बात करेगी, इसलिए उसने पति का रुख देखने के लिए पूछा।

"क्या तुम सचमुच बच्चों को पार्टी में नहीं जाने दोगे? तुम नहीं जानते, हेलेन को इससे कितना दुःख होगा। उस बेचारी को तुम किस

कुसूर के बदले इतनी बड़ी सजा दे रहे हो ? तुम्हें उस पर दया नहीं आती ?"

फ़ित्ज़ ने उसकी ओर कठोर दृष्टि से देखते हुये उत्तर दिया:

"दया ? अब उसे दया की कोई ज़रूरत नहीं। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है और सज़ा पाकर उसका मन हल्का हो गया है। कल जब हम टूटे खिलौनों के टुकड़े तलाश कर रहे थे और वह अपने कुसूर को छिपाने की कोशिश कर रही थी, तो उस समय मुझे उस पर सचमुच दया आ रही थी। भय, सज़ा से भी अधिक भयंकर चीज़ है। मानसिक उत्तेजना बड़ी कष्टदायक होती है। अपनी बेटी को इस कष्ट से बचाने के लिए मैंने उसे सज़ा सुनाई, और उसका दिल फ़ौरन हल्का हो गया। तुम उसके आंसुओं से मत घबराओ। वे उसके दिल को भारी बनाये हुए थे, रोने से उसका दिल हल्का हो गया है। दबे हुए आंसू ज्यादा गहरा आघात पहुँचाते हैं....."

वह बेटी के बारे में कह रहा था या पत्नी के बारे में ? आयरीन ने घबराकर पति के चेहरे की ओर देखा, लेकिन पति बिना उसकी ओर देखे कह रहा था:

"विश्वास करो, यही मानव स्वभाव है। कानून के अध्ययन से मैंने यही सीखा है। अपराधी तभी तक उत्तेजित रहता है जब तक उसके पास छिपाने को कुछ होता है। पकड़े जाने का भय और अपने झूठ को छिपाने का प्रयत्न, यही उत्तेजना के कारण हैं। मैंने बुरे से बुरे अपराधियों को जज के सवालों के सामने इस तरह कराहते देखा है, जैसे कोई डाक्टर उनके दांत उखाड़ रहा हो। शब्द उनके गले में आकर अटक जाते हैं, वे सच कहना चाहते हैं लेकिन भय और धृष्टता के कारण नहीं कह पाते। फिर सच और झूठ में संघर्ष होता है। इस बीच जज को अपराधी से भी अधिक मानसिक यन्त्रणा झेलनी पड़ती है, फिर भी अपराधी जज को अपना दुश्मन समझता है। मुझे अक्सर ऐसे अपराधियों की पैरवी करनी पड़ती है, इसलिए मेरा कर्त्तव्य तो यही है

कि उन्हें अपने झूठ पर अड़े रहने की सलाह दूं, लेकिन मन ही मन मैं यह भी जानता हूँ कि अपराधी की यन्त्रणा का अन्त सज़ा सुनते ही हो जाता है, क्योंकि तब छिपाने के लिए उनके पास कुछ नहीं रहता। मुझे उन लोगों की मनोवृत्ति समझ में नहीं आती जो ख़तरनाक कामों में हाथ तो डालते हैं, लेकिन जिनमें अपना अपराध स्वीकार करने का नैतिक साहस नहीं होता, जब कि स्वीकृति के एक शब्द से उनके भय और मानसिक यन्त्रणा का अन्त हो सकता है। भय तो अपराध से भी अधिक दयनीय है।"

"फ्रित्ज़ क्या तुम्हारे ख्याल में भय ही दुराव का कारण है? इसका कारण लज्जा, संकोच नहीं हो सकता? सब के सामने अपना अपराध स्वीकार करने में लज्जा नहीं होती·····शब्दों में"

फ्रित्ज़ ने चकित भाव से पत्नी की ओर देखा। इससे पहले आयरीन ने कभी क़ानूनी मामलों में दिलचस्पी नहीं दिखाई थी।

"लज्जा? लज्जा भय का ही तो एक रुप है। मैं मानता हूँ कि यह भय से ऊँची चीज़ है और इसका अपराध या सज़ा से कोई सम्बन्ध नहीं, लेकिन फिर भी·····ठीक मैं समझ गया·····"

वह कुर्सी से उठकर कमरे में चहलकदमी करने लगा। वह किसी गहरे सोच में पड़ा था। सहसा वह आयरीन के सामने खड़ा हो गया और संयत भाव से बोला,

"मान लिया कि दूसरों के सामने अपना अपराध स्वीकार करने में शर्म आती है, विशेषकर साधारण लोगों के सामने, जो भूखी बिल्लियों की तरह अपराध का विवरण पढ़ने के लिए अख़बारों पर झपटते हैं। लेकिन अपनों से कैसी लज्जा?"

आयरीन ने कांपती आवाज़ में उत्तर दिया, "जो जितना नज़दीक होता है, उससे उतनी ही अधिक लज्जा आती है।"

फ्रित्ज़ मंत्र-मुग्ध-सा खड़ा रह गया। वह अस्पष्ट स्वर में बुदबुदाया, "अच्छा, तो तुम्हारा मतलब·····तुम्हारा मतलब···यह है कि हेलेन

को मेरे सामने अपना अपराध स्वीकार करने की बजाय नर्स के सामने स्वीकार करने में कम घबराहट होती ?"

"मैं तो यही सोचती हूँ, वह इतनी जिद्दी इसलिये हो रही थी क्योंकि वह तुम्हारी सबसे अधिक इज्ज़त करती है·····क्योंकि वह तुम्हें प्यार करती है। क्योंकि·····"

आयरीन की ज़बान लड़खड़ाने लगी। फ्रित्ज़ ने उसके पास आकर कहा, "शायद तुम्हारी बात सही है·····बिल्कुल सही है·····ताज्जुब है, यह बात मेरी समझ में पहले कभी नहीं आई। लेकिन कभी यह मत समझ बैठना कि मैं हृदयहीन हूँ और क्षमा करना नहीं जानता। मैं जानता हूँ किस मौके पर सख्ती बरतनी चाहिये।"

आयरीन का मुँह लाल हो गया। फ्रित्ज़ की बात का क्या अर्थ है ? वह ठीक से समझ न पाई।

"लो सज़ा रद्द हो गई !" फ्रित्ज़ ने हंसकर कहा, "हेलेन कल पार्टी में जायेगी, मैं दोनों बच्चों को यह खुशखबरी देने जा रहा हूँ। अब तो तुम खुश हो न प्रिये ? तुम्हारी कोई और ख्वाहिश हो तो उसे भी पूरा करवा लो। इस समय मैं सहृदयता की मूड में हूँ। मुझे खुशी है कि मैं अन्याय करने से बच गया। आयरीन, तुम नहीं जानतीं—कितनी खुशी होती है, कितनी खुशी होती है जब कोई·····"

आयरीन ने फ्रित्ज़ के शब्दों का अर्थ लगाना चाहा। वह आकर पति के समीप खड़ी हो गई। उसके गले में शब्द आकर अटक गये। फ्रित्ज़ भी उसके भार को हल्का करने के लिये पास आ खड़ा हुआ। आयरीन ने उसकी आंखों में क्षमा का भाव देखा—और उसका साहस बिखर गया। उसके हाथ निश्चल हो गये और वह सोचने लगी, "कैसी विचित्र स्थिति है, मेरे मुंह में शब्द आकर जम गये हैं, जिनके निकलते ही मुझे शान्ति प्राप्त हो सकती है।" मन ही मन वह अपने संकोच को कोस रही थी। इससे अच्छा मौका उसे कब मिल सकता था ? पन्द्रह दिनों से वह विक्षिप्त हो रही थी। उस औरत का खत मिले उसे चार दिन हो

गये थे, इसलिये वह फिर भयभीत हो रही थी। वह जानती थी कि वह अपनी शान्ति की क़ीमत अदा कर रही है, शाम के वक्त अपने बच्चों के साथ मन बहलाने और सैर करने की क़ीमत।

इसी समय ज़ोर से किसी ने घंटी बजायी, आयरीन सीढ़ियाँ उतर कर नीचे भागी। दरवाज़े के बाहर समूर का कोट पहने और बढ़िया हैट लगाये एक औरत खड़ी थी। आयरीन ने उसे अपरिचित समझा, लेकिन उसका अनुमान ग़लत निकला·····वह तो वही औरत थी।

"आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई श्रीमती वैगनर! मुझे आपसे एक ज़रूरी काम है।" उस औरत ने स्वयं आगे बढ़कर अपना छाता स्टैंड पर रखते हुए कहा।

वह इस तरह घर में घुसी आ रही थी, जैसे वह घर की मालकिन हो। इतने आलीशान घर की मालकिन को बेइज्ज़त करने में उसे जैसे बड़ा संतोष मिल रहा था। वह अपने आप साथ वाले कमरे में जाकर सोफे पर बैठ गई और हँसकर बोली, "यहीं बैठना ठीक रहेगा न?"

आयरीन ने कमरे का दरवाज़ा भीतर से बन्द कर लिया और मन ही मन कहने लगी, "वेश्या कहीं की, मुझे नहीं मालूम था, यह इतनी ढीठ है।"

"सचमुच आपका सोफ़ा बड़ा सुन्दर और आरामदेह है। बापरे! आपके यहाँ इतनी तस्वीरें हैं! हम लोग बड़े दरिद्र हैं। श्रीमती जी, आपका जीवन बड़ा सुखी है!"

उस औरत की धृष्टता और बेहयाई देखकर आयरीन के संयम का बाँध टूट गया। उसने ऊंची आवाज़ में कहा:

"तुम रोज़-रोज़ मुझे ब्लैकमेल करने क्यों आती हो? मेरे घर में घुसने की तुम्हारी जुर्रत कैसे हुई? अब मैं यह सब नहीं होने दूंगी। मैंने निश्चय कर लिया है·····"

"सावधान! कहीं आपके नौकर-चाकर हमारी बातचीत न सुन लें। मैं कब कहती हूं कि मैं ब्लैकमेल नहीं करती? बहुत होगा तो पुलिस

मुझे जेल भेज देगी। वैसे भी मेरी ज़िन्दगी कौनसी सुखी है? लेकिन आपकी बात दूसरी है। अगर आपको लड़ना-झगड़ना है तो दरवाज़ा अच्छी तरह बंद कर आइये, लेकिन मैं आपको साफ़ बता रही हूं कि अपनी गीदड़-भवकियों से आप मुझ पर रौब नहीं जमा सकतीं।"

आयरीन का क्रोध ठंडा पड़ गया। वह भयभीत विद्यार्थी की तरह अपने ही घर में आज्ञाकारी बनकर खड़ी हो गई।

"तो सुनिये श्रीमती वैगनर, आप जानती हैं कि आजकल मेरी हालत बहुत खस्ता है। मैं कई महीनों से मकान का भाड़ा नहीं चुका सकी। मेरे सर पर कर्जों का बोझ है। मैं आपसे मदद लेने आई हूँ। मुझे चार सौ क्राऊन चाहियें।"

'इतनी बड़ी रक़म मेरे पास नहीं है। तीन सो क्राऊन मैं अपने जेब-ख़र्च में से तुम्हें दे चुकी हूँ। रोज़-रोज़ तुम्हारी मांग कैसे पूरी होगी?"

"यह तो आप ही जाने, आप जैसी धनी महिला जब चाहे धन जुटा सकती है। ज़रा इस मामले पर ग़ौर से सोचिये श्रीमती जी....."

"लेकिन मैंने तुमसे कह दिया, मेरे पास इतने पैसे नहीं हैं। ज्यादा से ज्यादा मैं इस वक्त तुम्हें एक सौ....."

"लेकिन चार सौ से कम में मेरा काम बिल्कुल नहीं चल सकता", उस औरत ने आयरीन की बात को अनसुना कर दिया।

"कह दिया कि मेरे पास नहीं है! तुम्हें विश्वास करना चाहिये"। आयरीन ने खीजकर जवाब दिया। वह मन ही मन डर रही थी कि कहीं उसका पति वहां न आ पहुँचे।

"नहीं हैं तो जाकर ले आइये!"

"यह नामुमकिन है।"

उस औरत ने आयरीन को सर से पांव तक देखा, मानो वह आयरीन की क़ीमत आंक रही हो।

"तो फिर यह अंगूठी उतारकर दे दीजिये। इसे गिरवी रखने से आपके पास काफी पैसा हो जायेगा। मुझे कभी गहने नहीं नसीब हुए,

इसलिये मैं इसकी सही क़ीमत नहीं जानती, लेकिन मुझे विश्वास है कि आपको चार सौ क्राऊन तो मिल ही जायेंगे।"

"यह अंगूठी !" आयरीन चौंक पड़ी क्योंकि यह उसकी सगाई की अंगूठी थी, जिसे वह कभी नहीं उतारती थी। उसका नगीना बहुत क़ीमती था।

"क्यों नहीं, मैं आपको रसीद दे जाऊँगी, आप कभी जाकर गिरवी की दुकान से अपनी अंगूठी छुड़ा लाइयेगा। मुझ जैसी ग़रीब औरत इतनी कीमती अंगूठी लेकर क्या करेगी ?"

"तुम मुझे क्यों सता रही हो ? आह, मैं और अधिक बर्दाश्त नहीं कर सकती। क्या तुम्हारे दिल में लेशमात्र भी दया नहीं है ?"

"मुझ पर किसने दया दिखाई है ? मैं भूखों मर रही हूँ, फिर आप जैसी धनी महिला पर दया क्यों करूँ ?"

आयरीन कुछ कहने ही वाली थी कि उसे दरवाज़ा खुलने की आवाज़ सुनाई दी। उसके पति आज जल्दी दफ्तर से लौट आये थे। आयरीन ने घबराहट में अपनी अंगूठी उतारकर उस औरत को दे दी।

"डरिये मत ! मैं जा रही हूँ," वह औरत आयरीन के चेहरे की यन्त्रणा को देखते ही समझ गई थी कि वह उसके पति के कदमों की आहट है। उसने दरवाज़ा खोला और गृहस्वामी को अभिवादन करके बाहर चली गई।

आयरीन ने पति से कहा कि वह औरत किसी काम के सिलसिले में आई थी। कुछ क्षणों के लिये आयरीन के सर से बला टल गई थी। उसके पति ने इस मामले में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई और वह सीधे जाकर डाइनिंग रूम में लंच खाने बैठ गये।

आयरीन को अपनी उंगली खाली देखकर ऐसा अनुभव हुआ जैसे सब लोग मूक भाषा में पूछ रहे हों : "तुम्हारी अंगूठी कहाँ गई ?" वह बार-बार अपना हाथ छिपाने की कोशिश कर रही थी। पति का ध्यान बंटाने के लिये उसने बातचीत का विषय बदल दिया और बच्चों से

हँसी-मज़ाक करने लगी। उसने उत्तेजना द्वारा अपने परिवार के वातावरण में रंगीनी पैदा करनी चाही, लेकिन वह असफल रही। दोनों बच्चों से उसने छेड़खानी की, लेकिन वे चुप रहे। उसने उन्हें लड़ाने की कोशिश की, लेकिन वे एक-दूसरे से सटे रहे। ज़रूर वे उसके अभिनय को ताड़ गये थे। आख़िरकार आयरीन भी चुप हो गई।

सब लोग चुप थे। सिर्फ छुरी-कांटों की आवाज़ें आ रही थीं।

सहसा पति ने पूछा, "तुम्हारी अंगूठी कहां है?"

आयरीन पर मानो बिजली गिर पड़ी। उसने झूठ का आश्रय लेकर कहा, "मैं उसे साफ करने के लिये दे आई हूं, एक दो दिन बाद जाकर ले आऊँगी।"

लेकिन उसने परसों तक के लिये झूठ बोलकर शान्ति हासिल कर ली थी। उसके मन का भार हल्का हो गया। उसकी आत्मिक शक्ति बढ़ गई, वह जानती थी, परसों उसके भाग्य का फैसला होने वाला है।

इस ज्ञान से उसके उत्तेजित स्नायुओं को आराम मिला और वह संयत भाव से अपने जीवन का स्वयं मूल्य लगाने लगी। उसे आभास हुआ कि इतनी मानसिक पीड़ा के बाद भी अगर वह चाहे तो अपने जीवन को सुन्दर और सच्चा बना सकती है। पति से तलाक़ पाकर समाज में क्या वह मुंह दिखा सकेगी? इतनी शक्ति उसमें नहीं थी, इस थकाने वाले खतरनाक नाटक को जारी रखने की सामर्थ्य भी उसमें नहीं रही थी। पति, बच्चे, नर्स, नौकर सभी तो बेचैन थे। वह स्वयं अपनी आंखों में अपराधी थी। भागकर जान छुड़ाना असंभव था, वह जहाँ भी जायेगी, वह औरत प्रेत की तरह उसका पीछा करेगी, तो क्या वह अपना अपराध स्वीकार कर ले? असंभव! अब मुक्ति का एक ही रास्ता बच रहा था, जिस पर जाकर कोई यात्री वापिस नहीं लौटता।

अगले दिन आयरीन ने सब संदिग्ध खत जला डाले। अपना सामान ठीक किया—वह बच्चों से जानबूझ कर दूर रहना चाहती थी, ताकि

उन्हें देखकर फिर उसे जीवन से मोह न हो जाये। वह शाम को इस उम्मीद में बाहर निकली कि शायद उस औरत से मुकालात हो जाये। वह थक गई थी। दो घंटे निष्प्रयोजन इधर उधर भटकती रही। लेकिन वह सुख-दुख से ऊपर पहुंच चुकी थी। लोगों के चेहरे उसे निर्जीव और अर्थहीन मालूम देते थे।

क्षण भर के लिये उसे लगा कि उसका पति उसे देख रहा है, लेकिन फौरन वह आकृति डाक की लारी के पीछे छिप गई। आयरीन ने सोचा, कि वह फ्रित्ज़ नहीं हो सकता। वह इस समय कचहरी में व्यस्त होगा। उसे समय और स्थान का कोई ज्ञान न रहा। वह खाने के समय देर से घर पहुँची। फ्रित्ज़ भी देर से आया था और कुछ चिन्तित-सा मालूम होता था।

रात होने तक आयरीन पल-पल गिनती रही। उसे पहली बार इस बात का आभास हुआ कि जीवन से विदा लेने में बहुत समय नहीं लगता, और एक बार अगर इन्सान समझ जाये कि संसार की कोई चीज़ उसके साथ नहीं जायेगी, तो यात्रा बड़ी सुगम हो जाती है। उसकी आंखों से नींद उड़ गई, और वह उठकर यंत्रवत् शून्यभाव से सड़कों पर चक्कर काटने लगी। एक बार तो वह एक गाड़ी के नीचे आते-आते बच गई। ड्राईवर की डांट-फटकार का उसके ऊपर कोई असर ही नहीं हुआ। वह सोचने लगी कि अगर मोटर उसके ऊपर से गुज़र जाती तो कितना अच्छा होता, उसे सदा के लिये मुक्ति मिल जाती। वह कागज़ की नाव की तरह बिना सोचे-समझे आगे बढ़ती जा रही थी।

आयरीन को यह देखकर हैरानी हुई कि वह अपने प्रेमी के घर के पास आ पहुँची है। शायद यह भी भाग्य का इशारा हो। कम से कम कार्ल को तो उस औरत का पता मालूम होगा। उसे पहले क्यों नहीं याद आया? इस विचार से आयरीन का मन हल्का हो गया और उसके मस्तिष्क पर से अनिश्चितता का आवरण हट गया। उसने निश्चय

किया कि वह कार्ल को लेकर उस औरत के घर जायेगी और सदा के लिये इस मामले को रफ़ा-दफ़ा करवा देगी। हो सकता है, बड़ी रक़म लेकर वह शहर छोड़ने के लिये भी राज़ी हो जाये·····आयरीन को अफ़सोस हुआ कि उसने कार्ल के प्रति अभी तक इतनी निर्दयता क्यों दिखाई। उसे विश्वास था कि वह ज़रूर उसकी मदद करेगा। लेकिन उसे यह ख्याल पहले क्यों नहीं आया?·····इन अन्तिम क्षणों में·····अब वह ज़िन्दा रहेगी।

आयरीन ने घंटी का बटन दबाया लेकिन दरवाज़ा पूर्ववत् बन्द रहा। उसने फिर बटन दबाया। दरवाज़े के पीछे सरसराहट सी हुई। आयरीन खीज उठी। यह उसकी ज़िन्दगी और मौत का सवाल था। उसने ज़ोर से बटन दबाये रखा। भीतर घंटी बजती रही, बजती रही।

आख़िर सिटकनी हिली और किसी ने भीतर से झांक कर देखा। आयरीन ने आतुर स्वर में कहा:

"मैं हूँ।"

कार्ल ने दरवाज़ा खोला।

"आप·····श्रीमती वैगनर? मैं·····माफ़ कीजिये मैं नहीं सोचता था कि आप कभी यहां आयेंगी।" कार्ल ने सिर्फ़ बनियाइन और पाजामा पहन रखा था।

"मुझे तुमसे बहुत जरूरी काम है। तुम्हें मेरी मदद करनी होगी। मुझे भीतर आने दो।"

"लेकिन···लेकिन···मैं इस समय···व्यस्त हूँ।"

"क्या बकवास है? तुम्हें मेरी बात सुननी पड़ेगी। आख़िर यह तुम्हारा कसूर है। तुम मेरी अंगूठी मुझे वापिस दिला दो···या उस औरत का पता दे दो·····वह हर समय मेरा पीछा करती है···लेकिन आज वह मुझे कहीं नहीं दिखाई दी। सुना तुमने! तुम्हें मेरी मदद करनी होगी।"

कार्ल आंखें फाड़ कर आयरीन के चेहरे की ओर ताकने लगा।

"इतने भोले मत बनो ! वह औरत तुम्हारी पुरानी प्रेयसी है। मुझे यहाँ देखकर वह मेरे पीछे पड़ गई। उसी दिन से उसने मेरी ज़िन्दगी तबाह करनी शुरू कर दी। मैं इस सबसे तंग आ गई हूँ। मुझे मेरी अंगूठी वापिस चाहिये·····कल शाम तक···मुझे उस औरत का पता चाहिये।"

"लेकिन·····"

"तुम मेरी बात मानोगे या नहीं ?"

"लेकिन आप किस औरत की बात कर रही हैं·····?"

"तुम उसे नहीं जानते ? तो उसे मेरा नाम और पता कहाँ स मालूम हो गया ? क्या यह भी मेरा भ्रम है ?" यह कहकर वह जोर से हँसने लगी। कार्ल घबरा गया। आयरीन की आँखों में आज विचित्र चमक थी। वह आशंकित स्वर में बोला—

"श्रीमती वैगनर, आप शान्त होने की कोशिश करें। ज़रूर आपको ग़लत-फ़हमी हो गई है। मैं ऐसी किसी औरत को नहीं जानता। जब से मैं यहाँ आया हूँ, सिर्फ दो स्त्रियों से मेरा·····विश्वास कीजिए··· आपको ग़लत-फ़हमी हो गई है।"

"फिर मैं समझ लूँ कि तुम मेरी मदद नहीं करना चाहते ?"

"नहीं नहीं ! मैं भरसक तुम्हारी मदद करने के लिये तैयार हूँ।"

"अच्छा तो चलो उसके घर चलें।"

"किसके घर ?" कार्ल को शक हुआ कि आयरीन पागल हो गई है।

"उसी के घर, तुम चल रहे हो या नहीं ?"

"ज़रूर, ज़रूर। तुम्हें खुश करने के लिये मैं सब कुछ कर सकता हूँ।"

"अब तुम्हें पता लगा कि यह मेरे लिये ज़िन्दगी-मौत का सवाल है ?"

कार्ल अपनी हँसी न रोक सका, लेकिन उसने शिष्ट, अति शिष्ट भाषा में कहा

"मुझे खेद है श्रीमती वैगनर···इस समय मैं कोई ज़रूरी काम कर रहा हूँ·····संगीत का सबक···इस समय मेरा जाना···।"

"खूब ! तुम बनियान और पाजामा पहन कर अपनी विद्यार्थिनों को प्यानो सिखाते हो ! ओफ, झूठे ।"

आयरीन के दिमाग पर न जाने कैसा भूत सवार हुआ कि वह कार्ल को धकेल कर उसके कमरे में घुस गई । "मैं जानती हूँ वह औरत इस समय भी भीतर बैठी है और तुम उसकी ब्लैकमेल की कमाई के हिस्से-दार हो । मैं इस साज़िश की तह में जाकर छोड़ूंगी । मुझे अब किसी का डर नहीं है···।"

कार्ल ने उसे रोकने की कोशिश की, लेकिन वह उसके सोने के कमरे में घुसती चली गई ।

पलंग पर एक औरत बैठी थी जो उसे देखते ही उठ खड़ी हुई । औरत के कपड़े अस्त-व्यस्त दशा में थे । लेकिन यह वह औरत नहीं थी ।

आयरीन ने कार्ल से क्षमायाचना की, "माफ करो,···मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ ···कल आकर सारी बात समझाऊँगी···मेरा दिमाग चकरा गया है···कुछ समझ में नहीं आ रहा ।"

वह कार्ल से इस तरह बात कर रही थी, जैसे वह कोई अपरिचित हो । कोई देखने वाला यह विश्वास नहीं कर सकता था कि कुछ दिन पहले ये दोनों प्रेमी-प्रेमिका थे । आयरीन थकान से चूर हो गई थी । उसमें सोचने की शक्ति बाक़ी नहीं रही थी । वह आँखें बन्द करके सीढ़ियों से नीचे उतर गई, फाँसी की सज़ा पाये अपराधी की तरह ।

सड़क पर अंधेरा था । क्या वह औरत किसी कोने में छिपी खड़ी थी ? क्या वह आज प्रकट होकर उसे मुक्ति नहीं दिला सकती ? आयरीन ने चिर विस्मृत ईश्वर के आगे हाथ जोड़ कर प्रार्थना की—काश ! यह मुसीबत एक-दो महीने के लिये टल जाती ।·····उसके बाद वह देहात में जाकर चैन से रहेगी, जहाँ विशाल खेत, चरागाहें, और अंगूर की लतायें हैं । सड़क पर उसे एक छाया दिखाई दी । आयरीन को लगा

कि वह उसका पति था। लेकिन वह छाया उसे देखते ही गायब हो गई। आयरीन सोचने लगी, अगर पति ने उसे इस हालत में देख लिया तो·····? उसका रोम-रोम कांप उठा। उसे लगा कोई उसका पीछा कर रहा था। उस ने पीछे मुड़ कर देखा, वहाँ कोई नहीं था।

कैमिस्ट की दुकान—आयरीन भीतर गई और उसने डिस्पेन्सर को एक नुस्खा दिया। वह ग़ौर से भार तोलने की मशीन और दवा की शीशियों की ओर देख रही थी, दुकान में दवाइयों की गंध भरी थी। उसे याद आया कि वह बचपन में मां से ज़िद किया करती थी कि उसे कैमिस्ट की दुकान पर अकेली जाने दिया जाये क्योंकि उसे दवाइयों की गंध और रंगबिरंगी शीशियाँ बहुत पसंद थीं। वह सोचने लगी कि उसे मां से विदा लेनी चाहिये थी। इस खबर को सुनकर बूढ़ी मां को अपार दुःख होगा। डिस्पेंसर नीली शीशी में दवा उंडेल रहा था····· उस नन्हीं शीशी में मौत छिपी थी·····आयरीन का शरीर सुन्न पड़ गया। वह मुग्ध दृष्टि से शीशी की ओर देख रही थी जिसके ऊपर 'ज़हर' लिखा था। वह सोचने लगी·····।

"दो क्राऊन प्लीज़" डिस्पेंसर ने कहा।

आयरीन ने यन्त्रवत् बटुए में से पैसे निकाल कर दे दिए।

इसी समय किसी ने उसकी बांह को कसकर पकड़ लिया। आयरीन ने पीछे मुड़कर देखा। उसका पति ओंठ भींचकर उसके सामने खड़ा था, उसके माथे पर पसीने की बूंदें चमक रही थीं।

आयरीन को बेहोशी-सी आ गई, गिरने से बचने के लिए उसने काउन्टर का सहारा लिया। सहसा उसे ख्याल आया कि हो न हो, फ्रित्ज़ आज उसका पीछा करता रहा था।

"चलो" फ्रित्ज़ ने सख्ती से कहा।

आयरीन चुपचाप पति के साथ चल पड़ी। उसे अपनी यान्त्रिकता पर स्वयं हैरानी हो रही थी। रास्ते में उनमें कोई बातचीत नहीं हुई। वह शीशी अब भी फ्रित्ज़ के हाथ में थी। एक बार वह अपने माथे से पसीना

पोंछने के लिए खड़ा हो गया। आयरीन भी यन्त्रवत् रुक गई। फ्रित्ज़ से आँखें मिलाने का साहस उसमें नहीं था।

फ्रित्ज़ ने घर का दरवाज़ा खोला और आयरीन को भीतर जाने का इशारा किया। आयरीन के पैर लड़खड़ाने लगे। फ्रित्ज़ ने उसे सहारा दिया। पति के स्पर्श से वह सिकुड़ गई और जल्दी से सीढ़ियाँ चढ़कर अपने कमरे में चली गई। कमरे में अंधेरा था। फ्रित्ज़ ने शीशी की डाट खोलकर दवाई गिरा दी और शीशी को एक ओर फेंक दिया। आयरीन शीशी के टूटने की आवाज़ सुनकर कांपने लगी।

अब भी दोनों चुप थे। आखिर फ्रित्ज़ उठकर उसके समीप आ खड़ा हुआ। आयरीन को उसकी श्वास सुनाई दे रही थी। वह विस्फोट की प्रतीक्षा में खड़ी थी, लेकिन फ्रित्ज़ अब भी चुप था। आयरीन को पहली बार आभास हुआ कि वह फ्रित्ज़ को कठोर हृदय समझती थी, लेकिन उसका भय निर्मूल निकला।

"आयरीन, हम कब तक एक दूसरे को सताते रहेंगे ?"

आयरीन विक्षिप्त होकर सिसकने लगी। वह अशक्त होकर गिरने ही वाली थी कि फ्रित्ज़ ने सहारा देकर उसे बचा लिया।

"आयरीन, आयरीन !" वह सान्त्वनाभरे स्वर में बोला। उसने बार-बार आयरीन को पुकारा। उसकी आवाज स्नेहपूर्ण और कोमल होती गई, जैसे वह आयरीन को अपने स्नेह से शान्त करना चाहता हो। लेकिन आयरीन सिसकती गई। उसके मन की सारी व्यथा आज आंसुओं में बह निकली थी। फ्रित्ज़ ने उसे उठाकर पलंग पर लिटा दिया और उसके ऊपर कंबल ओढ़ा दिया। आयरीन का शरीर अब भी काँप रहा था।

फ्रित्ज़ ने आयरीन के हाथ अपने हाथों में ले लिए और उसके माथे और गर्दन को बार-बार चूमने लगा। आयरीन की आँखों से आंसुओं की झड़ी बह रही थी। फ्रित्ज़ को घबराहट हुई। उसने घुटनों के बल बैठकर आयरीन के चेहरे को अपने हाथों में लेकर कहा,

"आयरीन, मेरी प्यारी, अब तुम क्यों रो रही हो ? अब सब कुछ

खत्म हो गया। तुम बिल्कुल चिन्ता न करो। वह औरत अब कभी नहीं आयेगी·····"

आयरीन का शरीर फिर कांपने लगा। फ्रित्ज़ ने उसे अपनी बांहों में कस लिया। उससे आयरीन का यह दुख देखा नहीं जाता था। उसे लगा जैसे वह आयरीन का हत्यारा हो। उसने आयरीन को चूमकर समझाया,

"प्यारी आयरीन—वह औरत यहाँ कभी नहीं आएगी। मैं वचन देता हूँ। मुझे नहीं पता था कि तुम इतनी भयभीत हो जाओगी। मैं तो सिर्फ तुम्हें याद दिलाना चाहता था कि तुम एक पत्नी और मां हो। मैं तुम्हें वापिस अपने पास लाना चाहता था। जब मुझे तुम्हारे वहां आने-जाने की खबर मिली, तो तुम्हीं बताओ मैं क्या करता ? तुमसे साफ़-साफ़ कैसे कहता ? मेरा अनुमान था कि कुछ दिन बाद तुम स्वयं हमारे बीच लौट आओगी। लेकिन जब तुम नहीं लौटीं तो तुम्हें डराने के लिए मैंने उस औरत को तैनात किया। वह पुरानी एक्ट्रेस है। मैंने बड़ी मुश्किल से उसे इस काम के लिए राजी किया था। लेकिन अब मुझे महसूस हो रहा है कि यह मेरी ग़लती थी। आयरीन, मेरी प्यारी, मैं तुम्हें वापिस पाना चाहता था। इस बीच मैं कितनी बार इशारों से तुम्हें बता चुका हूँ कि तुम मेरे पास आ जाओ, मैं सब भूलने के लिए तैयार हूँ। लेकिन तुम मेरी बातों पर ध्यान न दे सकीं। विश्वास करो आयरीन, मैं तुम्हें इतने जोखिम में नहीं डालना चाहता था। मुझे भी इस बीच कम मानसिक यंत्रणा नहीं सहनी पड़ी। प्रतिपल तुम्हारी गति पर नियन्त्रण रखना·····मैं चाहता था, तुम लौट आओ, मेरी खातिर न सही, तो कम से कम बच्चों की खातिर ही सही। अब सब ठीक हो जाएगा। रोओ मत।"

आयरीन को लगा जैसे फ्रित्ज़ बड़ी दूर से बोल रहा हो। उसका मन सुन्न हो गया था। लेकिन उसे फ्रित्ज़ के चुम्बनों और स्नेह भरे शब्दों का कुछ-कुछ आभास हो रहा था। उसे लगा कि उसके सर में जोर से घंटियाँ बज रही हैं। उसके बाद क्या हुआ उसे कुछ नहीं पता। बहुत

देर बाद उसने आंखें खोलीं तो देखा कि फ्रित्ज़ उसके सिरहाने बैठा कातर दृष्टि से उसकी ओर देख रहा है और उसके बाल सहला रहा है। इसके बाद फिर उसकी आंखों के आगे अंधकार छा गया। लेकिन यह निद्रा थी।

आयरीन जब सोकर उठी तो धूप निकल आई थी। उसे एक विचित्र शान्ति का अनुभव हो रहा था, जैसे लम्बी बरसात के बाद धूप निकली हो। उसने सोचने की कोशिश की लेकिन उसके मन पर धुंध का आवरण छाया था। उसे महसूस हुआ जैसे वह आकाश में उड़ी जा रही है।

सहसा एक शीतल स्पर्श पाकर उसकी नींद खुल गई।

यह क्या ? उसकी उंगली में वही अंगूठी थी।.....रात की घटना की भीनी सुगंध अब भी उसके मन में बसी हुई थी। क्षण भर में वह सब कुछ समझ गई। पति के प्रश्नों और कार्ल की हैरानी का कारण उसकी समझ में आ गया। मन पर छाये बादल हट गये और उसने उस झीने जाल को देखा जिसमें उसने अपने आपको अकारण ही उलझा लिया था। लज्जा और संताप से उसका शरीर कांपने लगा, वह फिर सो जाना चाहती थी।

नर्सरी से बच्चों की आवाजें सुनाई देने लगीं। नन्हे मुन्ने सोकर उठे थे और चिड़ियों की तरह चहक रहे थे। उसे पहली बार मालूम हुआ कि रूदी की आवाज़ अपने पिता से कितनी मिलती है। वह मुस्करा दी। उसने इस अलौकिक सुख का आनन्द लेने के लिये आँखें बन्द कर लीं। उसके हृदय में अब भी टीसें उठ रही थीं, लेकिन यह उस ज़ख्म की टीसें थीं, जो अब भरने ही वाला था। वह जानती थी कि वह सदा के लिये भर जाएगा।

लैपोरेल्ला

क्रिसेन्शिया अन्ना एलेसीया फ़िन्कनह्यूवर उन्तालीस वर्ष की अधेड़ स्त्री थी। इन्सब्रुक के पर्वतीय प्रदेश की एक मामूली झोंपड़ी में उसका जन्म हुआ था (माँ-बाप की शादी से पहले ही)। सरकारी रजिस्टरों में उसका हुलिया इस तरह दर्ज था—'पेशा : नौकरानी। चेहरे-मोहरे से थकी-मांदी पहाड़ी खच्चर दिखाई देती है।' सचमुच उस बेचारी का निचला ओंठ खच्चर की तरह लटका हुआ था—लम्बा, नुकीला चेहरा और बिना पलकों की आंखें, उसके खुरदरे बाल—सभी खच्चरों जैसे थे। यहां तक कि उसकी चाल भी अड़ियल टट्टू की थी। टट्टुओं को सर्दी-गर्मी हर मौसम में भारी बोझ ढोना पड़ता है। दिन-भर काम करने के बाद क्रिसेन्शिया थकान से चूर हो जाती थी और बैठी-बैठी सो जाती थी, जिस तरह अस्तबल में बंधे टट्टू खड़े-खड़े सो जाते हैं। उसका जीवन पत्थर की तरह नीरस, कठोर और बोझिल था। सोचना उसके लिए एक अत्यन्त कष्टदायी क्रिया थी। उसके दिमाग़ की छलनी के छेद बंद रहते थे। लेकिन एक बार अगर कोई विचार उस छलनी में से छन जाने में सफल हो जाता था तो वह उसे कसकर जकड़ लेती थी। उसने कभी कोई अख़बार या धार्मिक पुस्तक नहीं पढ़ी थी। उसकी लिखाई भी उसकी ही तरह फूहड़ और बदसूरत थी। उसमें स्त्री-सुलभ आकर्षण नहीं था। उसकी आवाज़ भी उसके माथे, घुटनों और नितम्बों की तरह सख्त और फटी-सी थी—टायरोल वासी होते हुए भी उसकी आवाज़ जंग लगे फाटक

की तरह चटखती थी। यह सब स्वाभाविक था क्योंकि क्रिसेन्शिया कभी फ़ालतू बातें नहीं करती थी। कभी किसी ने उसे हँसी-मजाक करते नहीं देखा था। इस दृष्टि से वह निम्न स्तर के जानवरों से भी गई-बीती थी। आम जानवर अपनी भावनाओं को मुक्त-भाव से व्यक्त करते हैं।

अवैध सन्तान होने के कारण उसका पालन-पोषण एक अनाथालय में हुआ था और बारह बरस की उमर में उसे एक रेस्त्रां में नौकरी करनी पड़ी थी। अपनी मेहनत और ईमानदारी से वह धीरे-धीरे एक होटल की बावर्चिन बन गई थी। वह रोज तड़के पांच बजे उठती थी, होटल के सारे कमरों के फ़र्शों को रगड़-रगड़कर धोती थी, हर कमरे में आग जलाती थी, खाना तैयार करती थी, कपड़े धोती और उन पर इस्त्री भी करती थी। आधी रात के करीब जाकर वह कहीं फुर्सत पाती थी। लेकिन उसने होटल के मालिक से कभी एक दिन की भी छुट्टी नहीं मांगी। गिर्जे के अलावा वह कहीं नहीं जाती थी। रसोईघर का चूल्हा ही उसका सूरज था। ईंधन की लकड़ियों द्वारा ही उसने जंगलों का परिचय प्राप्त किया था।

उसे मर्दों में कभी दिलचस्पी नहीं रही। शायद पच्चीस साल मशीन की तरह काम करते-करते वह सचमुच निर्जीव मशीन बन गई थी, जिससे उसका रहा-सहा आकर्षण भी जाता रहा था। उसे इश्क-मुहब्बत से सख्त नफ़रत थी। उसे सबसे अधिक सुख मिलता था पैसा जमा करने में। इस मामले में वह पूरी देहातिन थी। उसे डर था कि बुढ़ापे में उसे कहीं किसी पर आश्रित न रहना पड़े। मांग के रोटी खाने की अपेक्षा उसे मर जाना पसन्द था।

अपनी इस संग्रह-वृत्ति के कारण ही सैंतीस बरस की यह फूहड़ औरत अपनी जन्मभूमि छोड़कर दूसरे प्रान्त में चली आई थी। किसी एम्पलॉयमेंट एजेन्सी की एक मैनेजर गर्मी की छुट्टियां बिताने टायरोल आई थी। क्रिसेन्शिया की हाड़तोड़ मेहनत को देखकर वह दंग रह गई। उसने कहा कि वियना में जाकर वह दुगुने पैसे कमा सकती है।

क्रिसेन्शिया तुरन्त राजी हो गई।

वह अपनी बेंत की टोकरी घुटनों पर रखे ट्रेन में सफ़र कर रही थी। इस टोकरी में उसकी जीवन-भर की कमाई थी। डिब्बे में बैठे यात्रियों ने क्रिसेन्शिया से शिष्टतापूर्वक कहा, "श्रीमती जी, आप थक गई होंगी। लाइये टोकरी को सामान की सीट पर रख दें।" लेकिन उस खूसट औरत ने साफ इन्कार कर दिया, क्योंकि वह सब शहरियों को चोर और दग़ाबाज़ समझती थी। वियना में कुछ दिन तो वह अकेली बाज़ार जाने से डरती रही, क्योंकि सड़कों पर इतनी भीड़ उसने कभी नहीं देखी थी। लेकिन एक बार रास्ते से परिचित होने के बाद वह अकेली ही सब्जियों से भरी टोकरी उठाकर बाज़ार से घर आ जाती थी। वियना में भी उसे झाड़ू देने, फ़र्श धोने और कमरे गर्म करने का कार्य करना पड़ता था। रात को वह जानवरों की तरह मुंह खोलकर खुर्राटे भरती थी। उसे यह नौकरी पसन्द आई या नहीं, यह जानना कठिन था। शायद उसने स्वयं भी कभी इस बारे में नहीं सोचा था। वह अब भी जी-जान से मेहनत करती थी। सब आदेशों का उत्तर केवल 'हां' में या कंधे झटकाकर देती थी। घर की बाकी नौकरानियों से उसका बिल्कुल मेल-जोल न था। यहाँ तक कि उनकी छेड़छाड़ का भी वह कोई जवाब न देती थी। लेकिन एक बार जब एक नौकरानी ने क्रिसेन्शिया के देहाती उच्चारण की नकल की तो क्रिसेन्शिया ने चूल्हे में से एक जलती हुई लकड़ी उठाई और उस छोकरी के पीछे भागी। उस दिन के बाद किसी को छेड़छाड़ करने की हिम्मत नहीं हुई।

हर इतवार की सुबह को क्रिसेन्शिया अपना भरकम देहाती घाघरा और साया पहनकर गिर्जे जाती थी। एक बार छुट्टी के दिन वह वियना की सैर करने गई। कंजूसी की वजह से उसने ट्राम में चढ़ने की बजाय पैदल चलना उचित समझा। इधर-उधर भटकने के बाद वह डैन्यूब नदी के किनारे पहुँच गई। नदी की धारा को कुछ क्षण देखने के बाद वह लौट आई। जरूर वह सैर उसे नापसन्द आई होगी, क्योंकि उस दिन के

बाद से वह कभी सैर करने नहीं गई। इतवार के दिन वह सीने-पिरोने का काम करती या अपनी कोठरी की खिड़की में से बाहर झांकती रहती। वियना में आकर भी उसकी जिन्दगी की पनचक्की की रफ़्तार वैसी ही रही। फ़र्क सिर्फ़ इतना पड़ा कि हर महीने उसे दो की बजाय चार नीले नोट तनख्वाह में मिलते थे। वह इन नोटों की अच्छी तरह परीक्षा करने के बाद, उनकी सिलवटें निकालती थी और उन्हें पीली काठ की उस संदूकची में बन्द कर देती थी, जिसे वह गांव से अपने साथ लाई थी। इसी संदूकची में उसके जीवन का समूचा उद्देश्य छिपा था। रात को वह संदूकची की चाबी अपने सिरहाने छिपाकर सोती, दिन में चाबी कहां रहती थी, यह कोई नहीं जानता था।

ऐसी थी वह औरत। (मनुष्य स्वभाव से वंचित होते हुए भी, आखिर थी तो वह एक औरत ही।) शायद कोई और औरत युवक बैरन वान लेडरशीम के विलक्षण परिवार में इतने दिनों तक टिक भी नहीं सकती थी, क्योंकि मालकिन का स्वभाव बड़ा झगड़ालू था। वह विक्षिप्त होकर नौकर-नौकरानियों को गालियां देती थी, जिससे तंग आकर नौकर भाग जाते थे। बैरोनेस एक धनी उद्योगपति की बेटी थी। अधेड़ होने पर भी वह कुंवारी थी, अकस्मात् एक दिन पहाड़ पर उसकी भेंट बैरन से हुई। बैरन आयु में उससे कई बरस छोटा था, और गले तक कर्ज़ में डूबा था। लेकिन वह सुन्दर और सभ्य था। वह धन के लालच से शादी कराने के लिये तैयार हो गया। लड़की के माँ-बाप किसी धनी दामाद की तलाश में थे, लेकिन बेटी ने उनकी सलाह के बिना ही बैरन से शादी कर ली। शादी के एक महीने बाद ही बैरोनेस ने अपनी तक़दीर को कोसना शुरू कर दिया। बैरन को शादी के बाद भी अपनी पत्नी के बजाय परायी औरतों से छेड़छाड़ करना भाता था। उधर उसके कर्ज़ भी बढ़ते जा रहे थे।

बैरन सब लम्पट व्यक्तियों की तरह हँसमुख और सिद्धान्तहीन था। वह अपने खर्चों पर नियन्त्रण लगाना क्षुद्रता समझता था। शादी के

बाद भी वह खुले दिल से पैसा लुटाता रहा। बैरोनेस अपने घर को सुघड़, नियंत्रित ढंग से चलाना चाहती थी, जैसा उसने अपने मायके में देखा था। बैरन के सामन्तशाही दिल को यह बनिग्रापन बहुत अखरता था। जब बैरोनेस ने पति के रेस के घोड़ों का अस्तबल बनाने की स्कीम का विरोध किया, तो बैरन ने इस 'कमीनेपन' के बदले में बैरोनेस के प्रति निष्ठुरता दिखानी शुरू कर दी, लेकिन बड़े शिष्ट ढंग से। इस व्यवहार से बैरोनेस क्षुब्ध हो उठी। वह बैरन को उलाहने देती, बैरन शान्तिपूर्वक बैठा सुनता रहता और प्रवचन समाप्त होते ही सिगरेट सुलगा कर बाहर चला जाता। इस शिष्ट निष्ठुरता ने बैरोनेस को एकदम विक्षिप्त बना दिया। वह अपने मन की भड़ास नौकरों-चाकरों पर निकालने लगी। पिछले दो बरसों से बैरोनेस ने सोलह नौकर बदले थे। एक बार तो एक नौकर को ज़ख्मी करने के अपराध में उसे भारी मुआवज़ा भी देना पड़ा था—क्योंकि उसे अपनी बदनामी का डर था।

केवल क्रिसेन्शिया ही ऐसी नौकरानी थी, जिस पर गाली-गलौज के इस झंझावात का कोई असर नहीं होता था। वह मालकिन के सामने शान्तभाव से इस तरह खड़ी रहती जैसे वर्षा में टट्टू खड़ा रहता है। वह पति-पत्नी के झगड़े में कभी दिलचस्पी न लेती। नौकरों के आने-जाने से उसे कोई सरोकार न था, क्योंकि वह अपना खाली समय अपनी कोठरी में बिताती थी। वह बैरोनेस की गाली-गलौज, हिस्टीरिया के दौरों और पागलपन से रत्ती भर भी विचलित नहीं होती। दरअसल उसे बाज़ार आने-जाने और रसोईघर के काम से फ़ुर्सत ही कम मिलती थी। वह औरत कोड़े की तरह कठोर और हृदयहीन थी। दो साल वियना में रह कर भी उसकी आदतें देहाती ही रहीं। इसमें शक नहीं कि उसकी संदूकची में नोटों की ढेरी एक इञ्च और ऊपर उठ आई थी, और दो साल बाद जब उसने हाथों को थूक लगाकर नोटों को गिना था तो उसे अपना चिरस्वप्न पूरा होता दिखाई दिया था। नक़द एक हजार।

लेकिन भाग्य कठोर से कठोर चट्टानों में भी सूराख़ कर लेता है।

क्रिसेन्शिया के साथ भी एक ऐसा ही मज़ाक हुआ। उन दिनों सरकारी जनगणना हो रही थी। चूंकि बैरोनेस के सब नौकर-नौकरानियाँ अनपढ़ थे, इसलिये बैरन ने स्वयं सरकारी कागजों की खानापूरी करने का निश्चय किया। क्रिसेन्शिया को भी स्टडीरूम में बुलाया गया। बैरन ने उसका पूरा नाम, आयु और जन्मस्थान पूछा। जब उसे मालूम हुआ कि क्रिसेन्शिया टायरोल की रहने वाली है तो बैरन ने उसके बारे में और पूछताछ की। बैरन एक बार शिकार करने टायरोल गया था। उसके साथ फिन्कनह्य बर नाम का एक गाईड भी था, जो क्रिसेन्शिया का चचा था। बैरन की उस गाईड से अच्छी-खासी दोस्ती हो गई थी। बातचीत के दौरान में बैरन ने बताया कि एक बार वह उस सराय में ठहरा था जहाँ क्रिसेन्शिया पहले काम करती थी। उस सराय में जैसा हिरन का गोश्त पका था, वैसा उसे बाद में कभी नहीं नसीब हुआ। ये बातें बड़ी साधारण थीं, लेकिन भाग्य की लम्बी बाहें इन साधारण बातों को जोड़ कर असाधारण बना देती हैं। क्रिसेन्शिया अपनी जन्मभूमि से परिचित व्यक्ति को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। खुशी से उसका चेहरा चमकने लगा और वह कृतज्ञतापूर्वक बैरन के आगे बार-बार सर झुकाने लगी। जब बैरन ने देहाती उच्चारण में उससे मज़ाक करना शुरू किया और देहाती ढंग से उसके चूतड़ों को थपथपा कर कहा, "जाओ मेरी अच्छी सेन्जी, मुझे बहुत काम करना है—लेकिन अपने साथ ये दो सिक्के लेती जाओ, क्योंकि तुम टायरोल की रहने वाली हो !" तो क्रिसेन्शिया इस उदारता से हक्की-बक्की रह गई।

बैरन ने ये बातें किसी भावुकता से प्रेरित होकर नहीं कहीं थीं, जिससे क्रिसेन्शिया के अधेड़ कौमार्य में खलबली मचती। लेकिन उसके नीरस, निश्चल जीवन की तलैया को बैरन के शब्दों ने पत्थर के समान गिरकर तरंगित कर दिया और ये तरंगें बढ़कर क्रिसेन्शिया की चेतना की परिधि से टकराने लगीं। वर्षों के बाद किसी ने उस पत्थर की चट्टान से आत्मीयता दिखाई थी। वह व्यक्ति उसकी जन्मभूमि के चप्पे-चप्पे से

परिचित है, यहां तक कि उसने कभी क्रिसेन्शिया के हाथों से पका हिरन का गोश्त भी खाया था ! फिर थपथपाहट का वह भूकम्प, जिसने उसके कुंठित नारीत्व को झकझोर दिया था—देहाती भाषा में यह प्रणय-संकेत माना जाता है। क्रिसेन्शिया कभी सपने में भी यह सोचने का साहस नहीं कर सकती थी, कि कोई प्रतिष्ठित सुन्दर पुरुष उसके ठूंठ शरीर की कामना कर सकता है। लेकिन उस स्पर्श ने उसके रोम-रोम में आन्दोलन मचा दिया।

इस घटना ने उस औरत के व्यक्तित्व में एक अस्पष्ट परिवर्तन ला दिया। जिस तरह स्वामिभक्त कुत्ता हजारों आदमियों में से अपने मालिक को पहचान लेता है, उसी तरह क्रिसेन्शिया बैरन के प्रति अतीव श्रद्धा करने लगी। स्वामिभक्त कुत्ता परछाईं की तरह अपने मालिक के साथ रहता है, दुलार पाने पर कृतज्ञता से दुम हिलाता है, और मालिक के हर आदेश का दास्यभाव से पालन करता है। क्रिसेन्शिया के मन की संकीर्ण कंदराओं में जहां अभी तक सिर्फ आधे दर्जन शब्दों का ही प्रवेश था—जैसे पैसा, बाज़ार, रसोई, गिर्जा, बिस्तर—सहसा एक नया विचार पाने के लिये मचलने लगा—बल्कि यों कहिये पहले सब बाशिन्दों को धकेल कर वह विचार क्रिसेन्शिया के मन के भीतर जा बैठा। क्रिसेन्शिया का देहाती मन किसी भी 'नवीनता' को इतनी जल्दी प्रश्रय देने के लिये तैयार न था, इसलिये कुछ दिनों तक उसने इस 'नई चीज़' को सर न उठाने दिया। लेकिन बाद में उसके भीतर परिवर्तन के लक्षण प्रकट होने लगे। उदाहरण के लिये वह बैरन के कपड़ों और जूतों पर बड़ी मेहनत से ब्रुश फेरने लगी थी। बैरोनेस के कपड़ों और जूतों की सफाई में उसे कोई दिलचस्पी न थी। बैरन के कदमों की आहट सुनते ही वह भागी हुई हाल में आती थी और बैरन का हैट, कोट और छड़ी खूंटी पर टांग देती थी। रसोईघर में वह पहले से भी अधिक मेहनत करने लगी थी और हिरन के गोश्त की तलाश में वह रास्ता पूछकर बड़े बाज़ार तक पहुँच जाती थी। जीवन में पहली बार उसका ध्यान अपने कपड़ों

और शरीर की सफाई की ओर गया।

दो हफ्ते बाद इस नये पौधे की कोंपलें फूट निकलीं। कुछ हफ्तों बाद उसमें रंगत भी आने लगी, जिसका नतीजा यह हुआ कि क्रिसेन्शिया को बैरोनेस से सख्त नफ़रत हो गई, क्योंकि वह बैरन की पत्नी होते हुए भी बैरन की इज्ज़त नहीं करती थी। एक बार झगड़े के दौरान में बैरोनेस ने पति के बारे में बड़े अश्लील और अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया लेकिन क्रिसेन्शिया बैरन की शिष्टता से अत्यन्त प्रभावित हुई और उसे बैरोनेस के झगड़ालू स्वभाव से तीव्र घृणा हो गई थी। उसे बुलाने के लिए बैरोनेस को कई बार घंटी बजानी पड़ती थी, एक बार से अब काम नहीं चलता था। क्रिसेन्शिया जब मालकिन के सामने जाती तो अड़ियल टट्टू की तरह खड़ी रहती, और चुपचाप आदेश की प्रतीक्षा करती रहती। बैरोनेस उसकी चुप्पी से खीजकर पूछती, "तुमने मेरी बात सुनी या नहीं ?" "हाँ हाँ सुन ली !" क्रिसेन्शिया देहाती ढंग से उत्तर देती। जब बैरोनेस थियेटर जाने की तैयारी करती तो क्रिसेन्शिया उसके गहनों की दराज की चाबी कहीं इधर-उधर फेंक देती। बैरोनेस को अगर कोई टेलीफ़ोन करता तो क्रिसेन्शिया कभी यह सन्देश बैरोनेस तक न पहुँचाती। डांटने-डपटने पर शांत स्वर में कहती, "मैं भूल गई थी।" उसने कभी मालकिन की ओर सिर उठाकर नहीं देखा था, शायद उसे डर था कि कहीं उसके मन में छिपी घृणा आँखों के रास्ते से बाहर न निकल पड़े।

क्रिसेन्शिया की इस शिष्ट-घृष्टता से बैरोनेस की विक्षिप्ति और भी बढ़ गई। इतने बरस अविवाहित रहने के कारण बैरोनेस का मिजाज़ चिड़-चिड़ा हो गया था, जिसकी कसर वह नौकरों पर निकालती थी। रात को सोने के लिए वह दवाइयाँ खाती थी, जिससे उसकी हालत और भी बिगड़ गई थी। लेकिन उस बेचारी से हमदर्दी करने वाला कोई न था। कोई उसे संयमित और स्वस्थ जीवन की राह नहीं दिखाना चाहता था। एक स्नायुविशेषज्ञ ने उसे एक सैनेटोरियम में दो महीने जाकर आराम करने

की सलाह दी थी। बैरन ने जब इस प्रस्ताव का जोर-शोर से समर्थन किया तो बैरोनेस ने जाने से इन्कार कर दिया। बहुत समझाने-बुझाने पर वह राजी हो गई और उसने अपनी निजी नौकरानी को साथ ले जाने का निश्चय किया।

क्रिसेन्शिया ने जब सुना कि बैरन मकान में अकेला ही रह जायेगा तो उसे मानो कोई अनमोल खजाना मिल गया। उसका फूहड़पन फौरन काफ़ूर हो गया और वह चैतन्य हो गई। जब बैरोनेस जाने लगी तो उसने फुर्ती से बैरोनेस का सामान इकट्ठा किया और कुली की तरह बड़े-बड़े सन्दूकों को कंधे पर उठाकर टैक्सी तक पहुँचा आई। रात को जब बैरन पत्नी को गाड़ी में चढ़ाकर स्टेशन से लौटा तो उसने क्रिसेंशिया के हाथों में अपना हैट और ओवरकोट थमाते हुए संतोष भरे स्वर में कहा, "शुक्र है, कुछ दिनों के लिए मुसीबत से जान छूटी।" जैसा हम पहले कह चुके हैं, क्रिसेन्शिया निम्नस्तर के पशुओं की तरह मूक रहती थी, लेकिन आज उसके होंठ एक विचित्र मुस्कान से सजीव हो उठे थे। बैरन को सहसा ध्यान आया कि एक तुच्छ नौकरानी के सामने उसने इतनी बेतकल्लुफी से क्यों बात की। वह चुपचाप अपने शयन-कक्ष में चला गया।

लेकिन बैरन का यह संकोच क्षणिक था। अगले ही दिन से वह क्रिसेंशिया की मौजूदगी में निश्चिन्त रहने का आदी हो गया। बैरोनेस के जाते ही घर का वातावरण शान्त हो गया था। बैरन को टोकने और जवाबतलब करने वाला कोई न था। रात को जब वह देर से लौटता तो क्रिसेन्शिया बड़े आदर से उसका स्वागत करती। आजकल वह पहले से भी अधिक फुर्तीली हो गई थी। वह तड़के ही उठकर बैरन के कमरे के फर्नीचर को पोंछ-रगड़कर शीशे की तरह चमका देती, स्वादिष्ट खाना पकाती और बैरन को उस नये डिनर-सेट में खाना परसती, जो सिर्फ खास मौकों पर ही बाहर निकाला जाता था। सहृदय बैरन नौकरानी के इस सेवा-भाव को देखकर अपनी कृतज्ञता प्रकट किये बगैर न रह सका।

उसने मुक्तहृदय से क्रिसेन्शिया के बनाये हुए खाने की प्रशंसा की। दो दिन बाद बैरन के जन्म-दिन के अवसर पर क्रिसेन्शिया ने बड़ी मेहनत से एक केक तैयार किया। और उस पर सुन्दर अक्षरों में बैरन का नाम बनाया। बैरन ने मुस्कराकर कहा, "क्रिसेन्शी, तुम मेरी आदत बिगाड़ रही हो। जब बैरोनेस लौटेंगी तब मुझे कौन इतना बढ़िया खाना खिलायेगा ?"

जो लोग सामन्ती व्यवस्था से परिचित हैं, वे अच्छी तरह जानते हैं कि युद्ध से पूर्व आस्ट्रिया के जमींदार अपने नौकरों से कितना खुला व्यवहार करते थे। दरअसल इस व्यवहार में उदारता की अपेक्षा आभिजात्य की गंध अधिक थी। वे अपनी जगह पहचानते थे, इसलिए उनकी जबान की लगामें ढीली हो गयी थीं। यहाँ तक कि गैलिशिया का ड्यूक अपने अर्दली को भेजकर चकले से किसी वेश्या को बुलवाता था, तो अपनी कामपूर्ति के बाद उसे अर्दली को सौंप देता था। धनी और प्रतिष्ठित लोगों को लोकलाज छू तक नहीं गई थी। रईस लोग पढ़े-लिखे लोगों में उठने-बैठने की बजाये अपने नौकरों की सोहबत अधिक पसन्द करते थे। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मालिक नौकरों को बराबरी का दर्जा देते थे। मालिक मालिक थे और नौकर नौकर ! इसीलिए बैरन को एक देहाती नौकरानी के आगे अपनी पत्नी की निन्दा करने में संकोच नहीं हुआ। बैरन जानता था कि नौकरानी उसे धोखा नहीं देगी, लेकिन उसके शब्दों का उस बेचारी के सरल मन पर क्या प्रभाव पड़ा है, इसकी उसे खबर न थी।

कुछ दिन तक बैरन ने अपनी आदतों पर संयम रखने की कोशिश की, लेकिन क्रिसेन्शिया का विश्वास पाकर उसने अपने ही घर में छैलापन शुरू कर दिया। एक दिन शाम को उसने क्रिसेन्शिया को टेलीफ़ोन किया और कहा कि वह रात को देर से लौटेगा और दो आदमियों का खाना तैयार रहना चाहिए।

"जो हुक्म जनाब !" क्रिसेन्शिया ने उत्तर दिया। बैरन उसे निरी

मूर्खा समझता था, लेकिन आधी रात गये जब वह ऑपेरा की एक नर्तकी के साथ घर लौटा तो उसने देखा कि खाने की मेज़ पर फूलों के गुलदस्ते सजे हैं और सोने के कमरे में दो की बजाय एक पलंग रखा है, खूंटी पर उसकी पत्नी का गाऊन लटका है और पलंग के सामने एक जोड़ी सलीपर रखे हैं। बैरन को यह देखकर बड़ी हंसी आई। वह क्रिसेन्शिया को विश्वासपात्र समझने लगा। अगले दिन सुबह उसने घंटी बजाकर नौकरानी को अपने सोने के कमरे में बुलाकर नाश्ता लाने के लिए कहा।

इसी समय क्रिसेन्शिया का नये सिरे से नामकरण हुआ। बैरन की नई प्रेमिका दुलार से बैरन को "डॉन जुआन[1]" कहकर पुकारती थी। अगली बार जब वह बैरन के साथ आई तो उसने मज़ाक करते हुए कहा, "डॉन जुआन! ज़रा अपनी लैपोरेल्ला को तो बुलाओ!"

बैरन को यह नाम बहुत पसन्द आया। इसलिए कि वह उस देहाती फूहड़ औरत के सर्वथा अनुपयुक्त था। उस दिन के बाद बैरन इस नौकरानी को लैपोरेल्ला के नाम से पुकारने लगा। क्रिसेन्शिया पहले तो इस नये नाम से चौंकी, किन्तु बाद में उसने कृतज्ञता-पूर्वक इसे अपनी प्रशंसा समझ कर स्वीकार कर लिया। उस बेचारी को डॉन जुआन की कहानी तो मालूम न थी, लेकिन अपने स्वामी द्वारा एक सुन्दर नाम दिये जाने पर उसके अहंकार को बड़ी तृप्ति मिली। "लैपोरेल्ला" की पुकार सुनते ही वह अपने घोड़े जैसे दाँत निकालकर हँस देती और तुरन्त मालिक का आदेश सुनने के लिए दौड़ी जाती। यह नाम उसे मज़ाक में दिया गया था और उस पर बिल्कुल नहीं फबता था, लेकिन बायरन की नायिका लैपोरेल्लो की तरह क्रिसेन्शिया भी बैरन की विलास-क्रीड़ाओं के साधन जुटाने में दूती का काम करती थी। स्वयं प्रेम से

---

१. कवि बायरन की कविता का नायक जो अपनी नैतिक उच्छृंखलताओं के लिये बदनाम है। लैपोरेल्लो उसकी एक सुन्दर प्रेयसी का नाम था।

वंचित होने पर भी उसे अपने मालिक की कामुकता पर गर्व था । वह प्रतिदिन बैरोनेस के पलंग पर किसी नयी प्रेयसी को देखकर प्रसन्न होती थी, या उसे अपने स्वामी की प्रेम-लीला की कल्पना में सुख मिलता था, यह कहना कठिन है । लेकिन वह इन दिनों बड़ी खुश थी, इतना तो निश्चित है। वर्षों के कठिन परिश्रम ने उसके चेहरे को शुष्क और नारीत्वहीन कर दिया था, लेकिन बैरोनेस के पलंग को अन्य स्त्रियों द्वारा अपवित्र होते देखकर उसके चेहरे पर अश्लील मुस्कान फैल जाती थी । बैरन का विश्वास और घर में स्वच्छन्द वातावरण पाकर क्रिसेन्शिया का सोया नारीत्व जाग उठा था । वह सचमुच लैपोरेल्ला बन गयी थी । उसमें अपूर्व साहस पैदा हो गया था। यहाँ तक कि वह त्रिया-चरित्र में भी पारंगत हो गई थी । वह दरवाज़े की ओट में खड़ी होकर बैरन के कमरे में से आने वाली खुसर-फुसर को सुनती और कभी-कभी काम के बहाने से निधड़क भीतर भी हो आती । जड़ मशीन अब जीवित प्राणी बन गयी थी । अब वह पड़ौस की नौकरानियों से दोस्ती गांठती, डाकिये के साथ हँस-हँसकर मज़ाक करती और कुंजड़िनों के साथ साग-सब्ज़ी के मोल-तोल के अलावा और विषयों पर भी बातचीत करती । रात को जब नौकरों के क्वार्टरों की बत्तियाँ बुझ जातीं तो उसके कमरे में से गुनगुनाने की आवाज़ सुनाई देती । वह ग्वालिनों के लोकगीत गाया करती थी । उसके स्वर टूटे-फूटे थे, जैसे कोई बच्चा बहुत दिनों बाद पियानो बजाने का अभ्यास कर रहा हो । उसके इस प्रयास से सुनने वालों के मन में खीज के साथ-साथ सहानुभूति भी पैदा होती थी । किशोरावस्था में कभी वह ऐसे गीत गाया करती थी—आज इतने वर्षों के बाद उसकी आत्मा का संगीत फूट निकला था ।

लेकिन बैरन क्रिसेन्शिया के इस कायाकल्प से बेखबर था । अपनी परछाईं को देखने की फुर्सत किसे होती है ? हम अनमने भाव से अपनी परछाईं को पैरों तले रौंदते आगे बढ़ जाते हैं, कभी परछाईं हम से आगे निकल जाती है (अनजानी आकांक्षा की तरह) । लेकिन यह परछाईं

हमारे व्यक्तित्व का ही स्वरूप और व्यंग्य-चित्र है, यह क्या हमने कभी सोचा है ? बैरन ने केवल इतना देखा कि क्रिसेन्शिया पहले से अधिक मेहनती और सेवा-परायण हो गई है। उसकी मूक अर्चना स्वीकार करने में बैरन को कोई आपत्ति न थी। वह कभी-कभी, जैसे कुत्ते को पुचकारा जाता है, नौकरानी की तारीफ़ में दो-चार शब्द कह देता, उससे मज़ाक करता, और कभी उसके कान ऐंठता और इनाम में एकाध सिक्का दे डालता। उसके द्वारा दिए गये थियेटर के रद्दी टिकट क्रिसेन्शिया की अमूल्य निधि बन गए थे, जिन्हें वह अपनी सूंदकची में संभाल कर रखती थी। बैरन का विश्वास पाकर क्रिसेन्शिया का दास्यभाव और अधिक बढ़ गया था। वह बैरन की हर इच्छा को पूरी करने के लिए आकुल रहती थी। वह ज़िन्दगी को बैरन की आंखों से देखने लगी थी, और बैरन की प्रेमलीलाओं में उसे भी सुख मिलने लगा था। बैरन के साथ किसी नई लड़की को देखकर उसका चेहरा खुशी से चमकने लगता। जिस दिन बैरन रात को अकेला लौटता, उस दिन वह भी निराश हो जाती। अब हाथों के साथ ही साथ उसका दिमाग़ भी काम करने लगा था, और उसकी आँखों में मूर्खता की जगह समझदारी झलकती थी। बोझ से दबा हुआ पशु इन्सान बन गया था। उसके ओंठ अब भी भिंचे रहते थे, लेकिन वह पहले से अधिक खतरनाक, चालाक और ईर्ष्यालु हो गई थी।

एक बार शाम को जब बैरन अकेला घर लौटा तो उसे रसोईघर के दरवाज़े के पीछे खुसुर-फुसुर सुनाई दी। इतने में दरवाज़ा खुला और लैपोरेल्ला घबरायी हुई बाहर निकलीं। उसने आँखें नीची करते हुए कहा—

"श्रीमान्, मेरी धृष्टता क्षमा हो, रसोईघर में नानबाई की लड़की बैठी है। वह खूबसूरत और जवान है, आप से मिलकर उसे बड़ी खुशी होगी।"

बैरन चकित होकर नौकरानी के मुंह की ओर ताकने लगा। कुछ देर बाद उसके भीतर वासना जागृत हुई और उसने उत्तर दिया—

"ज़रा देखूँ, तुम्हारी सुन्दरी को !"

सुनहले बालों वाली सोलह बरस की एक लड़की हँसती हुई रसोई-घर से बाहर निकली। लैपोरेल्ला ने उसे बैरन के पौरुष की कहानियाँ सुनाकर यहाँ आने के लिए राज़ी कर लिया था। बैरन उस लड़की की खूबसूरती पर रीझ गया और उसने उसे अपने कमरे में चाय पीने का निमन्त्रण दिया। लड़की घबराकर लैपोरेल्ला की ओर देखने लगी, लेकिन लैपोरेल्ला वहाँ से ग़ायब हो गई थी। उत्तेजना और शर्म से लड़की का चेहरा लाल हो गया। मकड़े ने मक्खी से कहा, "चलो मेरे घर के भीतर !"

लेकिन जीव-जगत में आमूल परिवर्तन इतनी शीघ्र नहीं होते। अपने नये अनुभवों के बावजूद भी क्रिसेन्शिया की कल्पनाशक्ति निम्न स्तर के पशुओं से अधिक न बढ़ सकी थी। वह दूरदर्शिता के बजाय, तत्कालिक सहज वृत्तियों से काम लेती थी। बैरन की सेवा में वह इतनी दत्तचित्त हो गई थी कि उसे बैरोनेस की अनुपस्थिति का ज्ञान भी न रहा था। एक दिन सुबह जब बैरन ने आकर खबर दी कि अगले दिन दोपहर को बैरोनेस लौटने वाली है तो क्रिसेन्शिया के हृदय पर मानो वज्रपात हुआ। वह मुँह खोलकर इस तरह खड़ी रही मानों किसी ने उसके सीने में छुरा भोंक दिया हो। बैरन ने उसकी चुप्पी देखकर कहा,

"क्रिसेन्शी, देखता हूँ तुम्हें मालकिन के आने की खबर सुनकर बिल्कुल खुशी नहीं हुई। लेकिन हम लोग कुछ नहीं कर सकते।"

यह सुनते ही क्रिसेन्शिया की आत्मा तरंगित हो उठी। उसके रक्त-हीन गाल आवेश से सुर्ख हो गए—उसके ओंठ फड़कने लगे, लेकिन वह केवल इतना ही कह पाई,

"क्यों नहीं·····लेकिन···लेकिन इन्सान को·····"

उसकी आवाज़ भर्रा गई थी और उसका चेहरा किसी अज्ञात भावना से विकृत हो गया था, जिसे देखकर बैरन चौंक उठा। वह चुप-चाप रसोई में आकर तांबे के एक पतीले को इतने ज़ोर से रगड़ने लगी

कि लगता था वह अपनी उंगलियां छील डालेगी ।

बैरोनेस के आते ही घर का शान्तिमय वातावरण कलह से कलुषित हो उठा । झिड़कियों, गालियों का सिलसिला फिर जारी हो गया । पता नहीं किसी पड़ोसी ने बैरोनेस को उसके पति की 'करतूतों' के बारे में खत लिखा था, पति के स्नेह-हीन व्यवहार से वह उसकी भावनाओं को ताड़ गई थी, लेकिन इतना निश्चित है कि दो महीने के इलाज से उसकी सेहत में कोई फ़र्क नहीं आया था, बल्कि वह पहले से भी अधिक झगड़ालू और विक्षिप्त हो गई थी । पति-पत्नी के संबंध दिनों-दिन बिगड़ते जा रहे थे । कुछ हफ़्तों तक बैरन शिष्टतापूर्वक उसकी गालियों और तलाक़ की धमकियों की बौछार सहता रहा । बैरोनेस को भ्रम हो गया था कि वह चारों तरफ़ से शत्रुओं द्वारा घिरी हुई है । आवेश में आकर उसने नौकरों पर सख्ती शुरू कर दी ।

क्रिसेन्शिया सदा की भांति चुप्पी का अस्त्र धारण किये थी । लेकिन आजकल वह रसोईघर के बाहर बिल्कुल नहीं निकलती थी, यहां तक कि बैरोनेस की अगवानी करने के लिये भी वह फाटक तक नहीं आई । बुलाये जाने पर वह पत्थर की मूर्ति बनी खड़ी रहती थी, और सवालों का ऐसा मुंहफट जवाब देती थी कि बैरोनेस खीजकर कमरे से बाहर चली जाती थी । क्रिसेन्शिया की आंखों में घृणा का ज़हर भर गया था । वह अनुभव करती थी कि बैरोनेस ने आकर उसका सारा सुख छीन लिया है, यहाँ तक कि 'लैपोरेल्ला' नाम भी । बैरन अपनी पत्नी की उपस्थिति में कभी क्रिसेन्शिया का पक्ष लेने की कोशिश नहीं करता । लेकिन कभी-कभी पत्नी की विक्षिप्ति से तंग आकर वह रसोईघर की शरण लेता था । लकड़ी के स्टूल पर बैठकर वह दुःखी स्वर में कहता—

"बस ! अब बर्दाश्त नहीं होता !"

मालिक को अपनी शरण में आया देख लैपोरेल्ला को एक अलौकिक सुख की अनुभूति होती । वह शब्दों सान्त्वना में देने की बजाय, ममता-

भरी आँखों से अपने शरणार्थी देवता की ओर देखती रहती। यह मूक सहानुभूति पाकर बैरन कुछ क्षणों के लिये अपना दुःख भूल जाता, लेकिन रसोईघर से बाहर निकलते ही उसे फिर गालियों की बौछार का सामना करना पड़ता। यह देखकर क्रिसेन्शिया हताश भाव से हाथ मलने लगती या अपना सारा ज़ोर लगाकर चांदी के बर्तनों पर पालिश करने लगती।

आख़िर एक दिन बैरोनेस के विवाहित जीवन की उमस तूफ़ान बन कर फूट निकली। बैरन का धैर्य संयम की सीमा पार कर चुका था। उसने स्कूल के विद्यार्थी की तरह चुपचाप झिड़कियाँ सुनने के बजाय क्रोध में आकर कमरे का दरवाज़ा ज़ोर से बन्द किया, जिससे खिड़कियाँ तक कांपने लगीं।

"लानत है इस ज़िन्दगी पर!" कहकर वह रसोईघर में चला गया और उसने कंपित स्वर में क्रिसेन्शिया को हुक्म दिया,

"मेरा बिस्तर और बन्दूक फ़ौरन बाहर निकाल दो। मैं एक हफ़्ते के लिये शिकार पर जा रहा हूँ। ऐसे नर्क में तो शैतान भी नहीं रह सकता!"

क्रिसेन्शिया ने गर्वपूर्ण दृष्टि से बैरन की ओर देखा। मालिक के स्वाभिमान को जाग्रत देखकर उसकी श्रद्धा और भी बढ़ गई थी। उसने मुस्कराकर कहा—

"जो हुकुम।"

उसने मिनिटों में बैरन का सामान बांध दिया और बिस्तर कंधे पर उठा कर टैक्सी में रख आई। बैरन उसे धन्यवाद देना चाहता था लेकिन उसके चेहरे पर एक भयंकर मुस्कान देखकर वह घबरा गया। उसे लगा कोई हिंस्र पशु अपने शिकार पर झपटने वाला हो। लेकिन क्रिसेन्शिया ने नम्रभाव से अभिवादन करके धीमे स्वर में कहा—

"आप बाहर जाकर ऐश करें। मैं सब देख लूँगी।"

तीन दिन बाद बैरन को एक तार मिला—"फ़ौरन चले आइये।"

स्टेशन पर बैरन का चचेरा भाई खड़ा था। उसके चेहरे से मालूम होता था कि घर में कोई भयंकर घटना घटी है। उसने बैरन को बताया कि आज सुबह बैरोनेस अपने कमरे में मरी हुई पाई गई। कमरे में गैस भरी थी। यह दुर्घटना नहीं हो सकती, क्योंकि गर्मी के मौसम में लोग गैस से कमरा गर्म नही करते। इसके अलावा कल रात सोने से पहले बैरोनेस ने दर्जन से भी अधिक नीद की दवा की गोलियां खाई थी। रसोईघर की नौकरानी क्रिसेन्शिया का कहना है कि कल रात उसने बैरोनेस को गैस का स्विच जलाने के लिये शृङ्गार के कमरे में जाते देखा था। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए सिविल सर्जन इस नतीजे पर पहुँचा है कि बैरोनेस ने आत्महत्या की है।

बैरन के हाथ कांपने लगे। क्रिसेन्शिया का ज़िक्र आते ही उसका मन आशंकित हो उठा, लेकिन उसने अपने विचार को प्रकट करना उचित न समझा। ड्राइंगरूम में रिश्तेदार मातमपुर्सी के लिये जमा हुये थे। उनके व्यवहार में सहानुभूति की अपेक्षा विद्रूप ही अधिक था। उन्होंने 'अपना कर्त्तव्य समझकर' बैरन को बताया कि शहर में उसकी बदनामी हो रही है, क्योंकि तड़के ही नौकरानी जाकर सड़क पर चिल्लाई थी, "दौड़ो ! मालकिन ने आत्महत्या कर ली !" सभ्य-समाज में तरह तरह की अफ़वाहें उड़ रही थी। बैरन चुपचाप सारी बातें सुनता रहा। उसका सर चकरा रहा था। आध घंटे की लानत-मलानत के बाद सब रिश्तेदार चले गये और बैरन कमरे में अकेला रह गया। इस आकस्मिक दुर्घटना से उसका शरीर अशक्त हो गया था, यहां तक कि उससे बैठा भी न जाता था।

इसी समय किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। "चले आइये" बैरन ने उत्तर दिया।

दरवाज़ा खुला और एक धुंधली आकृति भीतर दाखिल हुई। बैरन उसे पहचानता था। उसे देखते ही बैरन की सांस घुटने लगी और पांव भारी हो गये। उसने हिलने-डुलने की कोशिश की लेकिन शरीर को

जैसे लक़वा मार गया। वह चुपचाप खड़ा रहा। इस चुप्पी में अपराध की भावना छिपी थी। पीछे से किसी ने नीरस, भावुकताहीन स्वर में पूछा—

"क्या श्रीमान आज घर पर ही भोजन करेंगे ?"

आवेश से बैरन का शरीर काँप उठा। उसने लड़खड़ाती आवाज़ में उत्तर दिया—"धन्यवाद ! मुझे भूख नहीं है।"

वह धुँधली आकृति ग़ायब हो गई। बैरन् का सम्मोहन टूट गया और वह पत्ते की तरह कांपने लगा। उसने कमरे का दरवाज़ा भीतर से बन्द कर लिया और सोफ़े पर लेट कर अपने मन में छिपी आशंकाओं से लड़ने लगा। रात भर उसे नींद नहीं आई। अगले दिन सुबह जब वह रस्म के मुताबिक काले कपड़े पहन कर अपनी पत्नी के ताबूत के सिरहाने खड़ा हुआ, तब भी उसके मन में यही शंकायें उठ रही थीं।

पत्नी को दफ़नाने के बाद ही बैरन राजधानी छोड़कर चला गया। मित्रों और रिश्तेदारों के ताने उसे सह्य नहीं थे। उनकी समवेदना में भर्त्सना छिपी थी—या यह बैरन की कोरी कल्पना थी ? खैर, जो भी हो, वह इस वातावरण में नहीं रह सकता था। यहाँ तक कि घर का फ़र्नीचर, विशेषकर सोने के कमरे का पलंग (जिसमें अभी तक गैस की रुग्ण गंध आ रही थी) बैरन को कोस रहा था। लेकिन इस सूने घर में क्रिसेन्शिया जो कभी बैरन की विश्वासपात्र थी, प्रेतिनी की तरह दिखाई देती थी। मालकिन की मृत्यु से वह तनिक भी विचलित नहीं हुई थी।

स्टेशन पर जब से बैरन ने उसका नाम सुना था, तभी से उसके मन में एक अज्ञात भय व्याप गया था। उसके चेहरे का ध्यान आते ही बैरन को मतली सी होने लगती थी। उसके कमरे में दाखिल होते ही वह वहाँ से भाग जाना चाहता था। उसकी कठोर आवाज़, तेल से चुपड़े बाल और निर्दयता में एक रहस्यमय पाशविकता छिपी थी, जिससे छुटकारा पाने के लिये बैरन बेचैन हो रहा था। उसे लगता था, जैसे उस औरत

की उंगलियों ने उसके गले को दबोच रखा हो। उसने चुपचाप अपना सामान बाँधा और एक चिट लिखकर छोड़ गया कि वह अपने किसी दोस्त के पास जा रहा है।

गर्मियों तक वह राजधानी से बाहर रहा। केवल एक बार वह अपनी स्वर्गीया पत्नी की जायदाद के प्रबन्ध के बारे में एकाध दिन के लिये आया, लेकिन वह उस अमंगलकारी प्रेतिनी की नज़रों से बचने के लिये एक होटल में ठहरा। क्रिसेन्शिया को उसके आने का पता तक न चला। वह दिनभर उदास भाव से रसोई में बैठी रहती थी, और हफ्ते में एक की बजाय दो बार गिर्जाघर जाती थी। बैरन का वकील उसे हर महीने वेतन देता था और घर का हिसाब-किताब देखता था। बैरन ने इस बीच उसे एक भी ख़त नहीं लिखा, इस लम्बी प्रतीक्षा से उसका चेहरा दुबला और नीरस हो गया था और वह पहले जैसी मूर्ख और शिथिल हो गई थी। इसी तरह कई महीने बीत गये।

पतझड़ में बैरन को एक ज़रूरी काम से घर में आकर ठहरना पड़ा। कमरे में दाखिल होते समय वह हिचकिचा रहा था। मित्रों के साथ रहने से वह अतीत की दुखद घटनाओं को भूल सकने में सफल हो गया था, लेकिन उस प्रेतिनी का ध्यान आते ही उसे मतली आने लगी। सीढ़ियों पर चढ़ते समय उसे लगा जैसे कोई अज्ञात हाथ उसका गला घोंट रहा है। उसने अपने भीतर वही थकान महसूस की जैसी उसे बैरोनेस की मृत्यु के बाद हुई थी।

उसके कदमों की आहट सुनते ही क्रिसेन्शिया रसोईघर से भागी आई। अपने मालिक को देखते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया। दोनों चुपचाप फ़र्श की ओर देखने लगे। क्रिसेन्शिया ने बैरन का कोट और हैट खूंटी पर टांग दिया। बैरन चुपचाप जाकर कमरे की खिड़की के आगे खड़ा हो गया और क्रिसेन्शिया के जाने के बाद उसने भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया।

इतने लम्बे काल के बाद उनका यही अभिवादन था।

बैरन का ख्याल था कि कुछ ही दिनों में वह अपनी घृणा पर काबू पा लेगा, लेकिन अब तो क्रिसेन्शिया के क़दमों की आहट मात्र से ही उसका सर चकराने लगता था। क्रिसेन्शिया के पकाये हुए खाने में से वह एक कौर भी नहीं खा सकता था। उसकी अशुभ छाया से बचने के लिये वह तड़के ही घर से बाहर चला जाता था और रात को देर से लौटता था। अगर कभी सामना हो ही जाये तो वह बिना उसकी ओर देखे घर के काम-काज के बारे में आदेश देता था। जब तक वह सामने रहती, बैरन का साँस लेना भी दूभर हो जाता।

क्रिसेन्शिया दिन भर रसोईघर के स्टूल पर बैठी किसी गहरे सोच में डूबी रहती थी। उसे भूख-प्यास लगनी बन्द हो गई थी। वह किसी से बोलती-चालती नहीं थी और भीरुतापूर्वक मालिक के बुलावे की प्रतीक्षा में बैठी रहती थी, जैसे कोई अपराधी कुत्ता मालिक के पीटे जाने के बाद मालिक की सीटी की आवाज़ सुनने के लिये लालायित रहता है। उससे क्या अपराध हो गया है, जिसके कारण उसके प्रभु ने उसकी ओर से मुंह फेर लिया है, यह उसकी समझ में नहीं आया। वह केवल इतना जानती थी कि उस नाराज़गी से बड़ा अभिशाप कोई नहीं हो सकता।

तीन दिन बाद सहसा दरवाज़े की घंटी बजी और हाथ में हैंडबैग लिये एक बूढ़ा दिखाई दिया। आगन्तुक ने बताया कि वह बैरन का नया खानसामा है और मालिक से मिलना चाहता है। क्रिसेन्शिया का चेहरा पीला पड़ गया। कुछ क्षण चुप रहने के बाद उसने अपना अशक्त हाथ उठा कर कहा,

"भीतर चले जाओ—उधर!" इसके बाद उसने रसोई में घुस कर दरवाज़ा ज़ोर से बन्द कर लिया।

नये खानसामा ने आकर बैरन की समस्या हल कर दी। वह बड़ा शिष्ट था और इससे पहले भी कई संभ्रान्त परिवारों में काम कर चुका था। क्रिसेन्शिया मानो पत्थर की मूर्ति बन गई। वह शून्य दृष्टि से खिड़की के बाहर देखा करती थी, लेकिन काम के समय उस पर विचित्र

पागलपन सवार हो जाता था। रसोईघर से बाहर के संसार के साथ उसका कोई सम्पर्क न रहा था।

पन्द्रह दिन के बाद नया खानसामा बैरन के अध्ययनकक्ष में आया और शिष्टतापूर्वक खड़ा रहा। इससे पहले भी एक बार वह उस 'देहाती कूड़े' की शिकायत कर चुका था और उसने मालिक से कहा था कि वे फ़ौरन नौकरानी को नोटिस देकर निकाल दें, लेकिन बैरन को क्रिसेन्शिया पर दया आ गई थी। यह देखकर खानसामा ने भी अधिक आग्रह नहीं किया। लेकिन इस बार वह बहुत चिन्तित मालूम होता था। बैरन ने उसे समझाया कि क्रिसेन्शिया घर की पुरानी नौकरानी है, और उसे बेक़सूर निकालना ठीक नहीं होगा, लेकिन बूढ़ा खानसामा अपने स्थान से टस से मस न हुआ। उसने लड़खड़ाती हुई जबान में कहा—

"हजूर, शायद आप मुझे पागल समझें लेकिन·····लेकिन मुझे उस औरत से डर लगता है·····वह बड़ी खौफ़नाक औरत है····· आप नहीं जानते·····।"

बैरन के मन में फिर संदेह की बिजली चमकी, लेकिन बूढ़े खानसामे ने कोई सबूत नहीं दिया था। उसने अपने को संभाल कर पूछा—

"क्यों क्या कोई खास बात हुई है?"

"हेर बैरन, मैं निश्चित रूप से तो कुछ नहीं कह सकता, लेकिन मालूम होता है कि यह औरत, औरत नहीं, पशु है। मुझे डर है कि कहीं यह मेरा गला न दबोच ले। कल जब मैं उसे आपके आदेश सुना रहा था तो उसने मेरी ओर इस तरह देखा, जैसे·····जैसे वह अभी मेरी गर्दन में दांत गड़ा देगी। हजूर, मुझे उसके हाथों से पका खाना खाने में डर लगता है। क्या पता वह आपको या मुझे जहर दे कर मार डाले। हजूर नहीं जानते, वह कितनी खतरनाक है। वह बोलती तो एक शब्द भी नहीं, लेकिन मुझे विश्वास हो गया है, कि वह किसी की हत्या कर डालेगी।"

बैरन ने घबरा कर खानसामे की ओर देखा। वह सोचने लगा,

क्या इस आदमी ने क्रिसेन्शिया के बारे में अफ़वाहें सुनी हैं ? बैरन ने अपने हाथों के कंपन को छिपाने के लिये सिगार को एश-ट्रे पर रख दिया। लेकिन खानसामे के चेहरे पर संदेह का कोई भाव न था। बैरन सोचने लगा, खानसामे का अनुमान सही है, क्रिसेन्शिया से पिण्ड छुड़ाने में ही बेहतरी है।

बैरन ने कहा, "देखो जल्दबाजी करने से कोई लाभ नहीं। हमें कुछ दिन और रुकना चाहिये। अगर वह फिर तुमसे बदतमीज़ी करे तो तुम मुझसे पूछे बगैर उसे नोटिस दे सकते हो।"

"जो हुकुम जनाब !" कहकर बूढ़ा खानसामा चला गया। बैरन ने चैन की सांस ली। वह चाहता था कि क्रिसमस के दिनों में जब वह घर पर नहीं रहेगा, तब क्रिसेन्शिया को निकालने में आसानी रहेगी। उसके हृदय का बोझ एकदम हल्का हो गया।

अगले दिन तड़के नाश्ते के बाद अभी बैरन अपने अध्ययनकक्ष में जाकर बैठा ही था कि किसी ने दरवाज़े पर दस्तक दी। बैरन ने अखबार के पन्ने उलटते हुए कहा,

"आ जाओ !"

क्रिसेन्शिया धीमी चाल से भीतर दाखिल हुई। उसकी शक्ल देखकर बैरन दंग रह गया। वह पहले भी दुबली थी लेकिन अब बिल्कुल कंकाल हो गई थी। काले कपड़ों में वह प्रेतिनी दिखाई देती थी। उसे कालीन पार करने का भी साहस न हुआ और वह चुपचाप खाली फ़र्श पर खड़ी रही। यह देखकर बैरन के मन में करुणा उमड़ आई, लेकिन अपने भावावेश को छिपाने के लिये उसने संयत स्वर में पूछा—

"क्या बात है क्रिसेंशी ?" अनजाने में ही उसका स्वर मृदुल होने की बजाय कठोर हो गया।

क्रिसेन्शिया चुपचाप कालीन की ओर देखती रही। बड़ी कोशिश करने पर वह इतना कह पाई—

'खानसामा····· खानसामा कहता है कि हेर बैरन ने मुझे नौकरी से निकाल दिया है।"

यह सुनकर बैरन को बड़ा दुःख हुआ। वह उठकर कमरे में चहलक़दमी करने लगा। वह इस मामले में जल्दबाजी नहीं करना चाहता था। उसने हकलाये स्वर में समझाया कि घर के नौकरों को आपस में नहीं लड़ना चाहिये। अगर क्रिसेन्शिया खानसामे के साथ ठीक सलूक करे तो अब भी मामला ठीक हो सकता है।

क्रिसेन्शिया ने कोई उत्तर न दिया। उसकी आंखें अब भी कालीन को भेद रही थीं। वह बैरन के मुंह से सहानुभूति का एक शब्द सुनने के लिये खड़ी थी, जो उसे नसीब नहीं हुआ। कुछ देर चुप रहने के बाद उसने शान्त स्वर में पूछा—

"मैं केवल यह पूछने आयी हूँ कि खानसामे ने क्या आपसे पूछ कर मुझे नोटिस दिया है?"

बैरन मन ही मन भयभीत हो गया। क्या वह बैरन को धमकी दे रही थी? क्षण भर में उसकी सहानुभूति ग़ायब हो गई और महीनों से सुलगती हुई घृणा की लपटें बाहर निकल आईं। उसने सख्त अफ़सरी अंदाज में, (कभी वह अंडर सैक्रेटरी रह चुका था) जवाब दिया—

"हां क्रिसेन्शिया, बात कुछ ऐसी ही है। मैंने घर के इन्तजाम के लिये खानसामा को तैनात किया है। अगर वह तुम्हें पसंद नहीं करता तो तुम्हें नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा; अगर तुम भविष्य में खानसामे से तमीज़ से पेश आने का वादा करो तो मैं उससे तुम्हारी सिफ़ारिश कर दूंगा और वह तुम्हारी बदतमीज़ी को माफ़ कर देगा, नहीं तो तुम्हें फ़ौरन यहां से चले जाना होगा।"

बैरन नौकरानी की हर धमकी सुनने के लिये तैयार था।

लेकिन क्रिसेन्शिया की आंखों में भयभीत जंगली पशु का भाव था, जो अपने आश्रय के स्थान पर शिकारी कुत्तों को छिपे देखकर घबरा जाता है।

"हज़ूर की मेहरबानी। मैं हज़ूर को तकलीफ़ नहीं देना चाहती, इसलिये मैं फ़ौरन यहाँ से चली जाऊंगी।"

यह कहकर वह कमरे से बाहर चली गई।

उसी दिन शाम को जब बैरन ऑपेरा देखकर लौटा तो उसने अपनी मेज़ पर एक देहाती सदूकची पड़ी देखी। संदूकची में क्रिसेन्शिया ने बैरन द्वारा भेजे गये दो पोस्टकार्ड, दो थियेटर के टिकट और एक चांदी की अंगूठी संभाल कर रखी थी। इसके अलावा नोटों का एक पुलिंदा भी था (जो क्रिसेन्शिया की जिन्दगी भर की कमाई थी)। किसी देहाती फोटोग्राफ़र द्वारा खींची गई बीस बरस पुरानी एक तस्वीर थी, जिसमें क्रिसेन्शिया की आंखों में वैसा ही कातर भाव था, जैसा आज सुबह था।

बैरन ने खीज कर खानसामा को बुलाने के लिये घंटी बजायी। उसने खानसामे से पूछा कि उसकी मेज़ पर क्रिसेन्शिया का कूड़ा-कचरा कैसे आया? खानसामा पूछताछ के लिये रसोईघर में गया, लेकिन क्रिसेन्शिया का कहीं पता न था। अगले दिन बैरन ने अखबार में पढ़ा कि एक अधेड़ औरत ने डैन्यूब नदी में छलांग लगा कर आत्महत्या कर ली है। उसने मन ही मन अंदाज लगाया कि वह औरत लैपोरेल्ला ही थी

विक्षिप्त

मार्च १९१२ की बात है। मैं एक डाक जहाज़ में सफ़र कर रहा था। जब जहाज़ नेपल्स पहुँचा तो वहां एक ऐसी दुर्घटना हुई जिसके बारे में अखबारों में बड़े भ्रान्तिपूर्ण समाचार प्रकाशित हुए। जहाज़ के अधिकांश यात्रियों की तरह मैं उस समय घटनास्थल पर मौजूद नहीं था। शोर-गुल और कोयले की गर्द से बचने के लिए मैं शाम के समय समुद्र तट पर चला गया था। लेकिन फिर भी मुझे उस घटना के बारे में सही तथ्य मालूम हैं और मैं पाठकों को उसका कारण भी बता सकता हूँ। इस दुर्घटना को अब कई साल बीत गये हैं, इसलिए कोई कारण नहीं कि मैं अब भी मौन बना रहूँ।

मैं उन दिनों मलाया की यात्रा पर गया हुआ था। सहसा मुझे एक तार मिला और मुझे एक ज़रूरी काम की ख़ातिर स्वदेश लौटना पड़ा। मैं सिंगापुर आकर 'बोतन' नाम के समुद्री जहाज़ में सवार हो गया। मेरी केबिन इंजन-रूम के बिलकुल पास ही थी, जिससे वहाँ दिन भर तेल और सीलन की बदबू आती रहती। गरमी से बचने के लिए मुझे दिन-रात बिजली का पंखा चलाना पड़ता, जिसकी गरम हवा के झोंके मेरे चेहरे पर इस तरह लगते कि मुझे चमगादड़ के पंखों की फड़फड़ाहट याद आ जाती। जहाज़ के इंजनों की आवाज़ लोहे की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए किसी कोयले के कुली के हांफने जैसी लगती।

मेरी केबिन के ऊपर जहाज़ की डेक थी। उस पर सैर करने वाले यात्रियों की पदचाप सुनाई दे रही थी। अपना सामान केबिन में रखवाकर मैं फौरन ऊपर डेक पर आ गया और दक्षिण से आने वाली ठंडी हवा खाने लगा।

लेकिन डेक पर आकर भी शोर-शराबे से मुक्ति नहीं मिली। यहाँ यात्रियों की भीड़ जमा थी, जो यात्रा की निष्क्रियता और परस्पर सामीप्य के कारण एक अजब बेचैनी का अनुभव कर रहे थे और चहल-क़दमी करते हुए लगातार बातें करते जाते थे। आराम-कुर्सियों पर बैठी स्त्रियों की हँसी, अपनी तन्दरुस्ती के लिए घूमने वालों का ठसाठस भरी डेक पर चक्कर काटना और चारों ओर से उठने वाले कोलाहल से मेरा मन उद्विग्न हो रहा था। मलाया, बर्मा और स्याम का वातावरण इससे बिल्कुल भिन्न था। उन अपरिचित देशों की मनोरम झांकियां मेरी स्मृति में ताज़ी थीं। मैं किसी एकान्त स्थान में बैठकर उन झाँकियों पर मनन और चिन्तन करके उन्हें अपनी स्मृति में क्रमानुसार सँजोना चाहता था। लेकिन इस अशान्त वातावरण में एकान्त पाना दुर्लभ था। अगर मैं पढ़ना चाहता तो पुस्तक की पंक्तियां डेक पर गुज़रते हुए लोगों की परछाइयों से धुंधली हो जातीं और मेरी क्लान्त आँखें कोरे काग़ज़ को ही देख पातीं। इस भीड़-भाड़ के बीच मैं सोचने तक का समय न निकाल पाता।

तीन दिन तक तो मैंने किसी तरह अपने मन पर जब्र किया और अन्य यात्रियों की तरह क्षितिज तक फैले हुए समुद्र को देखता रहा। समुद्र का नीला रंग सदा एकसा रहता था। सिर्फ रात को कुछ देर के लिए वह अनेक वर्णों से प्रतिभासित हो उठता। रही जहाज़ के यात्रियों की बात, सो मैं तीन ही दिन में उनसे ऊब गया था। मैं उनकी हर गतिविधि से परिचित हो गया था। विशेषकर स्त्रियों की निरर्थक हँसी और छुट्टियों में स्वदेश लौटने वाले कुछ डंच अफसरों की बहसों से तंग आकर मैंने सैलून में शरण ली। लेकिन वहाँ भी मेरी क़िस्मत में शान्ति

न थी, क्योंकि शांघाई की कुछ अंग्रेज लड़कियों का एक दल वहाँ आकर प्यानो पर नाच की धुनें बजाता था। मुझे फिर अपनी केबिन में लौटना पड़ा। मैं रात के डिनर और नाच के कलरव से बचने के लिए बियर पीकर नींद में बेसुध होने की कोशिश करता।

एक बार आधी रात को जब मेरी नींद खुली तो गरमी और पसीने से मेरा हाल बुरा हो रहा था। इतनी लम्बी नींद के बाद मेरे शरीर में भारीपन आ गया था। संगीत कभी का बन्द हो चुका था और मेरी केबिन की छत पर किसी की पदचाप नहीं सुनाई दे रही थी। इस निस्तब्ध वातावरण में सिर्फ जहाज़ के इंजन की मशीनों की घर्र-घर्र सुनाई दे रही थी, मानो कोई भीमकाय जन्तु अपनी पीठ पर बोझ लेकर अन्धकार को चीर रहा हो।

मैं अंधेरे में रास्ता टटोलता हुआ सूनी डेक पर पहुंचा। आकाश साफ था, ऐसा मालूम होता था मानो काली मखमल में सितारे टंके हों, या किसी पर्दे के छेदों में से छनकर आता हुआ प्रकाश धरती को आलोकित कर रहा हो। मैंने इतना सुन्दर आकाश कभी नहीं देखा था।

हमारा जहाज़ भूमध्यरेखा को पार कर रहा था, फिर भी हवा में ठंडक और ताज़गी थी। दूर द्वीपों से आती हुई हवा के सुवासित झोंकों ने मुझ पर कुछ ऐसा जादू डाला कि मैं सपनों में खो गया और मेरे मन में तीव्र इच्छा हुई कि मैं किसी स्त्री की तरह रात की बाहों में आत्मसमर्पण कर दूँ। मैं कहीं लेटकर तारों की चित्रमयी भाषा को पढ़ना चाहता था। लेकिन डेक की आराम-कुर्सियाँ बन्द करके एक ओर रख दी गई थीं। उस विशाल डेक पर कोई ऐसा कोना न था, जहाँ लेटकर कोई सपनों की दुनिया में खो सकता।

मैं रस्सों और लोहे के पहियों से ठोकर खाता हुआ मल्लाहों की डेक की रेलिंग पर जाकर खड़ा हो गया और झिलमिलाते समुद्र को चीरते हुए जहाज़ की गति को देखने लगा। वहाँ खड़े मुझे कितने मिनट या घंटे बीत गये, यह मुझे मालूम नहीं। उस विशाल झूले में मुझे

समय का पता ही न चल सका। मेरे शरीर में एक विचित्र, सुखद आलस्य छाया था। इधर मुझे नींद आ रही थी, और मैं सपनों की दुनिया में खो जाना चाहता था, उधर इस जादू भरे वातावरण को छोड़कर अपनी क़ब्रनुमा केबिन में लौटने की तबियत नहीं हो रही थी। सहसा मेरा एक पैर जहाज़ के रस्से से छू गया और मैं आँखें मूँदकर वहीं बैठ गया और रात्रि की स्वप्निल खुमारी में खो गया। कुछ ही क्षणों में चेतना की सीमायें भी लुप्त हो गईं। इस खुमारी में मुझे एक आवाज़ सुनाई दी। पता नहीं यह मेरी साँसों की आवाज़ थी या जहाज़ के भीमकाय, यांत्रिक हृदय की धड़कन थी—लेकिन मैं उस जादूभरी आधीरात के प्रति पूर्ण रूप से अपने को समर्पित कर चुका था।

× × ×

किसी के खाँसने की आवाज़ सुनकर मेरी तंद्रा टूटी। मेरी आँखें अंधेरे में देखने की आदी हो चुकी थीं। मुझे अपने पास ही कोई चश्मे वाला व्यक्ति दिखाई दिया। सोने से पहले मैं समुद्र और तारों के विचारों में इतना तल्लीन हो चुका था कि उस व्यक्ति की ओर मेरा ध्यान तक नहीं गया था। शायद वह भी निश्चल होकर वहीं बैठा था। उसके एकान्त में बाधा डालने का मुझे अफसोस हुआ। इसलिए मैंने जर्मन में कहा, "क्षमा कीजिए!" फौरन उत्तर मिला, "चिन्ता न करें!" उस व्यक्ति का उच्चारण इतना शुद्ध था कि मैं समझ गया कि वह जर्मन है।

रात के झुटपुटे में किसी अदृश्य और अपरिचित व्यक्ति से बातें करना कितना रहस्यमय था। मुझे लगा कि वह भी शून्य दृष्टि से मुझे देख रहा है। हम अंधेरे में सिर्फ एक-दूसरे की काली रेखाकृति को ही देख पा रहे थे। फिर भी मैं उसके हृदय की धड़कन और पाइप की आवाज़ सुन सकता था।

चुप्पी से तंग आ कर मैं वापस लौटना चाहता था, लेकिन उस व्यक्ति से बातचीत किये बग़ैर चले जाना अक्षम्य रूप से धृष्ट होगा,

इसलिये मैं वहीं रुक गया। मैंने एक सिगरेट जलाई, दियासलाई के क्षणिक प्रकाश में हम दोनों ने एक-दूसरे को देखा। लेकिन उस व्यक्ति का चेहरा अजनबी था। मैंने उसे पहले कभी भोजन के कमरे में या डेक पर नहीं देखा था। वह चेहरा मुझे अत्यन्त रहस्यमय और प्रेत सरीखा दिखाई दिया (हो सकता है दियासलाई के क्षणिक प्रकाश के कारण ऐसा हुआ हो)। अंधेरे में उसका चेहरा फिर ग़ायब हो गया लेकिन उसके पाइप की चिनगारियाँ और चश्मे के शीशे कभी-कभी चमक उठते थे। हम दोनों चुप थे। यह चुप्पी गर्म देशों की जलवायु की तरह खुश्क और झुलसाने वाली थी।

आखिर मुझसे न रहा गया। मैंने उठकर शिष्ट स्वर में कहा, "अब मैं चलता हूँ। गुडनाइट।"

"गुडनाइट !" कर्कश स्वर में उत्तर मिला।

मैं अन्धेरे में रास्ता टटोलता हुआ अपनी केबिन की तरफ मुड़ने लगा, इसी समय मुझे अपने पीछे किसी की पदचाप सुनाई दी। वह अपरिचित व्यक्ति लड़खड़ाते कदमों से मेरे पीछे आ रहा था। वह परेशान-सा मालूम होता था।

सहसा उसने घबराई आवाज़ में कहा, "क्षमा कीजिए·····मैं आपसे एक निवेदन करना चाहता हूं। मैं अत्यन्त व्यक्तिगत कारणों से···यह यात्रा कर रहा हूँ···मैं शोकग्रस्त हूँ···इसीलिए मैंने जहाज़ के किसी यात्री से मेलजोल नहीं बढ़ाया···आपकी बात दूसरी है···मैं चाहता हूँ···मेरा मतलब है कि आप किसी से इस बात की चर्चा न करें कि आप ने मुझे यहां देखा है।·····मैं अत्यन्त व्यक्तिगत कारणों से अपनी यात्रा को गुप्त रखना चाहता हूँ। अगर आपने मेरे इस रहस्य को लोगों के आगे प्रकट कर दिया तो मुझे बड़ा दुख पहुँचेगा मैं···"

यह कहकर वह रुक गया। मैंने उसे विश्वास दिलाया कि मैं उसकी इच्छा का सम्मान करूंगा। मैंने उसे बताया कि मैं भी जहाज़ के वातावरण से ऊब गया हूँ। हम दोनों ने आपस में हाथ मिलाये और मैं जाकर

अपनी केबिन में सो गया। लेकिन उस रात मैंने बहुत भयानक सपने देखे।

मैंने रात की घटना का किसी से ज़िक्र नहीं किया, हालाँकि अपने मन पर काबू रखना कठिन था। जहाज़ के यात्रियों के लिए तुच्छ से तुच्छ घटना भी एक सनसनीखेज खबर बन जाती है। किसी ने क्षितिज के पास एक नौका देखी, किसी को थूथनीदार समुद्री जीवों का झुंड दिखाई दिया, किसी न किसी पुरुष यात्री को किसी महिला यात्री से चुहल करते देखा या किसी ने किसी को बुद्धू बनाया तो समझिए यह बात हफ्तों तक चर्चा का विषय बनी रहेगी। इस अद्भुत यात्री के बारे में जानने के लिए मेरी जिज्ञासा दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती थी। मैंने उसका नाम मालूम करने के लिए जहाज़ के सब यात्रियों की सूची छान डाली। मैंने कई लोगों से उसके बारे में पूछताछ करने की भी कोशिश की। मैं सारे दिन रात की प्रतीक्षा में आतुर रहता। मुझे आशा थी कि वह मुझे डेक पर एक बार फिर मिलेगा। मुझे बचपन से ही मनोवैज्ञानिक पहेलियों में रुचि रही है। किसी रहस्यमय व्यक्ति से भेंट होते ही उसके बारे में सचाई जानने के लिए मेरा मन व्यग्र हो उठता है। यह इच्छा उतनी ही तीव्र होती है जितनी कि एक सुन्दर स्त्री को अपने आलिंगन में बाँधने की। दिन काटे न कटता था। मैं घड़ी में अलार्म लगाकर जल्दी ही सो गया, ताकि तड़के ही नींद खुल जाये।

जब मेरी नींद खुली तो आधी रात बीत चुकी थी। अन्धेरे में घड़ी की सुइयाँ चमक रही थीं। दो से ऊपर का समय हो गया था। मैं जल्दी से उठकर डेक पर चला गया।

योरप की अपेक्षा गरम देशों की जलवायु में बहुत कम परिवर्तन होते हैं। रोज की तरह आज भी आकाश साफ़ था और तारे चमक रहे थे। लेकिन मेरे अन्दर एक विचित्र अन्तर आ गया था। मेरी थकान और खुमारी न जाने कहाँ चली गयी थी। जहाज़ के हलकोरों की ओर मेरा ध्यान न जाता था। एक अज्ञात और रहस्यमय शक्ति मुझे डेक की ओर

खींच रहीं थी। मैं उस अपरिचित व्यक्ति से एक बार फिर मिलने के लिए आतुर था। सहमे और हिचकिचाते क़दमों से मैं डेक पर पहुँचा। अन्धेरे में एक लाल आँख चमक रही थी। वह अपरिचित व्यक्ति वहाँ मौजूद था—यह उसका पाइप था।

मैं ठिठक कर रुक गया और डेक से वापस लौटने ही वाला था कि वह काली आकृति उठकर मेरे पास आकर खड़ी हो गई। उसने निर्जीव और याचनापूर्ण स्वर में कहा, "माफ़ कीजिए, शायद आप यहाँ आराम करने आये थे और मुझे देखकर वापस जा रहे हैं। आप बैठिए, मैं जाता हूँ।"

मैंने उत्तर दिया कि मैं उसके एकान्त में बाधक नहीं बनना चाहता, इसलिए उसे कहीं जाने की जरूरत नहीं है।

"जी नहीं, आपके यहाँ रहने से मुझे कोई बाधा नहीं पहुँचेगी," उस के स्वर में तीखापन था। "बल्कि मैं तो कभी-कभी एकान्त से मुक्ति पाने के लिए छटपटा उठता हूँ। मुझे किसी इन्सान से बातचीत किए हुए मुद्दत गुजर गई है। सबसे बड़ी मुसीबत तो यह है कि मेरे मन का गुबार मन ही मन में रहता है। केबिन में हर समय कैद रहना मुझे पसन्द नहीं, लेकिन यात्रियों की हँसी और गप्पबाज़ी भी मुझे बर्दाश्त नहीं होती। बेहूदगियों को देखकर मेरा मन विक्षिप्त हो उठता है। उनकी बकवास सुनकर मैं अपने कान बन्द कर लेता हूँ। शायद उन्हें मालूम नहीं कि उनकी आवाज़ मेरी केबिन तक पहुँचती है और मेरे एकान्त में बाधा डालती है। अगर उन्हें मालूम भी हो जाये तो क्या वे मेरी परवाह करेंगे? वे आखिर विदेशी ठहरे।"

उसने सहसा रुककर कहा, "मैं जानता हूं कि मेरी बातें सुनकर आप ऊब रहे होंगे, माफ कीजिए।"

वह वहाँ से जाने लगा, लेकिन मैंने उसे रुकने के लिए अनुरोध

"जी मैं आपकी बातों से बिल्कुल नहीं ऊब रहा, बल्कि तारों-भरे आकाश के नीचे किसी से बातें करके मुझे बड़ी खुशी होती है। आप सिगरेट पीते हैं न ?"

दियासलाई की रोशनी में मैंने एक बार फिर उसके चेहरे को देखा, अब वह परिचित-सा चेहरा मालूम होता था। उसने दियासलाई फेंकने से पहले याचनाभरी दृष्टि से मेरी ओर देखा।

मेरे शरीर में सनसनी दौड़ गई। शायद वह व्यक्ति मुझे कोई कहानी सुनाने के लिए आतुर था, लेकिन किसी विशेष कारण से उसका मुंह बन्द हो गया था। मेरी समवेदनापूर्ण चुप्पी ने उसका संकोच दूर कर दिया।

हम दोनों रेलिंग का सहारा लेकर आमने-सामने बैठ गये। उस व्यक्ति का हाथ घबराहट के मारे कांप रहा था। हम दोनों चुपचाप कुछ देर तक सिगरेट पीते रहे। अन्त में उसने मौन भंग करते हुए कहा —

"क्या आप थके हुए हैं ?"

"बिल्कुल नहीं "

"मैं आपसे कुछ सवाल पूछूँ तो कैसा रहेगा ?" उसने हिचकिचाकर कहा, "बल्कि सच पूछिए तो मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ। किसी अपरिचित के सामने इस तरह बड़बड़ करना बड़ी मूर्खता है, लेकिन क्या करूँ मैं एक अजब मुसीबत में हूँ। अब मेरी यह हालत हो चुकी है कि अगर मैंने अपने दिल का बोझ हल्का न किया तो मैं पागल हो जाऊँगा। मेरी कहानी सुनकर आप भी मेरी राय से सहमत होंगे। मैं जानता हूँ कि आप इस मुसीबत में मेरी कोई सहायता नहीं कर सकते, लेकिन अब मैं इन बातों को मन में नहीं रख सकता। इसीलिए मैं बीमार पड़ गया हूँ। आप जानते हैं कि स्वस्थ लोगों की दृष्टि में बीमार व्यक्ति कितना हास्यास्पद होता है ?"

मैंने उसे बीच में टोककर समझाया कि वह इस तरह की कटु कल्पनाओं से अपने मन को दुखी न बनाये। "आपकी मसीबत को जाने

बगैर आपको सहायता का वचन देना कितना निरर्थक है, यह आप जानते हैं, फिर भी मैं आपकी भरसक सहायता करूँगा। किसी भी इन्सान को मुसीबत से उबारना क्या मानव-कर्तव्य नहीं है? कम से कम ऐसा करने की कोशिश तो की जा सकती है।"

"किसी इन्सान को मुसीबत से उबारना मानव-कर्त्तव्य है। कम से कम ऐसा करने की कोशिश तो की जा सकती है।" उसने मेरे शब्दों को कटुतापूर्वक दोहराया। उसके स्वर में तीखा व्यंग्य था, जिसका वास्तविक अर्थ मुझे बाद में जाकर मालूम हुआ। उसके बोलने के ढंग से मुझे शक हुआ कि हो न हो या तो वह पागल है या शराब के नशे में चूर है।

शायद वह भी मेरी इस प्रतिक्रिया को ताड़ गया था। उसने संयत स्वर में कहा, "आप जरूर मुझे पागल समझ रहे होंगे, क्योंकि अधिक दिन एकान्त में रहने से इन्सान का सिर फिर जाता है। लेकिन सच मानिए, अभी तक तो मैं होश-हवास हूँ। मैं आपके मुंह से 'कर्त्तव्य' शब्द सुनकर जरा आवेश में आ गया था, क्योंकि इस शब्द ने मेरे मर्मस्थल को छू लिया था। मैं बड़ा संवेदनशील हूँ। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि हर समय मेरे मन में एक ही प्रश्न चक्कर काटता रहता है, वह है कर्तव्य···कर्त्तव्य···कर्त्तव्य!"

एक झटके के साथ उसने अपने बिखरे हुए विचारों को समेटा और सीधे साफ शब्दों में अपनी कहानी शुरू की।

"आपको मालूम होना चाहिए कि मैं एक डाक्टर हूँ। इसी में मेरी कहानी का मर्म छिपा है। डाक्टरी के पेशे में कई पेचीदा केस भी आते हैं, ऐसे केस जिनमें डाक्टर के सामने कर्त्तव्यपरायणता के अतिरिक्त और प्रश्न भी होते हैं, और डाक्टर पशोपेश में पड़ जाता है। एक ओर उसकी मरीज़ के प्रति ज़िम्मेदारी है, दूसरी ओर देश और विज्ञान के प्रति। आपने अभी कहा कि किसी भी इन्सान को मुसीबत से उबारना मानव कर्त्तव्य है, लेकिन ऐसी उक्तियां जीवन में कोरे सिद्धान्त से अधिक महत्व नहीं रखतीं। अपनी मिसाल ही लीजिये। आप आधीरात के समय एक

अपरिचित व्यक्ति से मिलते हैं, मेरे प्रति आपका कोई नैतिक कर्त्तव्य नहीं, फिर भी मैं आपसे वादा करवा लेता हूं कि आप किसी से इस मुलाकात की चर्चा नहीं करेंगे। आप भी अपना वादा पूरा करते हैं क्योंकि आप अपने कर्त्तव्य के प्रति सचेत हैं। आप फिर आधी रात के समय मुझ से मिलने के लिए आते हैं और मैं आपके सामने अपना मन उँडेलने के लिए आतुर हो जाता हूँ, क्योंकि यह चुप्पी घुन की तरह मेरे मन को खाये जाती है। आप सहानुभूतिपूर्वक मेरी बातें सुनते हैं। सुनने में ये बातें कितनी सीधी-सादी मालूम होती हैं, क्योंकि मैंने अभी तक आपसे किसी असंभव बात की मांग नहीं की। लेकिन मान लीजिए अगर मैं आप से कहूँ कि मुझे पकड़ कर समुद्र में फेंक दो, तो आप धीरज खो बैठेंगे। क्या यह झूठ है ? तब आप इस प्रकार से मेरी सहायता करने को अपना कर्त्तव्य नहीं समझेंगे। कर्त्तव्य-परायणता की भी एक सीमा होती है। यह सीमा उस बिन्दु पर पहुँचने से पहले ही समाप्त होजाती है, जहाँ व्यक्ति के जीवन की सुरक्षा को खतरा पैदा होता हो या जहाँ उसके व्यक्तिगत और सामाजिक दायित्व उसे चुनौती देने लगें। क्या एक डाक्टर के जीवन में इन सीमाओं का कोई अस्तित्व नहीं है ? क्या सिर्फ़ इसलिए कि समाज ने उसे लातीनी भाषा में एक डिग्री मढ़वा कर देदी है, वह पृथ्वी पर मसीहा बन कर घूमे ? क्या वह कर्त्तव्य के नाम पर अपने प्राणों को मिट्टी के ठीकरों की तरह फेंक दें, क्योंकि कोई मरीज गिड़गिड़ाकर उससे दया की भीख माँगता है ? कर्त्तव्य की भी एक सीमा होती है; जिसका पता संकट के क्षणों में ही चलता है।"

वह फिर आवेश में आगया।

"खेद है कि मैं अपनी उत्तेजना को रोक नहीं पा रहा, लेकिन विश्वास रखें, मैं नशे में चूर नहीं हूँ। अभी तक शराब ने मुझ पर कोई असर नहीं किया, हालाँकि कुछ दिनों से मैं बेहद पीने लगा हूँ। पूर्वीय देशों में रहने के कारण मेरा जीवन भयंकर रूप से एकाकी रहा है। जरा सोचिए, मैंने जिन्दगी के सात साल जानवरों और आदिवासियों के बीच में गुजारे

हैं। ऐसी परिस्थितियों में विक्षिप्त और बदहवास हो जाना स्वाभाविक ही है। इसीलिए जब मुझे कोई अपना देशवासी दिखायी देता है तो मेरे संयम के बाँध टूट जाते हैं। हाँ, तो मैं क्या कह रहा था ?·····जी हाँ, याद आया। मैं आपसे एक सवाल पूछने वाला था। आप से एक समस्या की पूर्ति करवाना चाहता था। बताइए, क्या इन्सान देवता है ? क्या वह सब परिस्थितियों में संकटग्रस्त लोगों की सहायता कर सकता है ?·····लेकिन यह कहानी बहुत लम्बी है। सच बताइए, आप कहीं ऊब तो नहीं गये ?"

"बिल्कुल नहीं।"

वह दोनों हाथों से अंधेरे में कुछ टटोल रहा था। एक खनक-सी हुई। उसने अपने पीछे से दो बोतलें निकालीं और एक गिलास भर कर मेरे आगे कर दिया—बिना सोडा मिली ह्विस्की का पूरा पैग।

"लीजिए अपना गला तर कीजिए।"

उसके अनुरोध पर मैंने ह्विस्की का गिलास हाथ में ले लिया और चुस्कियाँ लेने लगा। उसके पास दूसरा गिलास नहीं था, इसलिए उसने दूसरी बोतल उठाकर अपने मुँह में उँडेल ली। कुछ देर तक हम दोनों चुप रहे। जहाज़ की घंटी ने ढाई बजाये।

× × ×

"मैं आपके सामने मिसाल के लिए एक केस रखता हूँ। मान लीजिए कि कोई डाक्टर किसी छोटे शहर में प्रैक्टिस करता है, या समझिए कि देहात में करता है। एक डाक्टर जो·····।"

कुछ देर चुप रह कर उसने फिर कहना शुरू किया।

"इस तरह पहेलियाँ बुझाने से काम नहीं चलेगा। मैं आप को अपनी आँखों देखी एक घटना सुनाऊँगा—आदि से अंत तक सच्ची घटना, नहीं तो आपके पल्ले कुछ नहीं पड़ेगा। मुझे कोई संकोच या दुराव करने की जरूरत नही, क्योंकि जब लोग मरीज़ बनकर मेरे पास आते हैं तो उन्हें अपना सारा संकोच छोड़ना पड़ता है। अपने सारे कपड़े उतारने

पड़ते हैं और मुझे अपना मल-मूत्र तक दिखाना पड़ता है। अपनी प्राइवेट बातों की चर्चा मुझसे करनी पड़ती है। ऐसा न हो तो मैं उनका इलाज कैसे कर सकता हूँ ? इसलिए मैं आपको किसी काल्पनिक डाक्टर की कहानी सुनाकर धोखे में नहीं डालना चाहता। मैं भी एक मरीज़ की तरह निरावरण होकर आपके सामने आऊँगा। यहाँ मत भूलिए कि उस भयंकर देश में रहकर मुझे शील और अश्लील की कोई तमीज़ नहीं रही। उस देश में जहाँ एकाकीपन व्यक्ति की हड्डियों और आत्मा को निगल जाता है।"

मुझे चुप देखकर वह समझ गया कि मैं उसकी राय से सहमत नहीं। वह फौरन बोला, "आह ! मैं समझ गया, आप पूर्वीय देशों के भक्त हैं। वहाँ जाने वाले सभी यात्री मंदिरों और ताड़ के वृक्षों पर मोहित हो जाते हैं, लेकिन वहां एकाध महीने के भ्रमण के लिये जाना एक बात है, और स्थायी रूप से रहना दूसरी बात है। रेल, मोटर या रिक्शा में बैठ कर सैर करने वालों को गर्म देश बड़े सुहावने मालूम होते हैं। सात साल पहले जब मैं वहां गया था, तो भविष्य के सुनहरी सपने देखा करता था। मैं सोचता था कि मैं पूर्वीय देशों की भाषायें सीखूंगा, वहां के धर्मग्रन्थों को मूलभाषा में पढ़ूंगा। गर्म देशों में प्रचलित रोगों का अध्ययन करूँगा; विज्ञान में मौलिक खोज करूँगा। देशी लोगों के मनोविज्ञान को समझूँगा (हम यूरोपियन ऐसा ही कहा करते हैं), सभ्यता का पैग़म्बर बनूंगा—आदि।

"लेकिन उन देशों में रहना एक विशाल अदृश्य भट्टी में रहने के समान है जो आपकी सारी शक्ति को सुखा डालती है। आप चाहे चम्मच भर-भर के कुनीन खायें, फिर भी बुखार से मुक्ति नहीं मिलती। बुखार भी ऐसा जो आपका सारा सत निचोड़ लेता है। शरीर में थकान और आलस आ जाती है। बदक़िस्मती से अगर किसी यूरोपियन को शहर छोड़कर किसी जंगल या दलदल में बसी बस्ती में जाकर रहना पड़ा तो समझिये उसका अन्त निकट आ गया। कुछ ही दिनों में वह पागल हो

जाता है। देसी लोगों की संगत में रहकर शराब और अफ़ीम की लत पड़ जाती है। कुछ तो बिल्कुल वहशी बन जाते हैं और परपीड़ा को देखकर उन्हें आनन्द मिलता है। सब के सब विक्षिप्त हो जाते हैं। वहां जी स्वदेश लौटने के लिये तड़पता है, पक्की सड़कों और ऊंची इमारतों को देखने के लिये, ऐसे कमरे में बैठने के लिये जिसकी खिड़कियों पर शीशे लगे हों और जिसमें यूरोपियन औरतें और मर्द बैठे हों। कई सालों के बाद जब उसे छुट्टी मिलती है तो वह अनुभव करता है कि वह इतना आलसी और आरामतलब हो गया है कि उसे छुट्टियों में भी दिलचस्पी नहीं रही। वह स्वदेश लौटकर क्या करेगा ? वह जानता है कि उसके सगे-संबंधी उसे भूल गये हैं, और वहां एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो उसका स्नेहपूर्वक स्वागत करेगा। इसलिये वह वहीं दलदल में सड़ता रहता है या जंगल की गर्मी में भुनता रहता है। न जाने किस मनहूस घड़ी में मैंने आजादी बेचकर गर्म देशों की आजीवन कारा स्वीकार कर ली।

"इसके अलावा छुट्टियों में मेरे स्वदेश न लौटने के कई कारण थे। मैंने जर्मनी में डाक्टरी की शिक्षा पाई थी, तदुपरान्त मुझे लीपज़ीग के एक हस्पताल में अच्छी नौकरी भी मिल गई थी। उस समय की मेडिकल पत्रिकाओं में आपको अक्सर मेरी चर्चा दिखाई देगी, क्योंकि मैंने मामूली रोगों के लिये एक नई चिकित्सा प्रणाली ईजाद की थी, जिसके कारण मैं अल्पायु में ही सारे देश में ख्याति पा गया था।

"लेकिन मैं एक स्त्री के प्रेम में फंसकर अपना जीवन बर्बाद कर बैठा। उससे मेरा परिचय हस्पताल में हुआ था, उन दिनों वह एक ऐसे पुरुष के साथ रहती थी, जिसने उसके रूप पर पागल होकर आत्महत्या तक करने का असफल प्रयत्न किया था। मैं भी उस स्त्री के रूप पर पागल हो उठा। उसमें एक ऐसी कठोरता और अहंकार था जिसके आगे मैं पानी पानी हो जाता था। वैसे तो सभी रौबीली और घमंडी औरतें मुझ पर जादू डाल सकती हैं, लेकिन इस औरत ने तो मुझे बिल्कुल मिट्टी में मिला दिया। वह मुझसे जो चाहती करवाती थी, मैं

उसका बिना खरीदा गुलाम था (इन बातों की स्मृति से ही मेरी आत्मा कांप उटती है, हालांकि इस घटना को बीते आठ साल हो चुके हैं)। उसकी खातिर मैंने हस्पताल की तिजोरी से धन भी चुराया। एक दिन मेरा भेद खुल गया और मेरे सुखद सपने चूर-चूर हो गये। मेरे एक चचा ने नुक़सान पूरा कर दिया, लेकिन उस हस्पताल से मेरी नौकरी छूट गई।

"उसी समय मैंने सुना कि हालैंड की सरकार को उपनिवेशों के लिए डाक्टरों की सख्त ज़रूरत है। उन्हें जर्मन डाक्टरों को नौकरी देने में कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि वे उन्हें बहुत अच्छा वेतन देने के लिये भी राजी हैं। मैंने यह भी सुन रखा था कि पूर्वीय देशों में इतनी हरियाली है कि क़ब्रों के पत्थर भी पत्तों और फूलों से ढँक जाते हैं। हर नौजवान यही समझता है कि बीमारी और मौत उसके लिये नहीं, बल्कि दूसरों के लिये बनी है।

"ख़ैर परिस्थितियों से मजबूर होकर मैंने रोटर्डम जाकर सरकार से दस साल का कन्ट्रेक्ट किया और बदले में मुझे नये नोटों का एक ढेर मिला। आधा रुपया मैंने अपने चचा को भेज दिया, बाकी रुपया मैंने रोटर्डम की एक लड़की को दे दिया जिसकी शक्ल मेरी ज़ालिम प्रेयसी से मिलती थी। योरप से प्रस्थान करते समय मेरी जेब में फूटी कौड़ी तक न थी, यहां तक कि कलाई में घड़ी भी न थी। मातृभूमि से विदा लेते समय मेरे मन में उदासी की एक रेखा तक न खिंची। मैं चुपचाय डैक पर बैठकर पूर्वीय देशों के नीले आकाश के सपने देखने लगा। मुझे लगता था कि वहां के हरे-भरे जंगलों और एकान्त से मेरे मन को अवश्य शान्ति मिलेगी।

लेकिन कुछ ही दिनों में एकान्त से मेरा मन भर गया। सरकार ने मुझे बटेविया या सुराबया जैसे किसी बड़े शहर में, जहां यूरोपियन लोग रहते हैं, जहाँ क्लब, गाल्फ़ खेलने के मैदान, किताबों और अखबारों की सुविधाएं प्राप्त हैं, न भेजकर एक मनहूस बस्ती में भेज दिया, जहाँ

'सोसाइटी' के नाम पर दो या तीन बुद्धू, गर्मी से सूखे अफ़सर, और एक-आध एंग्लो-इंडियन थे। बस्ती घने जंगलों, रबर के बाग़ों और दलदलों से घिरी हुई थी।

"नये स्थान पर आकर कुछ दिन मेरा मन ठीक रहा। मैं बड़ी मेहनत से पढ़ने लगा। उधर हमारे वाइस रेज़ीडेंट, जो उन दिनों इलाके के दौरे पर आये थे, मोटर दुर्घटना में घायल हो गये। उनकी टांग की हड्डी कई स्थान से टूट गई। आस-पास कोई डाक्टर न था। मैंने उनका ऑपरेशन किया और वे जल्द ही स्वस्थ हो गये। इससे मेरी प्रतिष्ठा और आमदनी बढ़ गई। मैं आदिवासियों के प्रयोग में आने वाले हथियारों और ज़हरों का मानव-शास्त्रीय अध्ययन करने लगा। लेकिन कुछ ही दिनों में मेरा उत्साह ठंडा पड़ गया। इस बीच मैं जीवन में दिलचस्पी बनाये रखने के लिये दर्जनों विषयों को आज़मा चुका था।

"लेकिन शारीरिक उत्साह के साथ मेरा मानसिक उत्साह भी समाप्त हो गया। यह जलवायु का असर था। बस्ती के अन्य यूरोपियनों की सूरत से मुझे चिढ़ हो गई थी। मैंने उनसे मिलना-जुलना बन्द कर दिया और खूब शराब पीकर अपने विचारों की दुनिया में ग़र्क रहने लगा। मैं सोचता था कि सिर्फ दस साल की बात है, उसके बाद मैं रिटायर होकर स्वदेश लौट जाऊँगा और नये सिरे से ज़िन्दगी शुरू करूँगा। तब तक प्रतीक्षा के सिवाय और कोई चारा न था। मैं आज भी वहां होता अगर एक अप्रत्याशित घटना आकर मेरी ज़िन्दगी को बदल न देती। मैं इस घटना का बयान आप से करूँगा।"

× × ×

सहसा अंधेरे में उसकी आवाज़ रुक गई। रात्रि की निस्तब्धता में जहाज़ के इंजनों की घर्र-घर्र साफ़ सुनायी दे रही थी। मेरे मन में सिगरेट सुलगाने की इच्छा हुई, लेकिन यह सोचकर कि कहीं दियासलाई की

रोशनी से मेरे साथी के विचार-तन्तु उलझ न जायें, मैं बिना हिले-डुले बैठा रहा।

कुछ देर तक खामोशी छायी रही। मैं सोचने लगा, मेरा साथी अपने रहस्य को क्या अपने मन में ही रखेगा ? कहीं उसकी आंख तो नहीं लग गई ?

मैं इन्हीं शंकाओं में डूबा था कि जहाज़ की घड़ी ने तीन का घंटा बजाया। मेरे साथी ने ह्विस्की का एक घूंट पीकर अपनी कहानी शुरू की। उसके स्वर में गहरी भावुकता थी।

"इसी तरह दिन बीतते गये। महीनों तक मैं उस मनहूस बस्ती में निष्क्रिय पड़ा रहता, अपने जाले में टंगे मकड़े की तरह। बरसात का मौसम ख़त्म हो गया था। मुझे छत पर गिरती मूसलाधार वर्षा को देखते हफ़्तों बीत गये थे। इस बीच मुझे किसी इन्सान के दर्शन नहीं हुए थे। अर्थात् यूरोपियन के। मैं अपने बंगले में देशी नौकरों के साथ अकेला ही था। ह्विस्की मेरी एकमात्र साथिन थी। मेरा मन स्वदेश लौटने के लिये तड़पने लगा। एक उपन्यास में जगमगाती सड़कों और यूरोपियन सुन्दरियों का विवरण पढ़कर मेरे हाथों की उंगलियाँ कांपने लगीं। आप एक घुमक्कड़ हैं, इसलिये आप किसी देश के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझ सकते। गर्म देशों में रहने वाला गोरा आदमी अक्सर स्वदेश की याद में पागल हो उठता है, और प्रलाप करने लगता है। (यह भी एक प्रकार का रोग है।) एक दिन मैं भी ऐसी विक्षिप्त अवस्था में ऐटलस के पन्ने पलट रहा था और स्वदेश तथा विदेश-यात्रा के स्वप्न देख रहा था। इसी समय मेरे दो नौकरों ने आकर खबर दी कि एक महिला मुझसे मिलने आई है—एक यूरोपियन महिला नौकरों के आश्चर्य का ठिकाना न था।

"मुझे भी यह ख़बर सुनकर ताज्जुब हुआ क्योंकि मुझे किसी गाड़ी या मोटर के आने की आवाज़ तक नहीं सुनाई दी। इस सुनसान बस्ती में यूरोपियन महिला का क्या काम।

"मैं अपने बंगले की दूसरी मंजिल के बरामदे में बैठा सुस्ता रहा था। उस बियावान में मुझसे कौन मिलने आता था, जो मुझे अपने कपड़ों की परवाह होती ? मैंने जल्दी से अपना हुलिया ठीक किया और घबराहटभरे क़दमों से नीचे आया। किसी अज्ञात अमङ्गल की आशंका से मेरा दिल धड़क रहा था। यह महिला कहां से आ टपकी ? उसे मुझसे क्या काम हो सकता है ?

"महिला बैठक के साथ वाले कमरे में बैठी थी। उसकी कुर्सी के पीछे उसका चीनी नौकर खड़ा था। महिला का चेहरा एक जालीदार नक़ाब से ढँका था। मेरे कुछ कहने से पहले ही उसने उठकर मेरा अभिवादन किया और अंग्रेज़ी में बोली :—

"गुड मार्निङ्ग, डाक्टर ! मैं बिना समय मांगे यहां चली आई, इसके लिये क्षमा चाहती हूँ। आप बुरा तो नहीं मान रहे ?" मालूम होता। था कि वह कोई रटी-रटाई स्पीच दे रही है। "मैं इस बस्ती से गुज़र रही थी, कि मुझे अचानक अपनी मोटर यहाँ रोकनी पड़ी। सहसा मुझे याद आया कि आप भी यहीं रहते हैं !" कैसी विचित्र पहेली थी। अगर वह सचमुच मोटर में यात्रा कर रही थी तो वह मोटर को मेरे बंगले तक क्यों नहीं लाई ? वह फिर कहने लगी, "मैंने आपकी बड़ी तारीफ़ सुनी है। आपने वाइस रैज़ीडेंट की जान बचाई है। उस दिन मैंने उन्हें अच्छी तरह गाल्फ़ खेलते हुए देखा है। इलाके के हर आदमी की ज़बान पर आपका नाम है। अगर आप शहर के हस्पताल में आजायें तो हम फ़ौरन अपने बूढ़े, मरियल सर्जन और उसके दो सहकारियों को निकाल बाहर करें। आप कभी शहर क्यों नहीं आते ? इस जंगल में योगी की तरह क्यों रहते हैं ?"—

"वह बोलती चली गई—मुझे उसने एक शब्द बोलने तक का अवसर न दिया। उसके बातूनीपन का कारण उसकी घबराहट थी, जिसे देखकर मैं भी घबरा उठा और मन ही मन सोचने लगा, 'आखिर यह औरत इस तरह क्यों बकवास किये जा रही है ? अपना नाम क्यों नहीं बताती ?

उसने मुंह पर नकाब क्यों डाल रखा है ? क्या यह पागल है ? या ज्वर में प्रलाप कर रही है ?' मैं निरुपाय मूर्ख की तरह चुपचाप बैठा उसकी बकवास सुन रहा था। अन्त में जब उसके शब्दों की बाढ़ कम हुई तो मैंने उसे ऊपर के बरामदे में चलने का निमन्त्रण दिया। उसने नौकर को वहीं रुकने का इशारा किया और लपक कर सीढ़ियों पर चढ़ने लगी।

"आपका घर बड़ा सुन्दर है," उसने मेरे अध्ययनकक्ष की ओर सरसरी नजर डालते हुए कहा "काश मैं ये सारी पुस्तकें पढ़ सकती !" वह किताबों की अलमारी के सामने खड़ी होकर किताबों के नाम पढ़ने लगी। मैं सोच रहा था, यह चुप कैसे हो गई ?

"क्या आपके लिए चाय मंगवाऊँ ?" मैंने पूछा।

उसने बिना मेरी ओर देखे ही उत्तर दिया "जी नहीं, धन्यवाद ! मेरे पास समय बहुत थोड़ा है। वाह ! यहाँ तो फ्लाबेयर की पुस्तकें भी मौजूद हैं। फ्लाबेयर भी खूब लिखता है। अच्छा तो आप फ्रेंच भी जानते हैं। आप जर्मन लोग भी कितने शानदार हैं। आपको बचपन से ही विदेशी भाषायें पढ़ाई जाती हैं। आपका उच्चारण सुनकर बड़ा आनन्द आता है। वाइस रैजीडेंट कसम खाकर कहते हैं कि वे आपके सिवा किसी को अपने शरीर पर छुरी चलाने की इजाजत नहीं दे सकते। हमारे बुढ़ऊ सर्जन को तो सिर्फ ताश खेलना आता है। लेकिन आप !·····मैंने भी निश्चय किया कि आपको ही दिखाऊंगी। आज मैं मोटर लेकर इस बस्ती की ओर निकल आई। मेरे मन ने कहा, 'ऐसा अच्छा मौका फिर नहीं मिलेगा···लेकिन···।" उसकी पीठ मेरी ओर थी। "शायद आपको आज फुर्सत नहीं। मैं फिर किसी दिन आ जाऊंगी।"

'यह औरत साफ-साफ बात क्यों नहीं कहती ?' मैं मन ही मन खीज रहा था। लेकिन मैंने उसे कहा कि मैं हर समय उसकी सेवा के लिए प्रस्तुत हूँ।

उसने एक पुस्तक के पन्ने पलटते हुए कहा, "चलिये आज ही सही—बात बड़ा मामूली है—ऐसी तकलीफें औरतों को अक्सर हो जाती हैं—

जी का मिचलाना—सिरदर्द और बेहोशी। आज सुबह मोटर चलाते समय मैं अचानक बेहोश हो गई। मेरे नौकर ने मुझे संभाल लिया वरना मैं सड़क पर लुढ़क जाती। पानी पीने से तबियत कुछ हल्की हुई। शायद शोफर बहुत तेज़ रफ़्तार से मोटर चला रहा था। क्यों डाक्टर साहब! आपका क्या ख्याल है?"

"मैं पहले से ही क्या राय दे सकता हूँ। क्या आप इससे पहले भी कभी बेहोश हुई थीं?"

"जी नहीं—पिछले कुछ हफ़्तों से ही मुझे यह तकलीफ होने लगी है। सुबह के वक्त मेरा जी बहुत मिचलाता है।"

वह अलमारी से दूसरी पुस्तक निकाल कर उसके पन्ने पलट रही थी। उसका व्यवहार इतना रहस्यमय क्यों था? वह नकाब उलटकर मेरी ओर क्यों नहीं देख रही थी? मैं भी जानबूझ कर चुप रहा। अगर वह सनकी हो सकती थी, तो मुझे सनकी होने में क्या आपत्ति थी! कुछ देर बाद उसने फिर लापरवाही के स्वर में कहा,

"क्यों डाक्टर! डरने की तो कोई बात नहीं है न? मुझे इस मनहूस देश की कोई बीमारी तो नहीं लग गई?"

"मैं आपकी नब्ज़ देखना चाहता हूँ। शायद आपको बुखार हो।" मैं उसकी ओर बढ़ा, लेकिन वह पीछे हट गई।

"नहीं डाक्टर, मुझे बुखार बिल्कुल नहीं है। मैंने उसी दिन से टम्प्रेचर लेना शुरू कर दिया था—जिस दिन से मुझे बेहोशी आई थी। मुझे बुखार कभी नहीं हुआ। न ही मेरा हाज़मा गड़बड़ है।"

मैं क्षण भर के लिए अप्रतिभ हो गया। उस स्त्री के रहस्यमय व्यवहार से मेरे मन में संदेह पैदा हो गया। जरूर वह मुझसे कुछ कहलवाना चाहती है। क्या वह दो सौ मील का सफ़र करके, इस निर्जन बस्ती में मुझसे केवल साहित्य-चर्चा करने के लिए ही आई थी। मैंने कुछ देर रुककर कहा "माफ़ कीजिए, क्या मैं आपसे कुछ सीधे सवाल पूछ सकता हूँ?"

"जरूर, जरूर ! डाक्टर के पास मरीज़ और किसलिए आते हैं ?" उसने फिर पुस्तकों की अलमारी की शरण लेते हुए उत्तर दिया।

"आपके कितने बच्चे हैं ?"

"सिर्फ एक लड़का है।"

"क्या बच्चे के जन्म से पहले भी आपकी अवस्था यही थी, जैसी अब है ?"

"जी।"

कितना कोरा जवाब था ! लेकिन उसका बातूनीपन न जाने कहाँ गायब हो गया था।

"हो सकता है, इस बार भी आप माँ बनने वाली हों ?"

"जी।"

फिर वही तीखा उत्तर।

"आप मेरे कंसल्टेशन रूम में चलिए। जांच के बाद सारी स्थिति का पता चल सकेगा।"

सहसा उसने मेरे सामने आकर कहा : "नहीं डाक्टर, जाँच की कोई ज़रूरत नहीं। मुझे अपनी अवस्था का पूरा ज्ञान है।" मुझे लगा, नकाब के भीतर से उसकी तीव्र दृष्टि मुझे भेद रही है।

× × ×

फिर मौन।

मेरे साथी ने ह्विस्की का एक घूंट पी कर फिर कहा।

"ज़रा खुद ही सोच कर देखिये। उस मनहूस जगह में रहकर मैं कितना तंग आ गया था। फिर यह औरत न जाने कहां से वहां प्रकट हुई। मैंने कई वर्षों के बाद किसी औरत की शक्ल देखी थी—मुझे लगा कि कोई भयंकर—खौफनाक चीज़ मेरे कमरे में दाखिल हुई है। उसके लौह इरादे को देखकर मेरी रूह कांप उठी। मालूम होता था कि वह गप्पें हाँकने के लिये मेरे पास आई थी। लेकिन उसकी मांग को सुनकर मुझे ऐसा लगा, जैसे किसी ने मेरे सीने में छुरा भोंक दिया

हो। मैं समझ गया था कि वह मुझसे क्या चाहती है। इससे पहले भी कई औरतें मुझसे यह माँग कर चुकी थीं, लेकिन उनकी आँखों में आँसू होते थे, और वे मुझसे विनती करतीं थीं कि मैं उन्हें मुसीबत से छुटकारा दिलाऊँ। लेकिन इस औरत में कितना दुःसाहस और मर्दानगी थी। मैं उसके सम्पर्क में आते ही समझ गया था कि उसकी इच्छाशक्ति मुझसे कहीं अधिक प्रबल है और मुझे उसके आगे झुकना पड़ेगा। लेकिन उसे देखते ही मेरे मन में उस औरत के प्रति विद्रोह उत्पन्न हुआ। वह मुझे अपनी शत्रु मालूम होती थी।

"मैं कुछ देर तक बिल्कुल चुप रहा। मुझे लगा कि उसकी आँखें मानों मुझे कुछ कहने के लिये चुनौती दे रही हैं। लेकिन मैं उसकी माँग पूरी करने के लिये तैयार न था। मैं उसके बातूनीपन का मज़ाक उड़ाने के लिये इधर-उधर की बातें करता रहा। मैंने ऐसा अभिनय किया मानों मैं उसका अर्थ नहीं समझ सका। मैं उसके मुँह से ही उसका प्रयोजन सुनना चाहता था। मैं उसके साथ किसी प्रकार का समझौता करने के लिये तैयार न था। मैं चाहता था, वह भी बाकी औरतों की तरह मेरे सामने गिड़गिड़ाये—सिर्फ़ इसलिये क्योंकि उसने मेरे साथ इतना धृष्ट व्यवहार किया था। लेकिन उधर मैं उसके व्यक्तित्व के आगे पानी-पानी हो रहा था।

"मैंने उससे कहा कि अक्सर गर्भवती होने पर स्त्रियों में ये लक्षण प्रकट होते हैं, इनसे घबराने की कोई बात नहीं। वह एक स्वस्थ बच्चे की माँ बनेगी। मैंने उसे बहुत सा स्त्रियों के उदाहरण सुनाये, जिनके बारे में मैंने पढ़ा और सुना था। मैंने उसकी बातों को मज़ाक में टाल दिया। मैं जानबूझ कर बोलता गया, ताकि वह मुझे बीच में टोककर अपना असली अभिप्राय समझाये।

उसने अपने हाथ के एक इशारे से मेरे सारे शब्द-जाल पर पानी फेर दिया।

"दरअसल बात यह है डाक्टर, कि पहले बच्चे के पैदा होने से

पहले मेरी सेहत बहुत अच्छी थी। इन दिनों मेरा दिल कमज़ोर है।"

"क्या आपको हृदयरोग है! तब तो फ़ौरन आप की जांच होनी चाहिये।" मैंने मेज़ पर से स्टेथोस्कोप उठाते हुए कहा।

लेकिन उसने सेना के सार्जेन्ट की भाँति कड़कती आवाज़ में कहा,

"जी नहीं जांच में समय नष्ट करने की कोई ज़रूरत नहीं है। आपको मेरी बातों पर विश्वास करना चाहिये। मुझे आप में पूरा विश्वास है।"

यह युद्ध की चुनौती थी। मैंने भी उस चुनौती को मंज़ूर कर लिया और उत्तर दिया। "विश्वास का अर्थ है स्पष्टवादिता। आप मुझ से साफ़-साफ़ बात क्यों नहीं करतीं? मेहरबानी करके अपना नकाब उतार दीजिये और मेरी किताबों के पन्ने पलटने की बजाये मुझे अपना सही अभिप्राय बताइये। क्या किसी डाक्टर से मिलते समय कोई चेहरे पर नक़ाब डालकर जाता है?"

उसने भी मेरी चुनौती स्वीकार कर ली और फ़ौरन अपने चेहरे पर से नक़ाब हटा दिया। मेरे मन की आशंका ठीक निकली। उसके चेहरे पर आत्मसंयम और गर्व की छाप थी। वह उन अंग्रेज़ चेहरों में से था, जिनके सौन्दर्य की आभा को बुढ़ापा भी नष्ट नहीं कर सकता। वह स्त्री असाधारण रूप से सुन्दर थी। उसकी नीली आँखों में आत्म-विश्वास की झलक थी, फिर भी वे भावुकता से रहित न थीं। उसके भींचे हुए ओंठों में से आत्मा का कोई रहस्य बाहर नहीं निकल सकता था। एक क्षण के लिये हम दोनों टकटकी लगाकर एक दूसरे को देखते रहे। उसकी क्रूर, निर्मम और प्रश्नसूचक दृष्टि के आगे मेरी आँखें अपने आप झुक गईं।

उसके टखने काँप रहे थे। वह अपने भावावेश पर काबू नही पा सकी थी। सहसा उसने पूछा,

"डाक्टर, क्या तुम अभी तक नहीं समझ सके कि मैं तुमसे क्या चाहती हूँ ?"

"मैं बूझने की कोशिश कर रहा हूँ। आइये खुलकर बातें करें। आप अपनी वर्तमान स्थिति से छुटकारा पाना चाहती हैं, और मुझसे आशा करती हैं कि मैं आपके जी मिचलाने का कारण दूर कर दूं। क्यों ठीक है न ?"

"हाँ।"

उसकी आवाज़ गला काटने की मशीन की धार की तरह तेज़ थी।

"क्या आप जानती हैं कि ऐसा करना डाक्टर और मरीज़ दोनों के लिये खतरनाक साबित हो सकता है।"

"हाँ।"

"इस तरह के आप्रेशन ग़ैरकानूनी होते हैं।"

"लेकिन विशेष परिस्थितियों में यह ग़ैरकानूनी नहीं·····जब यह अत्यावश्यक हो।"

"यह फैसला तो डाक्टर ही करता है।"

"आप भी तो डाक्टर हैं।"

"उसने बिना पलक झपके मेरी ओर देखा, मानों वह मुझे हुक्म दे रही हो। उसके दृढ़ निश्चय के आगे मुझ जैसे कमज़ोर व्यक्ति की इच्छा-शक्ति डगमगा गई। फिर भी मैंने सोचा, "इस औरत के आगे अपने मन की कमजोरी नहीं प्रकट होने देनी चाहिये। मुझे कुछ टाल-मटोल करनी चाहिये।"

"किसी भी डाक्टर के लिए ऐसा फैसला करना कठिन होता है। मैं अपने किसी परिचित डाक्टर से सलाह लेकर देखूंगा·····"

"मैं आपकी मरीज़ हूँ—आपके परिचित डाक्टरों से मुझे कोई सरोकार नहीं !"

"आप इस काम के लिये सिर्फ मेरे पास क्यों आईं ?"

उसने क्रूर दृष्टि मेरी ओर फेंकते हुए कहा—

"तो लीजिये, सुनिए ! मैं आपके पास इसलिए आयी हूँ, क्योंकि आप एक दूर की बस्ती में रहते हैं, क्योंकि आप मेरे लिये एक अपरिचित व्यक्ति हैं, क्योंकि आप एक कुशल डाक्टर के रूप में प्रसिद्ध हैं, और क्योंकि……"

वह पहली बार हिचकिचाई, फिर बोली, "क्योंकि आप शायद जावा में अधिक दिन नहीं ठहरेंगे, विशेषकर जब आपको स्वदेश लौटने के लिये एक बड़ी रक़म मिल जायगी !"

मेरे सारे शरीर में सनसनी दौड़ गई। इस व्यावसायिक प्रस्ताव को सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो गये। न रोना-धोना, न मिन्नत-आरजू ! वह कैसी विचित्र स्त्री थी। मालूम होता था कि उसने मन ही मन मेरी क़ीमत आंक ली थी और अब वह धृष्टतापूर्वक मुझे ख़रीदने आई थी। सच पूछिए तो उसकी गुस्ताख़ी के आगे एक क्षण के लिये मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई थी। लेकिन मैंने साहस बटोरकर उसे ताना दिया :

"आप जिस बड़ी रक़म की ओर संकेत कर रही हैं, वह आप मुझे किसलिये देना चाहती हैं ?"

"आपकी सहायता के बदले में, और इसलिए कि आप जावा से तुरन्त प्रस्थान कर सकें !"

"क्या आप जानती हैं कि इससे मुझे कितना नुक़सान पहुँचेगा ?"

"लेकिन मैं आपको इतनी फ़ीस दूँगी कि आपका सारा नुक़सान पूरा हो जायगा।"

"इस साफ़गोई के लिये धन्यवाद ! लेकिन क्या आप मुझे ठीक-ठीक बता सकती हैं कि वह रक़म कितनी होगी ?"

"एक लाख रुपये ! आपको एम्स्टर्डम की बैंक के नाम एक लाख का ड्राफ्ट मिल जायगा।"

मैं क्रोध और आश्चर्य से कांप उठा। स्पष्ट था कि उस औरत ने पहले से ही मुझे ख़रीदने की पूरी योजना बना रखी थी और मुझ से मिलने से पूर्व ही उसे विश्वास हो गया था कि मैं एक लाख रुपये के बदले

मैं डच सरकार की नौकरी छोड़ दूंगा। मेरे जी में आया कि ज़ोर से उसके मुंह पर एक थप्पड़ मारूँ। उसके अपमानजनक व्यवहार से मेरे मन में असह्य पीड़ा हो रही था। लेकिन ज्यों ही मैं क्रोध से उठकर खड़ा हुआ, वह भी उठकर खड़ी हो गई। उसके क्रूर चेहरे और उद्दण्ड आंखों को देखकर मेरे भीतर का सोया राक्षस जाग उठा और मैं उत्कट वासना से जलने लगा। उसने भी शायद मेरी भावनाओं का अनुमान लगा लिया था, क्योंकि वह मेरी ओर इस तरह देख रही थी जैसे कोई एक दयनीय भिखारी की ओर देखता है।

उसी क्षण से मेरा शरीर घृणा से जलने लगा। उसे भी इस बात का पूरा आभास था, क्योंकि वह अपने स्वार्थ के लिये मुझे इस्तेमाल करना चाहती थी, इसलिए उसे मन ही मन मुझ से घृणा थी। मैं उससे इसलिए घृणा करता था क्योंकि उसने मिन्नत करने की बजाय धौंस से काम लिया था। इस क्षण-भर की चुप्पी ने दोनों का संकोच दूर कर दिया और पहली बार स्पष्ट बातें हुई। मुझे लगा मानो किसी ज़हरीले सांप ने मुझे डस लिया हो—मेरे मन में एक बड़ा भयंकर विचार आया, मैंने उससे कहा·····मैंने उससे कहा·····"

"शायद आपको मेरे बारे में ग़लतफहमी न हो जाये, इसलिए पहले मैं आपको यह बताऊँगा कि मुझ पर यह पागलपन कैसे सवार हुआ।"

× × ×

यह कहकर वह रुक गया। ह्विस्की पीने के बाद फिर उसकी आवाज़ में तेज़ी आ गई—

"मैं अपना पाप छिपाने की कोशिश नहीं कर रहा, लेकिन आप मेरी बातों का ग़लत अर्थ न लगायें, इसलिए मैं आपको बताना चाहता हूँ कि दुनिया जिसे 'शरीफ़' कहती है, वैसा आदमी मैं कभी नहीं रहा। फिर भी मैंने भरसक मुसीबतज़दा लोगों की सहायता की है। जावा जैसी मनहूस जगह में भी मैंने अपने उपार्जित ज्ञान द्वारा वहां के निवासियों को स्वास्थ्य प्रदान किया था। आप जानते हैं लोकसेवा में कितना

आनन्द है, इन्सान कुछ देर के लिए ईश्वर बन जाता है ।

एक बार एक देसी आदमी को सांप ने काट खाया, और उसकी टांग सूजकर सर के बराबर मोटी हो गई। उसे डर था कि सिर्फ टांग काटने से ही उसके प्राण बच सकते हैं, लेकिन मैंने टांग काटे बगैर ही उसके प्राण बचा दिए। उस समय मेरे आनन्द की सीमा न थी । जब किसी देसी औरत को बुखार आता, तो मैं मीलों लम्बी यात्रा करके उसे देखने जाता। लीपजिग के अस्पताल में तो मैंने कई बार औरतों के गर्भ नष्ट करने में मदद दी थी। लेकिन वे औरतें मरीज़ों की तरह चीख़ती चिल्लाती हुई मेरे पास आती थीं, और मुझ से प्रार्थना करती थीं कि मैं उन्हें मौत के मुंह से बचा लूं। उनकी दयनीय स्थिति देखकर मेरा हृदय करुणा से पिघल जाता था।

"लेकिन इस औरत की बात दूसरी थी। मैं आपको कैसे समझाऊँ ! उसे देखते ही मेरा दिल जल-भुनकर खाक हो गया था। ज़रा उसकी गुस्ताख़ी तो देखिए—कहने लगी, 'मैं यों ही घूमती-फिरती आप से मिलने आ गई ।' उसके व्यवहार से मेरे भीतर का सोया हुआ राक्षस जाग उठा। उसकी तड़क-भड़क देखकर मुझे बड़ा क्रोध आया । जिस ख़तरे से औरतें डरती हैं, उसके प्रति उसे उदासीन देखकर मुझे मन ही मन चिढ़ हुई । फिर क्या गर्भवती स्त्रियां गॉल्फ़ खेलती फिरती हैं या मोटरों की सैर करती हैं ! मैं मन ही मन कल्पना करने लगा, कि वह घमंडी औरत जो मुझे अपने पैरों की मिट्टी से अधिक कुछ नहीं समझती, और जो अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए यहां आई है—आज से दो-तीन महीने पूर्व उसने अजन्मे शिशु के पिता की बाँहों में किस तरह आत्म-समर्पण किया होगा ! रह-रहकर यही विचार मुझे परेशान कर रहा था। वह मुझे कितना तुच्छ जीव समझती थी ! मैंने भी मन ही मन निश्चय किया कि जो भी हो मैं उसके प्रेमी की तरह ही अपने बल और पौरुष से उसके शरीर पर अपना अधिकार करूँगा। मैं चाहता हूँ कि आप इस बात को अच्छी तरह समझ लें। इससे पहले मैंने कभी डाक्टर के

पद का दुरुपयोग नहीं किया था। इस बार भी मैं वासना में अन्धा होकर उसके शरीर पर अधिकार नहीं करना चाहता था। यकीन मानिए, मैं सिर्फ उसके घमंड को चूर करने के लिए, अपने पौरुष की रक्षा करने के लिए और उसके अहं को चोट पहुँचाने के लिए ही ऐसी कामना कर रहा था।

"जैसा कि मैं पहले आपको बता चुका हूँ, धृष्ट और कर्कश स्वभाव वाली औरतें सदा मुझ पर जादू करती आई हैं। इसके अतिरिक्त सात बरसों से कोई भी यूरोपियन स्त्री मेरे आलिंगन में नहीं आई थी, न ही किसी स्त्री ने मेरे प्रणय-निवेदन को ठुकराया था। देसी लड़कियाँ बड़ी डरपोक होती हैं, और वे यूरोपियन 'मालिकों' के आगे आत्मसमर्पण करने में अपनी सार्थकता समझती हैं। उन्हें तो ज़रा-सा इशारा ही काफी है। उनकी सुशीलता से सारा मज़ा किरकिरा हो जाता है। अरब की लड़कियां ऐसी नहीं होतीं, जहां तक मेरा अनुमान है। चीन और मलाया की लड़कियाँ भी इतनी जल्दी आत्मसमर्पण नहीं करतीं। आप कल्पना कर सकते हैं, उस धृष्ट और घमंडी औरत को देखकर मुझे कितना रोमांच हुआ होगा, जिसके रहस्यमय व्यक्तित्व में एक अद्भुत आकर्षण था और जो अपनी वासना का प्रमाण साथ लिये घूम रही थी। मैं सोच रहा था—ऐसी औरत मुझ जैसे भूखे राक्षस के फंदे में कैसे अपने आप फँस गई। मानव समाज से दूर रहकर इन्सान राक्षस बन ही जाता है! मैं आपको ये बातें इसलिये बता रहा हूँ ताकि आप बाद में आने वाली घटनाओं की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकें। मेरे मन में उस समय यही विचार चक्कर काट रहे थे, जिनसे प्रेरित हो कर मैंने लापरवाही से कहा—

"एक लाख रुपये! जी नहीं मैं इसके लिये तैयार नहीं।"

"उसने मेरी ओर देखा, उसका चेहरा पीला पड़ गया था। वह समझ गई थी कि मेरी झिझक का कारण कुछ और है। उसने पूछा—

"फिर आप क्या फ़ीस चाहते हैं?"

"देखिये बात साफ़ हो जानी चाहिये। मैं कोई दुकानदार नहीं हूँ। शायद आप मुझे 'रोमियो जूलियट' नाटक जैसा निर्धन दवाफ़रोश समझ रही हैं जो सोने की खातिर ज़हर बेचता था। मैं आपको जतला देना चाहता हूँ कि इस तरह आपकी दाल नहीं गलेगी।"

"तो फिर आप यह काम नहीं करेंगे ?"

"जी नहीं, पैसे के लोभ से तो मैं ऐसा नहीं करूँगा।"

एक क्षण के लिये कमरे में निस्तब्धता छा गई। उसकी सांस मुझे सुनाई दे रही थी।

"आप और क्या चाहते हैं ?"

मैंने क्रोध में आकर उत्तर दिया, "सबसे पहले मैं यह चाहता हूँ कि आप मुझसे सौदेबाजी न करके इन्सान की तरह बात करें। आप मुझसे सहायता लेने आई हैं, न कि अपनी धन-संपत्ति का प्रदर्शन करने। किसी ने सच कहा है कि 'धन मानव आत्मा के लिये ज़हर है।' यदि आप मुझे इन्सान समझ कर मुझसे सहायता की प्रार्थना करेंगी तो मैं अवश्य आपकी सहायता करूँगा, क्यों कि मैं डाक्टर होने के साथ-साथ एक इन्सान भी हूँ। 'रोगियों से मिलने के समय' के अतिरिक्त मेरे पास और समय भी रहता है। आप उस समय भी तो आ सकती थीं।

उस औरत ने ओंठ भींचकर पूछा—

"अगर मैं आपसे प्रार्थना करूँ तो क्या आप मेरी सहायता करेंगे ?"

"लेकिन आप तो अब भी सौदेबाजी कर रही हैं। पहले याचना कीजिये फिर मैं आपको अपना निश्चय बता सकूँगा।"

उसने अड़ियल घोड़े की तरह सर हिलाकर कहा—

"आपसे याचना करने की बजाये मैं मर जाना अधिक पसंद करूँगी।"

यह सुनकर मेरे शरीर में से चिंगारियां निकलने लगीं, मैंने कड़क कर कहा—

"मैं जो चाहता हूँ—जबरदस्ती मांग लूँगा। आप अच्छी तरह

जानती हैं कि मैं क्या चाहता हूँ। वह मिलने पर ही मैं आपकी सहायता कर सकूंगा।"

उसने क्षणभर के लिये क्रुद्ध नेत्रों से मुझे देखा, (वह दृष्टि कितनी खौफ़नाक थी, यह मैं आपको कैसे बताऊँ ?) फिर उसका सारा आक्रोश शान्त हो गया, और वह खिलखिलाकर हँस पड़ी। लेकिन उस घृणा मिश्रित हँसी ने मुझे फिर पागल कर दिया। इस हँसी में हिंसा का ज्वालामुखी छिपा था, जिसका प्रभाव मेरे मन पर यह पड़ा कि मैं उस औरत के सामने अपनी आत्मा को गिराने के लिए तैयार हो गया। मेरी इच्छा हुई कि फौरन आगे बढ़कर उसके क़दमों को चूम लूं। उसके व्यंग के तूफ़ान से मेरे पांव उखड़ गये—उसी समय वह तीर की तरह कमरे से बाहर निकल गई।

"मैंने रुँधे गले से क्षमा-याचना की। लेकिन उसने मेरी एक न सुनी। जाने से पहले उसने मुझे कड़क कर हुक्म दिया, "ख़बरदार जो तुमने मेरा पीछा किया या यह जानने की कोशिश की कि मैं कौन हूँ ! इसका नतीजा बहुत बुरा होगा।"

आँख झपकते ही वह वहाँ से ग़ायब हो गई।

× × ×

कुछ देर चुप रहने के बाद मेरे साथी ने फिर कहना शुरू किया, "उसके आदेश ने मुझ पर जादू-सा कर दिया। मैं मन्त्र-मुग्ध दृष्टि से उसे देखता रह गया। सीढ़ियों से उतर कर उसने सदर दरवाज़े को बाहर से बंद कर दिया। मेरे मन में उसका पीछा करने की तीव्र इच्छा हुई—क्यों हुई इसका कारण मैं भी ठीक से नहीं जानता। शायद मैं अपने अपमान का बदला लेने के लिए उसका गला घोंटना चाहता था। लेकिन चाहते हुए भी मेरे कदम आगे नहीं बढ़े। उन्हें मानो लकवा मार गया था। मैं जानता हूँ, यह बात आपको हास्यास्पद लगेगी, लेकिन सच मानिए कि पाँच-दस मिनट तक तो मैं हिल-डुल भी नहीं सका।

"लेकिन शरीर में फिर से हरकत आते ही यह जादू टूट गया। बस्ती

से बाहर निकलने के लिए सिर्फ एक ही सड़क थी। मैं अपनी साइकिल लेने के लिए शेड की ओर भागा। लेकिन चाबी मैं कमरे में ही भूल आया था। जल्दबाज़ी में मैंने शेड के जर्जर दरवाज़े को तोड़ डाला और साइकिल पर सवार होकर पागल की तरह उस औरत का पीछा करने लगा। जी भी हो, मैं उसे मोटर में सवार होने से पहले ही जा पकड़ूंगा। मैं उससे ज़रूर बात करूंगा। धूल भरी सड़क क्षितिज तक फैली हुई थी। उस औरत का पीछा करने में मुझे जो फासला तै करना पड़ा, उससे मुझे मालूम हो गया कि उसके जाने के बाद मैं बहुत देर तक मंत्रमुग्ध-सा खड़ा रहा था। आखिर जंगल के मोड़ पर वह मुझे दिखाई दी, वह तेज क़दमों से बस्ती की ओर बढ़ रही थी। उसका चीनी नौकर उसके पीछे-पीछे चल रहा था। उसे फ़ौरन मेरे आने का आभास हो गया होगा, क्योंकि उसने रुक कर नौकर को ठहरने का आदेश दिया और अकेली ही आगे बढ़ गई। क्या वह एकान्त में मुझसे बातें करना चाहती थी? मैंने अपने साईकल की रफ़्तार तेज कर दी, सहसा चीनी नौकर ने आगे बढ़ कर मेरा रास्ता रोक लिया। मैंने उसे धकेल कर आगे बढ़ना चाहा कि मुंह के बल रेत में गिर पड़ा।

"अगले ही क्षण मैं कपड़े झाड़कर खड़ा होगया और नौकर को गालियाँ देता हुआ उसे मारने दौड़ा। लेकिन मेरे घूंसे का वार खाली गया। मैं अपनी साइकिल पर सवार होकर आगे जाने ही वाला था कि उस बदमाश ने आकर साइकिल का हैण्डल थाम लिया और टूटी-फूटी अंग्रेजी में कहा, 'जनाब यहाँ रुक जाइए।' आप को पूर्वीय देशों में रहने का अवसर नहीं मिला। इसलिए आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि इस देशी नौकर की यह अभद्रता मेरी लिए असह्य हो उठी। एक पीले चीनी चूहे की यह हिम्मत कि वह किसी गौरांग पुरुष का साइकिल पकड़ले और उसे रुकने के लिए कहे? मैंने फौरन उसके माथे पर एक घूंसा जमाया। उसके पैर लड़खड़ा गये, लेकिन हाथ अब भी मजबूती से साइकिल को पकड़े हुए थे। उसकी पतली-तिरछी आँखें भय से

आक्रान्त हो गई थीं। आखिर गुलाम जो ठहरा। लेकिन वह अपना दिल पक्का करके मेरी साइकिल को पकड़े रहा।

'जनाब यहीं रुकिए।' उसने फिर कहा।

"सौभाग्यवश मेरा पिस्तौल उस समय मेरी जेब में नहीं था, नहीं तो उसी क्षण उसे गोली से उड़ा देता। मैंने ज़ोर से डपट कर कहा, 'अबे कमीने कुत्ते, साइकिल छोड़ दे।' उसने भयभीत नेत्रों से मेरी ओर देखा, लेकिन साइकिल नहीं छोड़ा। मैंने गुस्से में आकर उसकी ठुड्डी पर घूंसा मारा। वह पीड़ा से तिलमिला कर सड़क पर लेट गया। मुझे डर था कि कहीं इस मारपीट में देर न हो जाय और वह औरत इस बीच वहाँ से ग़ायब न हो जाय। मैंने साइकिल पर सवार होने की कोशिश की तो मालूम हुआ कि गिरने के कारण साइकिल का अगला पहिया टेढ़ा होगया है। मैंने पहिये को ठीक करने की कोशिश की, लेकिन निराश होकर मुझे साइकिल वहीं धूल में पटकनी पड़ी, जहाँ नौकर खून में लथपथ पड़ा था। मैं बस्ती की ओर बेतहाशा भागा।

"जी हाँ, मैं सचमुच बेतहाशा भाग रहा था। आप नहीं समझ सकते कि एक यूरोपियन का देसी लोगों की भीड़ के सामने भागना कितना हास्यास्पद हो सकता है। खैर उस समय मुझे अपनी शालीनता का कुछ भी ध्यान न रहा था। मैं पागलों की तरह झोंपड़ियों के सामने से भागता हुआ आगे बढ़ा। बस्ती के लोग अपने एक गौरांग प्रभु डाक्टर को एक मामूली रिक्शा खींचने वाले कुली की तरह भागते हुए देखकर आश्चर्य से आँखें फाड़ फाड़ कर देख रहे थे।

"मैं जब बस्ती में पहुँचा तो मेरे कपड़ों में से पसीना चू रहा था। मैंने बदहवासी में लोगों से पूछा—

"मोटर किधर गई ?"

उत्तर मिला, "सरकार, अभी यहाँ से चली गई।"

लोग घूर-घूर कर मेरी ओर देख रहे थे। ज़रूर मेरा हुलिया पागलों जैसा रहा होगा। मेरे कपड़े धूल-कीचड़ में सने हुए थे। सड़क पर धूल

उड़ाती हुई उसकी मोटर वहाँ से जा चुकी थी। वह औरत मुझ से बच कर निकल गई। उसकी चाल कामयाब हो गई थी। वह जानबूझ कर अपने नौकर को पीछे छोड़ गई थी, ताकि मैं उसे पकड़ न सकूं।

लेकिन भागने से उस औरत को कोई लाभ नहीं हुआ! क्योंकि पूर्वीय देशों में यूरोपियन शासकों के परिवारों के नाम से सब लोग परिचित होते हैं। इस दृष्टि से जावा तो एक छोटे गाँव से भी अधिक पिछड़ा हुआ है। वहाँ अफ़वाहों का बाज़ार सदा गर्म रहता है। जब वह औरत मुझसे मिलने के लिए आई थी, तब उसकी अनुपस्थिति में उसका शोफ़र बस्ती के लोगों से गप्पें लड़ाता रहा था। कुछ ही मिनटों के भीतर मैंने उस औरत का नाम और पता मालूम कर लिया। वह उस बस्ती से डेढ़ सौ मील दूर राजधानी में रहती थी। वह, जैसा कि मैंने पहले ही अनुमान कर लिया था, अंग्रेज़ थी। उसका पति एक प्रसिद्ध डच व्यापारी था। पांच महीने से वह अमरीका में था और अब कुछ ही दिनों में लौटकर आने वाला था। उसके बाद पति-पत्नी इंगलैण्ड जाने वाले थे।

उसका पति पांच महीने से विदेश में था, लेकिन उस औरत का गर्भ अभी तीन महीने से अधिक पुराना न था।

× × ×

"अभी तक तो मैं आपको सारी बातें स्पष्ट बताता आया हूँ क्योंकि मेरा दिमाग़ बिल्कुल स्पष्ट था। डाक्टर होने के कारण मैं अपनी मानसिक गतिविधि की पूरी जांच कर सकता था। लेकिन इस घटना के बाद मैं एक दम विक्षिप्त हो गया। मेरे संयम का बांध टूट गया। मैं अच्छी तरह जानता था कि मैं पतन के गड्ढे में गिर रहा हूँ, फिर भी मैं अपने को रोक न सका। क्या आप जानते हैं कि बौरा जाना किसे कहते हैं?"

"हाँ, मैंने सुना है कि मलाया के लोग शराब के नशे में धुत होकर बौरा जाते हैं," मैंने उत्तर दिया।

"बौरा जाना नशे से भी अधिक भयंकर चीज़ है। बौराया आदमी पागल कुत्ते की तरह व्यवहार करने लगता है और अक्सर आवेश में

आकर हत्या तक कर डालता है। यह एक प्रकार का मानसिक रोग है। मैंने पूर्वीय देशों में इस तरह के कई मरीज़ देखे हैं। लेकिन मैं अभी तक इस रोग की प्रकृति नहीं समझ सका। एक हद तक तो पूर्वीय देशों की जलवायु और दम घोंटने वाली सीलन इसके लिए ज़िम्मेदार है। ऐसे वातावरण में रह कर स्नायुओं पर बड़ा दबाव पड़ता है। मैंने जितने मरीज़ देखे हैं, वे ईर्ष्या या जूए में हारने के कारण बौरा गये थे। बौराने से पहले मरीज़ को खुद भी पता नहीं चलता। देखने में वह बिल्कुल शान्त मालूम देता है, जिस तरह उस अपरिचित स्त्री के आने से पहले मैं अपने कमरे में शान्त बैठता था।

"अचानक बौराया आदमी अपना छुरा निकाल कर बेतहाशा सड़क पर दौड़ने लगता है और राह चलते किसी भी बेकसूर आदमी के पेट में छुरा भोंक देता है। रक्तपात से उसका आवेश और भी बढ़ जाता है। उसके मुँह से झाग निकलने लगते हैं। वह चिल्लाता हुआ और खून से सने छुरे को घुमाता हुआ फिर भागने लगता है। लोग भयभीत होकर रास्ते से हट जाते हैं और 'बौराया-बौराया' चिल्लाकर लोगों को सावधान करते हैं। सब जानते हैं कि मौत के सिवा और कोई ताक़त बौराए व्यक्ति का रास्ता नहीं रोक सकती। लोगों की हत्या करता हुआ वह अन्त में खुद भी पागल कुत्ते की तरह गोली से उड़ाया जाता है।

"मैं बौरा जाने के लक्षण अच्छी तरह समझता हूँ। इसीलिए कहता हूँ कि मैं उन दिनों बौरा गया था। उन दिनों की याद मेरे मन में अब भी ताज़ा है। मैं भी बौराए आदमी की तरह उस अंग्रेज़ औरत के पीछे बदहवास होकर भागा था। उस समय मेरे सामने सिर्फ एक ही लक्ष्य था कि किस तरह उस औरत को एक बार पकड़ लूं। उसका नाम और पता मालूम होते ही मैंने किसी से साइकिल मांगी और तेज़ी से अपने बँगले में लौट आया। फ़ौरन सूटकेस में दो सूट और जेब में नोटों का बण्डल डालकर मैं रेलवे स्टेशन की ओर भागा। मैंने ज़िलाधीश को ख़बर तक नहीं दी और न मैंने अपनी जगह किसी और डाक्टर का इन्तज़ाम

किया। नौकर-चाकर हुक्म के इन्तज़ार में खड़े हो गए, लेकिन मैं घरबार खुला छोड़कर अपने अतीत से सारा सम्बन्ध तोड़कर अज्ञात की ओर चल पड़ा। उस औरत के आने के एक घंटे बाद ही यह सारा काण्ड हो गया था।

"सच पूछिए तो यह जल्दबाज़ी बिल्कुल निरर्थक थी। लेकिन सोचने की फ़ुरसत उस समय किसे थी? जब मैं स्टेशन पहुँचा तो शाम होने को थी। जावा के पर्वतीय प्रदेशों में वर्षा से पटरी टूट जाने के भय से रेलें रात को नहीं चलतीं। वह रात मैंने किसी तरह डाक बँगले में काटी और पूरे दिन का सफ़र तय करने के बाद अगले दिन शाम को उस शहर में पहुँचा जहाँ वह औरत रहती थी। मुझे विश्वास था कि वह मोटर द्वारा मुझसे बहुत पहले वहाँ पहुँच गई होगी। गाड़ी से उतरकर मैं सीधा उसके घर पहुँचा। आप सोच रहे होंगे कि मैं कैसा अहमक हूँ। मैं जानता हूँ···मैं जानता हूँ, लेकिन बौराया आदमी तो बौराया होता है। वह अपनी बदहवासी में आगा-पीछा नहीं सोचता।

"मैंने नौकर के हाथ अपना कार्ड अन्दर भिजवाया (चीनी नौकर वहाँ नहीं था। शायद वह अभी तक लौट नहीं सका था)। अन्दर से ख़बर मिली कि मालकिन बीमार हैं और किसी से नहीं मिल सकतीं।

"मैं लड़खड़ाता हुआ बाहर सड़क पर आ गया और डेढ़-दो घंटों तक उस घर के चक्कर काटता रहा। मुझे आशा थी कि शायद वह नौकर भेजकर मुझे अन्दर बुला लेगी। वह आशा झूठी साबित हुई। फिर मैंने पास के एक होटल में कमरा किराये पर लिया और फ़ौरन ह्विस्की की दो बोतलें अपने कमरे में मंगवाई और नींद की दवाई की ख़ुराक पीकर गहरी नींद में सो गया। ऐसी नींद जो जीवन से मृत्यु तक की यात्रा की एक मंज़िल थी।

× × ×

घड़ी ने चार बजाये। घंटे की आवाज़ सुनकर मेरा साथी चौंक गया। वह अपनी बात पूरी किये बग़ैर ही चुप हो गया। कुछ देर बाद

उसने फिर संयत स्वर में कहना शुरू किया।

"मैं आपको कैसे बताऊं कि उस समय मेरी मानसिक अवस्था कितनी भयंकर थी। जहाँ तक मुझे याद है उस दिन मुझे तेज़ बुखार भी था। मेरे पागल होने में थोड़ी ही कसर रह गई थी। दूसरे दिन मुझे मालूम हुआ कि उस औरत का पति शनिवार को वापस लौट रहा है। मैंने सोचा कि अगर चाहूँ तो मैं उन तीन दिनों में उस औरत को मुक्ति दिला सकता हूँ, लेकिन उसने तो मुझसे मिलने तक से इन्कार कर दिया था। न जाने क्यों अब मैं उसकी सहायता करने के लिए आतुर हो उठा था, और मुझे अपने असभ्य व्यवहार पर मन ही मन बड़ी ग्लानि हो रही थी, जिससे मेरा मन और भी विक्षिप्त हो गया। मामला बड़ा नाजुक था और समय तेजी से बीतता जा रहा था। मेरी पाशविक शर्त सुनने के बाद भला वह मुझे कैसे अपने नज़दीक आने दे सकती थी। ज़रा सोचिए तो सही, आप सद्भावनावश किसी व्यक्ति को सावधान करना चाहते हैं कि कोई हत्यारा उसका पीछा कर रहा है, लेकिन वह व्यक्ति आपको ही हत्यारा समझकर सर्वनाश के गर्त में कूद पड़ता है! शायद मेरे व्यवहार से उसे अपने कामुक प्रेमी के पाशविक व्यवहार का स्मरण हो आया होगा। इसीलिए वह मुझसे भयभीत हो गई होगी। कैसी विडम्बना थी। मैं तो सच्चे दिल से उसकी सहायता करना चाहता था, लेकिन उसे मेरी सूरत से ही नफ़रत हो गई थी। उसे लोकनिन्दा से बचाने के लिए मैं बड़े से बड़ा पाप करने के लिए तैयार था, लेकिन उस बेचारी को क्या मालूम था?

"अगले दिन सुबह जब मैं उसके घर पहुँचा तो मैंने चीनी नौकर को दरवाज़े के सामने खड़ा पाया। शायद वह भी कल शाम की ही ट्रेन से लौटा था। मुझे देखते ही वह नज़रों से ओझल हो गया। उसके चेहरे की चोट को देखकर मुझे एक बार फिर आत्मग्लानि हुई। मुझे देखते ही वह भीतर मालकिन को ख़बर देने क्यों दौड़ा गया था? क्या उसने मेरे इरादों को भांप लिया था? क्या वह मेरा इन्तज़ार कर रही

थी ? लेकिन उस नौकर को देखकर मुझे अपने लज्जास्पद व्यवहार की याद आ गई और मैं किसी को अपने आने की खबर दिए बग़ैर ही वहां से उल्टे पांवों लौट आया। मेरे मन में तीव्र यन्त्रणा थी—शायद वह भी उतनी ही व्यग्रता से मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी !

"उस अपरिचित शहर में मेरे लिए समय काटना एक समस्या हो गया। सहसा मुझे याद आया कि वाइस रेज़ीडेंट भी तो उसी शहर में रहता है—एक बार वह मोटर दुर्घटना में घायल हो गया था, और मैंने उसकी टांग का आपरेशन किया था। क्यों न जाकर उससे मिल आऊँ। वाइस रेज़ीडेंट घर पर ही था, उसने बड़े प्रेम से मेरा स्वागत किया। मैंने आपको बताया था न, कि मैं डच भाषा बड़ी अच्छी तरह बोल लेता हूँ ! मैंने दो साल तक हालैंड के एक स्कूल में पढ़ाई की थी। इसीलिए लीपज़िग के हस्पताल की नौकरी छूटने के बाद मैंने डच उपनिवेशिक सर्विस में जाना पसन्द किया था।

"शायद वाइस रेज़ीडेंट ने भी उस दिन मेरे व्यवहार में कोई विलक्षणता देखी थी। वह अपनी सारी शिष्टता के बावजूद इस तरह आँखें फाड़कर मेरी ओर देख रहा था, जैसे लोग बौराये आदमी को देखते हैं। मैंने उससे साफ़-साफ़ कह दिया कि मैं उस बस्ती में अधिक दिन नहीं रहना चाहता, और मैं फौरन ही प्रान्त की राजधानी में अपना तबादला कराना चाहता हूँ। वाइस रेज़ीडेंट ने संदिग्ध दृष्टि से मेरी ओर देखा—जिस तरह डाक्टर मरीज़ को देखता है।

उसने पूछा, "डाक्टर साहब, शायद आपका नर्वस ब्रेकडाउन हो गया है। मैं आपके मन की हालत की कल्पना कर सकता हूँ। आप चिन्ता न करें, मैं आपकी पूरी सहायता करूँगा। लेकिन अभी आपको एकाध महीना वहां और काटना होगा। इस बीच हम किसी और डाक्टर का इन्तज़ाम करेंगे।

"एकाध महीना और ! जी नहीं, मैं तो अब वहां एक दिन भी नहीं ठहरूँगा !.' मैंने चिल्लाकर कहा।

वाइस रेज़ीडेंट ने फिर संदिग्ध दृष्टि से मेरी ओर देखकर उत्तर दिया—

"लेकिन डाक्टर, अस्पताल को इस तरह अकेला छोड़कर आना भी ठीक नहीं। मैं वादा करता हूँ कि मैं आज ही स्वयं अधिकारियों से इस विषय में बातचीत करूँगा।"

"मैं अपने ओंठ काटते हुये सोच रहा था कि यह नौकरी न हुई गुलामी हुई। मैं सब सरकारी नियमों का उल्लंघन करने के लिए तैयार था। यह जानते हुये भी वाइस रेज़ीडेंट ने बड़ी चतुराई और नर्मी से काम लिया, और मुझे फिर समझाया।

"मैं जानता हूँ एकान्तवास से आदमी का मन कितना घबरा जाता है। आपकी जगह मैं होता तो कभी का विक्षिप्त हो गया होता। सभी अधिकारी इस बात से चकित हैं कि आप कभी शहर में नहीं आते, न ही आपने कभी छुट्टी का आवेदन-पत्र भेजा है। अगर आप शहर आकर खुशमिज़ाज लोगों से मिलते-जुलते रहते तो आपकी यह दशा कभी न होती। सुनिये, आज ही शाम को गवर्नमेंट हाउस में एक पार्टी है, वहाँ सब डच अफ़सर मौजूद होंगे—वे अक्सर आपके बारे में पूछताछ करते रहते हैं, आप से मिलकर उन्हें बड़ी खुशी होगी। आप चलेंगे न ?"

यह सुनते ही मेरे कान खड़े हो गये "अक्सर मेरे बारे में पूछताछ करते हैं ?" "मुझ से मिलकर उन्हें खुशी होगी ?" "क्या वह भी उस पार्टी में आयेगी ?" उसका ध्यान आते ही एक विचित्र नशा मेरे मस्तिष्क पर छा गया। मेरी खोई शिष्टता सहसा लौट आई। मैंने वाइस रेज़ीडेंट को निमन्त्रण के लिये धन्यवाद दिया और ठीक समय पर पार्टी में शामिल होने का वचन दे आया।

"मेरी बेचैनी का ठिकाना न था। मैं अन्य अतिथियों के आने से पहले ही गवर्नमेंट हाउस के विशाल ड्राइंग रूम में पहुँच गया, जहां देसी नौकर नँगे पांव काम में व्यस्त थे। मुझे लगा (यह मेरी विकृत कल्पना का परिणाम था) कि वे सब मुझ पर हँस रहे हैं। पन्द्रह मिनट तक

ड्राइंग रूप में सन्नाटा छाया रहा, यहां तक कि मुझे अपनी जेब में पड़ी घड़ी की टिक-टिक साफ सुनाई दे रही थी।"

"जब पार्टी की सब तैयारियां पूरी हो चुकीं तो कुछ देर बाद अतिथियों का आना भी शुरू हो गया। सब सरकारी अफ़सर अपनी पत्नियों सहित वहां आये थे। वाइस रेज़ीडेंट ने बड़े तपाक से मेरा स्वागत किया और काफी देर तक मुझ से बातचीत करता रहा। मेरा ख्याल है कि उस समय तक मेरे होश-हवास बिल्कुल सही थे। लेकिन सहसा मैं फिर घबरा गया और मेरी जीभ लड़खड़ाने लगी।

"वह इसी समय ड्राइंग रूम में दाखिल हुई थी। सौभाग्य से वाइस रेज़ीडेंट उस समय किसी और से बातचीत कर रहा था, नहीं तो मैं धृष्टता-पूर्वक उसे छोड़कर दूसरी ओर चला जाता। वह आज पीली रेशमी पोशाक में थी, जिसमें से उसके गोरे कन्धे चमक रहे थे। वह हँस हँसकर अपने परिचितों के साथ बातें करने लगी, लेकिन मैं उसकी मुस्कराहट में छिपी चिन्ता की रेखाओं को बड़े गौर से देख रहा था (हो सकता है यह मेरी कल्पना हो)। मैं उसके नज़दीक जाकर खड़ा हो गया, लेकिन उसने मेरी ओर मुड़कर देखा तक नहीं। उसकी गर्वीली मुस्कान ने एक बार फिर मुझे विक्षिप्त कर दिया। मैं अच्छी तरह जानता था कि वह लोगों के सामने बनावटी खुशी का प्रदर्शन कर रही है। आज बुधवार है। शनिवार को इसका पति अमरीका से लौटने वाला है। फिर भी यह औरत इतनी लापरवाही से मुस्करा रही है। उसकी उंगलियाँ पँखे से किस तरह खेल रही हैं। अगर मैं इसकी जगह होता तो घबराहट के मारे पंखे को तोड़ देता। मैं, एक अपरिचित व्यक्ति, उसके भविष्य की चिन्ता से उद्विग्न हो रहा था। मुझे लगा जैसे वह अपने मन में उमड़ते तूफान को रोकने के लिये चेहरे पर मुस्कराहट का नक़ाब डाले थी।

"पास के कमरे में आर्केस्ट्रा ने संगीत की धुन छेड़ी। डान्स शुरू होने वाला था। एक अधेड अफ़सर ने आकर उससे नाचने का प्रस्ताव

किया, और उसकी बांह में बांह डालकर नृत्यशाला में ले गया। मैं भी उसके पीछे-पीछे नृत्यशाला में पहुँचा। पहले तो मुझे देखकर वह चौंक गई। मैं सोच रहा था कि सब के सामने मुझे उससे बात करनी चाहिये या नहीं ; फिर उसने मेरे पास आकर मैत्रीपूर्ण स्वर में कहा, "गुड ईवनिंग डाक्टर !" और वहाँ से चली गई।

उसके इस व्यवहार से उसकी सही मानसिक स्थिति का अनुमान लगाना कठिन था। मैं खुद परेशान था, कि आखिर उसने सब के सामने क्यों जतलाया कि मैं उसका परिचित् हूँ ? क्या यह संधि का निमन्त्रण था ? क्या वह मुझे अचानक वहाँ देखकर घबरा गई थी ? लेकिन उसे देखकर मेरे हृदय की धड़कन बढ़ गई थी।

"मैंने देखा, नाचते समय उसके चेहरे पर आनन्द की एक मुस्कान थी। मुझे मालूम था कि वह अपने भयंकर रहस्य के बारे में सोच रही थी, जिसे मेरे सिवा संसार में कोई नहीं जानता। इस ऐहसास ने मेरी घबराहट, मेरी मानसिक चिन्ता और आकांक्षा को और तीव्र कर दिया। उपस्थित लोगों में से कोई मेरी ओर ग़ौर से देख रहा था या नहीं, यह मैं नहीं जानता, लेकिन इतना ज़रूर कह सकता हूँ कि मेरे चेहरे पर जितनी ही घबराहट थी, उसके चेहरे पर उतनी ही लापरवाही थी। मैं लगातार उसकी ओर टकटकी बाँध कर घूर रहा था, सिर्फ यह देखने के लिए कि उसे कोई बेचैनी हो रही है या नहीं। वह मेरी इस बेहूदगी से ज़रूर तंग आ गई होगी। नाचने के बाद जब वह अपने साथी की बाहों का सहारा लिए ड्राइङ्ग रूम में लौटी तो उसने क्रोध भरी आँखों से मेरी ओर देखा, मानो वह मुझे डाँट रही हो, 'ईश्वर के लिए अपने ऊपर कुछ तो काबू रखो ?'

"लेकिन जैसा मैं आपको पहले बता चुका हूँ, मैं उस समय बौराया हुआ था। मैं उसकी दृष्टि का अर्थ अच्छी तरह समझ गया था। वह चाहती थी कि मैं सबके सामने उसके साथ तमीज से पेश आऊँ ताकि लोग उस पर सन्देह न करने लगें। मैं उसके अभिप्राय को समझता था,

लेकिन मैं बौराया जो था। सारा मामला वहीं साफ किए वगैर भला कैसे रह सकता था। मैं फौरन वहां जाकर खड़ा हो गया जहाँ वह अपने मित्रों तथा परिचितों से बात कर रही थी, हालाँकि उनमें से कोई भी मेरा परिचित नहीं था। जरा मेरी गुस्ताखी पर ग़ौर कीजिए। लोगों को मेरा इस तरह वहाँ खड़ा होना बुरा लगा, किसी ने मुझसे एक बात भी न की। यह साफ़ जाहिर था कि वह मेरी इस अशिष्टता पर नाराज़ थी। उसकी क्रूर दृष्टि के कोड़ों से घायल होकर मैं कुत्ते की तरह कांप रहा था।

"पता नहीं मैं वहाँ कितनी देर तक इसी तरह खड़ा रहा। मुझे लगा मानो एक युग बीत गया है। उसने मुझ पर कुछ ऐसा ही जादू कर दिया था। उसके लिए मेरा अपमानजनक व्यवहार असह्य हो उठा था। उसने बड़े आकर्षक, किन्तु उदासीन स्वर में अपने मित्रों से कहा, 'मैं कुछ थक गई हूँ, इसलिए जल्दी घर जाना चाहती हूँ। इजाज़त दीजिए, गुड नाइट !'

"उसने सब लोगों पर एक सरसरी निगाह डाली और वहाँ से चली गई। मैं चुपचाप उसके गोरे लाल कन्धों और पीले रेशमी गाउन को देखता रहा। मुझे इस बात का अनुमान तक न हुआ कि वह अब पार्टी में वापस नहीं आयेगी, और मेरी सब आशाओं पर पानी फिर जायगा। मैं पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल वहीं खड़ा रहा। इसके बाद·····

"यह सब बातें मैं आपको इसलिए बता रहा हूँ ताकि आप समझ सकें कि उस दिन मैंने कितनी मूर्खतापूर्ण हरकतें कीं। ड्राइंग रूम अब भी बत्तियों से जगमगा रहा था, लेकिन अधिकांश अतिथि बालरूम में डान्स करने के लिए चले गये थे। कुछ बूढ़े, जिनको डान्स से अरुचि हो चुकी थी, ताश खेलने बैठ गये थे। कुछ लोग झुंड बनाकर बातचीत में व्यस्त थे। वह बड़ी शालीनतापूर्वक अपने मित्रों से विदा ले रही थी। अपनी बदहवासी में मुझे पता नहीं चला कि वह कब ड्राइंग रूम के दूसरे छोर तक पहुँच गई। इस भय से कि कहीं वह मेरी नज़रों से

ओझल न हो जाये, मैं तेज़ी से उसके पीछे भागा, सब लोग आंखें फाड़-फाड़ कर मेरी ओर देख रहे थे, और मैं शर्म से पानी-पानी हो रहा था—फिर भी मेरे कदम न रुके। उसके दरवाजे तक पहुँचने से पहले ही मैं उसके पास पहुँच गया। उसने क्रोधभरी आंखों से मेरी ओर देखा, उसकी आँखों में से चिन्गारियाँ निकल रही थीं, और उसके नथुने घृणा से फड़क रहे थे।

"लेकिन उसमें ग़जब का आत्म-संयम था, जिस संयम की मुझमें ज़बरदस्त कमी थी। एक ही क्षण में उसने अपने क्रोध पर क़ाबू पा लिया और खिलाखिला कर ज़ोर से हँस पड़ी, ताकि लोग सुन सकें।

"डाक्टर ! आपने मेरे बच्चे के लिये नुस्खा लिखने का वादा किया था, आप डाक्टर लोग भी बड़े भुलक्कड़ होते हैं। कहिये नुस्खा याद आ गया ?"

"पास खड़े दो आदमी इस मज़ाक पर हँस पड़े। मुझे भी आभास हो गया था, कि उसने बड़ी चतुराई से मेरे भोंडेपन पर पर्दा डाल दिया था। मैं इतना बुद्धू नहीं था, कि उसका संकेत न समझ सकता। मैंने फ़ौरन अपनी पाकेट बुक से एक खाली नुस्खे का फ़ार्म फाड़ा और क्षमा याचना करते हुए उसे दे दिया। उसने मुस्करा कर मुझे 'गुड नाइट' कहा और वहां से चली गई।

"उसने मेरी लाज रख ली थी। लेकिन मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरी इस बेहूदगी से वह मुझसे और अधिक घृणा करने लगी है, और वह कभी मेरी सूरत तक न देखेगी। अगर मैं उसके घर गया, तो वह मुझे कुत्ते की तरह दुत्कार देगी।

"मैं लड़खड़ाते क़दमों से ड्राइंग रूम में वापिस आया। सब लोग चकित दृष्टि से मेरी ओर देख रहे थे। ज़रूर मेरे हुलिये में कोई विचित्रता रही होगी। शराब की मेज़ के पास जाकर मैंने चार गिलास ब्रांडी पी। उस समय मेरे मस्तिष्क के स्नायु जवाब दे रहे थे। ब्रांडी से मेरे शरीर में कुछ रक्त संचार हुआ, वरना मैं ज़रूर वहीं लड़खड़ा कर गिर

पड़ता, फिर मैं किसी चोर-उचक्के की तरह पिछले दरवाजे से बाहर निकल आया, क्योंकि मैं किसी भी क़ीमत पर लोगों की विद्रूपभरी आँखों का सामना नहीं करना चाहता था। उसके बाद मैंने क्या-क्या किया—मुझे कुछ याद नहीं। एक होटल से दूसरे होटल जाकर शराब के नशे में होने की कोशिश की, लेकिन इससे भी मेरे मस्तिष्क की चेतना लुप्त न हुई। रह-रह कर मेरे मन में उसका अट्टहास गूंज रहा था—वह अट्टहास, जिसने मुझे पागल कर दिया था, और आज की वह हँसी, जिसके द्वारा उसने मेरे फूहड़पन को ढक लिया था। मेरी इच्छा हुई कि पानी में कूदकर प्राण दे दूँ या पिस्तौल से अपना भेजा उड़ा दूँ। मन में आत्महत्या का दृढ़ निश्चय लिये मैं अपने होटल की ओर चल पड़ा।

"लेकिन मेरा यह निश्चय कार्यरूप में परिणत नहीं हो सका। सच मानिये इसका कारण भीरुता नहीं थी। क्योंकि पिस्तौल का घोड़ा दबाने से अधिक सुखकर बात मेरे लिये कोई नहीं हो सकती थी—क्षणभर में ही मैं अपनी समस्त मानसिक वेदना का अन्त कर सकता था। लेकिन मुझ पर कर्त्तव्यपरायणता का भूत सवार हो गया था, आखिर मैं एक डाक्टर था। इस विचार ने कि उसे मेरी ज़रूरत है, मेरे मन में भयंकर बेचैनी भर दी। शनिवार को उसका पति लौटने वाला है, और बृहस्पतिवार आ पहुँचा था। मुझे विश्वास था कि उस जैसी स्वाभिमानिनी स्त्री, पति द्वारा लाँछित होने से पहले ही अपने जीवन का अन्त कर लेगी। मैं इसी चिन्ता में घन्टों तक अपने कमरे के चक्कर काटता रहा। मुझे रह-रह कर अपनी अधीरता और मूर्खताओं पर क्रोध आ रहा था। जिनके कारण मेरे लिये उसकी सहायता करना असम्भव हो गया था। अब मैं उसके पास कैसे पहुँच सकता था? अब उसे कैसे विश्वास होगा कि मैं उसका शुभचिन्तक हूँ? वह कभी भी मुझसे नहीं मिलेगी, कभी नहीं! मुझे उसकी व्यंग्यभरी हँसी और फड़कते हुए नथुनों की याद आई। मैं सुबह होने तक अपने कमरे के चक्कर काटता रहा। बरामदे में धूप फैल गई थी, आप तो जानते ही हैं कि गर्म देशों में लोग छः बजे ही उठ जाते हैं।

"मैं धम्म से कुर्सी पर बैठ गया और ऊटपटाँग भाषा में उसे एक ख़त लिखने लगा, जिसमें मैंने स्वीकार किया कि मैं नीच और पागल हूँ और अपनी करतूत के लिये बहुत लज्जित हूँ। मैंने उससे प्रार्थना की कि वह बिना किसी भय के अपने को मेरे सुपुर्द कर दे। मैं उसकी सहायता करने के बाद उसके शहर से, देश से, और अगर वह चाहेगी तो इस दुनिया से भी सदा के लिये दूर चला जाऊँगा। वह केवल एक बार मुझे माफ़ कर दे, मुझ पर विश्वास करे, और मुसीबत के इन क्षणों में मुझे अपनी सेवा करने दे।

"मैंने बीस पन्ने लिख डाले। वह ख़त पागलखाने के किसी रोगी का या ज्वरग्रस्त मरीज का मालूम होता था। मेरे शरीर से पसीने की धारें फूट रही थीं, और मेरा सर चकरा रहा था। एक गिलास पानी पीने के बाद मैंने ख़त को दोबारा पढ़ने की कोशिश की, लेकिन अक्षर मेरी आंखों के आगे नाचने लगे। ख़त को लिफ़ाफे में डालने से पहले मैंने सोचा कि कोई ऐसी पंक्ति भी जोड़ देनी चाहिये, जिसे पढ़कर उसका हृदय पसीज उठे। मैंने अंतिम पृष्ठ की पीठ पर लिखा, "मैं आज रात तक होटल में तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा करूँगा। अगर कोई उत्तर नहीं मिला तो आत्महत्या के सिवा मेरे सामने कोई मार्ग नहीं रहेगा।"

"होटल के चपरासी के हाथ मैंने वह ख़त उसके पास भिजवा दिया, और चुपचाप उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

इतना कहकर सहसा वह चुप हो गया। कुछ मिनटों के बाद उसने सशक्त स्वर में कहना शुरू किया।

"ईसाई धर्म में अब मुझे विश्वास नहीं रहा। स्वर्ग और नर्क की कल्पनायें मेरे मन को रत्ती भर विचलित नहीं करतीं। लेकिन उस बीच जो घंटे मैंने होटल में बिताये, वे निश्चय ही नर्क के समान भयंकर थे। दोपहर की गर्मी में मेरा कमरा तंदूर की तरह जल रहा था। आप जानते हैं, पूर्वीय देशों के होटलों के कमरों में एक चारपाई और एक मेज़-कुर्सी के सिवा कोई सामान नहीं होता? एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना कीजिये

जिसने अन्न-जल त्याग दिया हो, यहां तक कि सिगरेट भी, और जो घंटों तक टकटकी बांध कर अपनी घड़ी की सैकिंड की सुई की ओर देख रहा हो। घड़ी के पास ही मेरा, पिस्तौल पड़ा था। प्रतीक्षा में सारा दिन इसी तरह बीत गया। निश्चय होते हुए भी मैं पागल कुत्ते, या मलायन पियक्कड़ की तरह बौराया बैठा था। सर्वनाश की ओर अग्रसर होते हुए।

"मैं इस बात की और अधिक चर्चा नहीं करूंगा। इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि मैं आज तक इस रहस्य को नहीं समझ सका कि कैसे कोई व्यक्ति इन परिस्थितियों में रह कर भी पागलपन से बचा रह सकता है।

"तीन बज कर बाईस मिनट पर (मेरी आंखें अब भी सैकिंड की सुई पर लगी थीं) किसी ने मेरा दरवाज़ा खटखटाया। एक देसी छोकरा हाथ में एक काग़ज़ लिये खड़ा था। मैंने झपट कर काग़ज़ उसके हाथ से छीन लिया। काग़ज पर केवल दो पंक्तियां लिखी थीं, जिनका अर्थ मेरी समझ में नहीं आ रहा था। मैंने ठंडे पानी से अपना सर धोया ताकि मेरा चित्त कुछ शान्त हो सके। काग़ज पर अंग्रेजी में लिखा था :

"जो होना था, हो गया। फिर भी आप अभी होटल में ही रुकें, शायद मुझे अन्त में आपको बुलाना ही पड़े।"

"इन पंक्तियों के नीचे उसके हस्ताक्षर नहीं थे, और टेढ़ी-मेढ़ी लिखावट से स्पष्ट था कि वह खत भावावेश में, और शायद चलती मोटर में बैठकर लिखा गया था। मुझे लगा कि इन पंक्तियों के पीछे गहरा विषाद और आतंक छिपा है। फिर भी मैंने सुख की सांस ली, क्योंकि उसने मेरे पत्र का उत्तर तो दिया था। मैंने निश्चय किया कि अब मैं नहीं मरूंगा। उसने मुझे बुलाने का वचन दिया है। मुझे उसकी सहायता करने का सौभाग्य प्राप्त होगा। मैंने उन टेढ़ी-मेढ़ी पंक्तियों को न जाने कितनी बार पढ़ा, पागलों की तरह काग़ज़ के उस टुकड़े को चूमा और अनेक विलक्षण दिवास्वप्न देखने लगा। सहसा मेरी उत्तेजना का ज्वर

उतर गया और मैं नींद और जागरण के बीच का उस मानसिक अवस्था को पहुँच गया, जिसे हम लोग मूर्छा कहते हैं—जिस अवस्था में समय का कोई अर्थ नहीं होता।

"घंटों तक मेरी यही अवस्था रही। शाम के छः बजे होंगे। सूर्य अस्त हो रहा था। अपने दरवाज़े पर किसी की आहट सुनकर मेरी तंद्रा टूटी। सचमुच कोई दरवाज़ा खटखटा रहा था। मैंने लड़खड़ाते क़दमों से उठकर दरवाज़ा खोला (मेरा सर अब भी चकरा रहा था)। बाहर वही चीनी नौकर खड़ा था। सांझ के झुटपुटे में मुझे उसका चेहरा अच्छी तरह दिखाई दे रहा था—यहां तक कि उसकी ठुड्डी की चोट और आंखों पर पड़े निशान भी—जो मेरी पाशविकता के चिन्ह थे। लेकिन उसके चेहरे का रंग भय और आतंक से फीका पड़ गया था।

"मालिक, जल्दी चलिये", उसने सिर्फ इतना ही कहा।

"मैं बदहवास होकर सीढ़ियों की ओर भागा। नीचे सड़क पर एक गाड़ी खड़ी थी। हम दोनों कूद कर उसमें बैठ गये।

"मामला क्या है ?" मैंने गाड़ी चलते ही नौकर से पूछा।

"उसने आतंक भरे नेत्रों से मेरी ओर देखा, लेकिन उसके मुँह से कोई शब्द न निकला। मैंने अपना प्रश्न दुहराया, लेकिन उसने कोई उत्तर नहीं दिया। मेरे मन में आया कि एक बार फिर मुक्के से उसका कचूमर निकाल दूं। सहसा मुझे उसकी स्वामिभक्ति का ध्यान आया, और मैंने अपने क्रोध पर क़ाबू पाने की कोशिश की। मैंने सोचा यह नहीं बोलना चाहता, तो न सही।

"गाड़ीवान घोड़ों को चाबुक मारता हुआ तेजी से गाड़ी चला रहा था। सड़कों पर बड़ी भीड़ थी, क्योंकि हम यूरोपियन बस्ती से निकल कर देसी लोगों की बस्ती में दाखिल हो रहे थे, जहाँ जावानी, मलायी और चीनी रहते थे। गाड़ी एक तंग गली के पास जाकर रुक गई। सामने एक टूटी-फूटी दुकान थी, जिसमें मोमबत्ती टिमटिमा रही थी। ऊपर की मंजिल में एक सस्ता सा होटल था। इस तरह के होटल सभी

पूर्वीय देशों के बड़े शहरों में मिलते हैं, जिनमें अफ़ीमचियों, वेश्याओं, और चोरों के अड्डे रहते हैं।

"लड़के ने होटल का दरवाज़ा खटखटाया। दरवाज़ा थोड़ा-सा खुला और इसके बाद बंद हो गया। मैं भी गाड़ी से कूद कर दरवाज़े के पास आया और अपनी पूरी ताकत लगा कर दरवाज़े को धक्का देने लगा। दरवाज़ा खुला और एक बूढ़ी चीनी औरत चीखती हुई मेरे आगे से निकल गई। मैं बरामदा पार करके एक अँधेरे कमरे में पहुँचा, जिसमें से ब्रांडी और खून की गंध आ रही थी। अँधेरे में कोई कराह रहा था। मैं रास्ता टटोलता हुआ उस स्थान पर पहुँचा जहां से कराहने की आवाज़ आ रही थी।

यह कहकर वह चुप हो गया। उसका गला आवेश से रुँध गया था। इसके बाद उसने सिसकते हुए आगे की कहानी सुनाई।

"वह एक मैली फटी दरी के टुकड़े पर लेटी, दर्द से छटपटा रही थी। अंधेरे के कारण मैं उसका चेहरा अच्छी तरह नहीं देख सका। मैंने उसका हाथ छू कर देखा, वह अंगारे की तरह दहक रहा था। उसे तेज़ बुखार था। वह इस गंदे अड्डे में इसलिये आई थी, क्योंकि मैंने उसे सहायता देने से इन्कार कर दिया था। उसने मजबूर होकर एक चीनी दायी की शरण ली थी—उस चुड़ैल की जो मुझे दरवाजे के पास मिली थी। उसकी इस दुर्दशा का कारण सिर्फ़ मेरा पागलपन था, जिसने उसके स्वाभिमान को चोट पहुँचाई थी। मेरी अपमानजनक शर्त को स्वीकार करने से उसे अपना जीवन ख़तरे में डालना अधिक श्रेयस्कर मालूम हुआ था। उसका यह भी ख़्याल था कि उस अड्डे में उसका रहस्य खुलने की कोई आशंका नहीं थी।

"मैंने चिल्ला कर उस चुड़ैल बुढ़िया को बत्ती जलाने का हुक्म दिया, लेकिन वह एक बदबूदार कैरोसीन का लैंप ले आई, जिसमें से धुँआ निकल रहा था। मेरे मन में उस हत्यारिन का गला घोंटने की इच्छा हुई लेकिन उससे क्या लाभ होता? लैंप की पीली मद्धिम रोशनी में मैंने उसके अर्ध

मृत शरीर को देखा, जो अज्ञान की वेदी पर शहीद हो गया था।

"सहसा मेरे मस्तिष्क पर से सम्मोहन का आवरण हट गया। मैं अपना सारा क्रोध भूल गया, यहां तक कि मुझे अतीत की सारी घटनायें भूल गई। अब मैं केवल डाक्टर था, एक कुशल डाक्टर जो एक पीड़ित इन्सान की सेवा करने आया था। मैं अपनी मनहूसियत को भी भूल गया और मेरी सोई प्रतिभा फिर से जागृत हो उठी। मैं सर्वनाश की शक्तियों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये तैयार हो गया।

"मैंने उसके आवरणहीन शरीर को स्पर्श किया जो कुछ घंटे पहले मेरी वासना का केन्द्र था। अब वह केवल एक मरीज़ का शरीर था, जीवन-मरण की शक्तियों का युद्धक्षेत्र। उसके रक्त से मेरे मन में ग्लानि नहीं हुई क्योंकि अब मैं एक बार फिर चिकित्सक और विशेषज्ञ बन गया था, जिसके दिमाग़ के संतुलन पर ही मरीज़ का भविष्य अवलम्बित होता है। विशेषज्ञ की हैसियत से मैंने उसके जीवन की ओर बढ़ रहे खतरे की ओर देखा·····।

मैंने देखा कि अब सिवाय चमत्कार के उसका बचना एकदम असंभव है। अनाड़ी हाथों ने उसके शरीर का सत्यानाश कर डाला था। उसके शरीर में से लगातार रक्त की धारा बह रही थी। उस गंदी मनहूस कोठरी में कौनसी चीज़ थी, जिसकी सहायता से मैं उसका रक्त-स्राव रोकता? जिस चीज़ को मैं स्पर्श करता था वही मैली थी, यहाँ तक कि हाथ धोने के लिये साफ पानी भी नहीं था।

"आपको फौरन हस्पताल लेजाना पड़ेगा," मैंने उससे कहा। यह सुनकर वह मानसिक यंत्रणा से छटपटा उठी, जो शारीरिक यंत्रणा से कई गुना अधिक भयंकर थी। उसने तड़प कर कहा—

"नहीं, बिल्कुल नहीं। मुझे मरना मंजूर है लेकिन किसी को यह पता न चले। किसी को। मुझे घर ले चलिये, घर।

"मैं समझ गया कि उसे अपना सम्मान जीवन से भी अधिक प्यारा है। मैंने उसका कहना मान लिया। लड़का कहीं से एक डोली उठा लाया,

और हम रात के अँधेरे में उसकी अर्ध मृत देह को लाद कर उसके घर ले गये। नौकरों के आतंकपूर्ण प्रश्नों और चीखों की परवाह न करते हुए हम उसे सीधे उसके कमरे में ले गये जहाँ मौत के साथ हमारा लम्बा युद्ध शुरू हुआ, जिस युद्ध में हमारी हार निश्चित थी।

उसने कस कर मेरी बांह पकड़ ली। उसका चेहरा मेरे बिल्कुल क़रीब था। मैं उसके दांतों और चश्में के शीशों को अच्छी तरह देख सकता था। उसके स्वर में इतना क्षोभ था, कि उसकी आवाज़ चीख की तरह मेरी आत्मा को बेधने लगी।

"आप मेरे लिये अजनबी हैं। मैंने आपको दिन की रोशनी में एक बार भी नहीं देखा। जहां तक मेरा विचार है, आप बड़े मज़े में संसार का भ्रमण कर रहे हैं, क्या आप जानते हैं कि किसी मरते हुए व्यक्ति के पास बैठना कैसा होता है ? क्या आपने कभी किसी को मृत्यु की यंत्रणा से छटपटाते देखा है ? क्या आपने उस आतंकपूर्ण नाटक का अंतिम दृश्य देखा है, जिसमें व्यक्ति का शरीर ऐंठ जाता है और उसके नीले, रक्तहीन नाखून शून्य को नोचने लगते हैं ? क्या आपने उसके गले के भर्राये स्वर को सुना है ? क्या उसकी आंखों में छाये आतंक को समझा है ? क्या आपको ऐसा कटु अनुभव हुआ है ? लेकिन आप तो ऐय्याश ठहरे—आपका काम देश-विदेश की यात्रा करना और कर्त्तव्यपारायणता के बारे में कोरी बातें बघारना है।

"डाक्टर होने की हैसियत से मैंने मौत को कई बार देखा है। मैंने एक घटना के रूप में मृत्यु का अध्ययन किया है, मैंने मौत को उसके संपूर्ण बीभत्स रूप में देखा है। लेकिन केवल एक बार मरीज़ की मृत्यु के साथ मेरी भी मृत्यु हुई है। केवल एक बार, जब मैं रात भर जाग कर उसके रक्तस्राव को रोकने और ज्वर को उतारने की तरकीबें सोच रहा था और वह मेरी आंखों के सामने मृत्यु के जबड़ों में जा रही थी।

"क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि एक डाक्टर को, जो चिकित्सा-विज्ञान में पूर्णतः दक्ष है और आपके कहने के अनुसार जिसका एकमात्र

कर्त्तव्य मानव-सेवा है—एक मरणासन्न मरीज़ के सिरहाने बैठना कैसा लगता है। जबकि वह जानता है कि उसकी सारी शिक्षा, दक्षता उसके मरीज़ को नहीं बचा सकेगी ? जब उसके हाथों में मरीज़ की नाड़ी की गति मद्धिम पड़ने लगती है ? ज़रा सोचिये, मेरे हाथ किस तरह जकड़े हुए थे। मैं उसे हस्पताल नहीं ले जा सकता था, जहाँ उसके प्राण बचाना शायद संभव होता। मैं किसी दूसरे डाक्टर को सहायता के लिये नहीं बुला सकता था। मेरे लिये एक ही चारा था—कि मैं चुपचाप बैठा उसका करुण विलाप सुनूं। वह अस्पष्ट स्वर में कुछ बड़बड़ा रही थी, मैं क्रोध से अपनी मुट्ठियां भींच रहा था, और किसी अज्ञात देवी या देवता को मन ही मन श्राप दे रहा था।

"आपकी समझ में आया ? मैं आज तक यह नहीं समझ सका कि लोग ऐसे करुण दृश्य देखने के बाद भी कैसे ज़िन्दा रहते हैं, क्यों नहीं अपने प्रियजनों के साथ ही इस संसार से चले जाते ? मैं पूछता हूँ ऐसे दृश्यों के बाद लोग कैसे अगले दिन उठकर दांत साफ़ करते हैं, नहा-धोकर नये कपड़े पहनते हैं और अपने नित्यकर्म जारी रखते हैं ? जिसकी खातिर मैं बड़े से बड़ा त्याग कर सकता था, वह मेरी आँखों के सामने ही मुर्झा रही थी, और मैं उसे बचाने में असमर्थ था।

"मेरी यंत्रणा का एक और कारण था। मैंने उसकी पीड़ा को कम करने के लिये मार्फ़िया का एक इन्जैक्शन दिया था, जिससे वह कुछ देर के लिये गहरी नींद में सो गई थी। इसी समय मुझे लगा जैसे कोई अपनी दृष्टि से मेरी पीठ को भेद रहा हो। चीनी नौकर फ़र्श पर पलथी मारे अपनी भाषा में प्रार्थना कर रहा था। उसकी दृष्टि में एक मूक विनती थी, मानो वह मुझसे कह रहा हो, 'डाक्टर, तुम ईश्वर हो, मेरी मालकिन को बचा लो !'—मुझ बुज़दिल के सामने जो फ़र्श पर रेंगते हुए कीड़े से भी अधिक असमर्थ और निरुपाय था।

"उस मूक प्रार्थना से मेरी मानसिक पीड़ा और भी बढ़ गई। उसे विश्वास था कि मेरी कुशलता कभी व्यर्थ नहीं जा सकती। उसके इस

विश्वास ने मेरे मर्मस्थल पर चोट की, मेरे बस में होता तो मैं उसे फौरन गाली देकर कमरे से बाहर निकाल देता या अपने जूतों तलें रौंद डालता। फिर भी मुझे ऐसा आभास हुआ कि उस चीनी नौकर में और मुझ में कोई अदृश्य सम्बन्ध है। हम दोनों उस मृतप्रायः महिला का सम्मान करते थे और दोनों ही उस रहस्यमय नाटक के दृष्टा थे।

"पहरा देने वाले जानवर की तरह वह मेरे पीछे सिकुड़कर बैठा था। ज्यों ही मुझे किसी चीज की जरूरत होती, वह सावधान हो जाता और फुर्ती से सब चीजें उठा लाता। उसे अब भी अपनी मालकिन के बचने की आशा थी। मुझे विश्वास है कि मालकिन के प्राण बचाने के लिये वह जरूर अपने रक्त की आखिरी बूंद तक दे डालता। मैं भी ऐसा ही करता। लेकिन उस समय ट्रांसफ्यूज़न के बारे में सोचना निरर्थक था। अगर मेरे पास इसके औजार होते, तब भी उसके रक्त के प्रवाह को बन्द करने का कोई साधन न था। इससे तो उसकी यंत्रणा और अधिक बढ़ जाती। फिर भी हम दोनों उसके बदले में मरने के लिये तैयार थे। उस महिला में कुछ ऐसा ही अद्भुत आकर्षण था। लेकिन परिस्थिति की विडम्बना भी विचित्र होती है—सच पूछिये तो मैं उसका रक्त-प्रवाह बन्द करने तक में असमर्थ था।

"दूसरे दिन तड़के मार्फ़िया का असर दूर हुआ और उसने आँखें खोलीं। उन आँखों में पहले जैसा गर्व और कठोरता न थी। उसने चारों ओर देखा, सहसा उसकी दृष्टि मुझ पर पड़ी—उसने मुझे पहचानने की कोशिश की। सहसा उसे कुछ याद आया। पहले तो उसने क्रुद्ध नेत्रों से मुझे देखा और हाथ हिलाकर मुझे चले जाने का इशारा किया। वह मुझे जतलाना चाहती थी, कि अगर उसके शरीर में ताकत होती तो वह एक क्षण के लिये भी मेरी सूरत न देखती। फिर कुछ देर सोचने के बाद उसने शान्तभाव से मेरी ओर देखा। उसे सांस लेने में दिक्कत हो रही थी। उसने उठकर कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन कमजोरी के कारण ऐसा असम्भव था। मैंने उससे प्रार्थना की कि वह बिल्कुल हिले-डुले

नहीं, मैंने कुर्सी उसकी चारपाई के पास खींच ली, ताकि मैं उसकी फुसफुसाहट सुन सकूं। उसके ओंठ हिल रहे थे—

"क्या किसी को—इस बात का पता तो नहीं चलेगा ? किसी को भी ?"

"बिल्कुल नहीं, कभी भी नहीं," मैंने निर्भीक स्वर में उसे आश्वासन दिया।

"उसकी आँखों में अब भी बेचैनी थी। उसने बड़ी मुश्किल से सिर्फ इतना ही कहा—

"कसम खाइये कि यह बात किसी को मालूम न होगी।"

"मैंने उसे वचन दिया कि उसका रहस्य किसी के सामने प्रकट नहीं होगा।

"उसने कृतज्ञभाव से मेरी ओर देखा। मैंने उसे कितना नुकसान पहुँचाया था। फिर भी वह मुस्कराकर मुझे धन्यवाद दे रही थी। कुछ देर बाद उसने फिर बोलने की कोशिश की, लेकिन कमज़ोरी के कारण उसके मुँह से कोई शब्द न निकल सका। दिन चढ़ने से पहले ही सब कुछ समाप्त हो गया।

इसके बाद वह काफी देर तक चुप रहा। उसकी उत्तेजना शांत हो गई थी। आकाश के तारों की रोशनी मद्धिम हो चली थी। ठंडी हवा के झोंके प्रभात के आगमन की सूचना दे रहे थे। उसने अपनी टोपी उतारी, मैंने पहली बार उसके चेहरे को ग़ौर से देखा। उस चेहरे पर चिन्ता की गहरी रेखायें थीं। उसकी आँखें चश्मे में से मुझे घूर रही थीं, मानो वह यह देख रहा हो कि मैं उसकी कहानी सुनने के काबिल भी हूं या नहीं। इसके बाद उसने क्षुब्ध स्वर में आगे की घटनायें सुनाईं।

"उस स्त्री के दुःखों का अन्त यहीं हो गया था, लेकिन यह मेरे दुःखों का आरम्भ था। मैं उसकी लाश के सिरहाने बैठा रहा। उस शहर में जहाँ अफ़वाहें दावानल की तरह फैलती हैं, मैंने उसके रहस्य की रक्षा करने का वचन दिया था। ज़रा स्थिति की गंभीरता देखिये।

यह स्त्री शहर के सबसे सभ्रान्त समाज की सदस्या थी, और अपूर्व सुन्दरी थी । कल रात को वह गवर्नमेंट हाऊस के उत्सव में नाच रही थी । आज वह इस संसार में नहीं रही । उसकी बीमारी में किसी डाक्टर को नहीं बुलाया गया ।

"दुनिया क्या सोचेगी ? सुबह होने पर सब नौकरों को गृहस्वामिनी की मृत्यु की सूचना दी गई । मैं सोच रहा था कि एक घंटे में ही यह खबर सारे शहर में फैल जायेगी और लोग पूछेंगे कि आखिर उसे बीमारी क्या थी ? क्यों नहीं शहर के किसी और डाक्टर को उसकी परिचर्या के लिये बुलाया गया ? उस महिला ने क्यों एक छोटी-सी बस्ती के हस्पताल के डाक्टर को बुला भेजा था ? आधी रात को वह बीमारी की हालत में कहाँ से लाई गई थी । मैं लोगों को उसकी मृत्यु का क्या कारण बताऊंगा ? मैंने किसी दूसरे डाक्टर को खबर क्यों नहीं दी ? क्यों ?··· क्यों ?··· क्यों ?···

"कैसी रहस्यमय बात थी ! मेरे अतिरिक्त सिर्फ उस चीनी नौकर को इस रहस्य का पता था । मुझे विश्वास था कि मालकिन की मृत्यु के बाद भी उसकी स्वामिभक्ति में कोई अन्तर नहीं आयेगा ।

मैंने उसे बुला कर कहा, " तुम्हें याद है कि तुम्हारी मालकिन की अन्तिम इच्छा क्या थी ? वह नहीं चाहती थी कि किसी को भी इस घटना का पता चले ।"

"मालिक, आप मेरी ओर से निश्चित रहें," उसने भोलेपन से उत्तर दिया । मेरा विश्वास सही निकला ।

"उसने फर्श पर से खून के धब्बों को पानी से धोकर साफ़ किया और उसके साहस को देखकर मेरा उत्साह भी लौट आया ।

"जीवन में कभी मैंने इतना सशक्त अनुभव नहीं किया था । जब आखिरी तिनके के सिवा व्यक्ति के पास कोई सहारा नहीं रह जाता तो वह उस तिनके की रक्षा के लिये जी जान से लड़ता है । उसका रहस्य ही वह धरोहर थी जिसकी रक्षा के लिये मुझे संसार से युद्ध करना था ।

मैं शान्त भाव से सब लोगों के प्रश्नों का उत्तर देता रहा। मैंने उन्हें सुनाने के लिये एक अद्भुत कहानी गढ़ डाली थी। आखिर गर्म देशों में आकस्मिक रोग से मर जाना कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं। फिर साधारण लोगों में इतना साहस नहीं होता कि वे किसी डाक्टर के बयान का खंडन कर सकें। मैंने बताया कि उस महिला ने अपने नौकर को किसी बड़े डाक्टर के पास भेजा था, लेकिन रास्ते में उसकी भेंट मुझसे हो गई, और मैं उसके साथ घर चला आया। मुझे डर सिर्फ एक ही व्यक्ति से था—वह था सिविल सर्जन जिसके निरीक्षण के बगैर लाश दफ़नाई नहीं जा सकती थी। शनिवार को उस महिला का पति भी विदेश से लौटने वाला था। गर्म देशों में मृतक की लाश अधिक देर तक नहीं रखी जाती—लेकिन सिविल सर्जन से सर्टिफिकेट लेना नितान्त आवश्यक था। मैंने उन्हें खबर भिजवा दी।

"नौ बजे सिविल सर्जन भी आ पहुंचे। ओहदे में बड़े होने के साथ ही साथ वे मुझसे जलते भी थे, क्योंकि वाइस रेज़ीडेंट ने शहर लौटकर मेरी तारीफ के पुल बांध दिये थे। यही वह सिविल सार्जन थे, जिनके बारे में उस महिला ने नाक-भौं सिकोड़ कर कहा था कि उन्हें ताश खेलने के सिवा कुछ नहीं आता। सरकारी नियमों के अनुसार मेरी बदली के कागजों पर भी इन्हीं महाशय के हस्ताक्षर होने वाले थे। वाइस रेजीडेन्ट ने इस बात की चर्चा भी उनसे कर डाली थी।

"उसे देखते ही मुझे उसके हृदय में छिपी शत्रुता का आभास हो गया। लेकिन मैंने अपने दिल को मजबूत किया।

उसने आते ही तीर छोड़ा,

"श्रीमती ब्लैंक की मृत्यु कब हुई ?"

"आज तड़के छः बजे।"

"आपको यहाँ किस समय बुलवाया गया था ?"

"कल रात को ?"

"क्या आपको मालूम है कि मैं उनका निजी चिकित्सक हूँ ?"

"जी।"

"फिर आपने मुझे क्यों नहीं बुलवा भेजा ?"

"इसके लिये मेरे पास समय नहीं था। इसके अतिरिक्त श्रीमती ब्लैंक ने मुझे सख्त ताक़ीद कर दी थी, कि किसी और डाक्टर को न बुलाया जाये।"

सिविल सर्जन का चेहरा क्रोध से लाल हो गया। लेकिन उसने संयत स्वर में पूछा :

"ग़नीमत है कि आपने उनकी मृत्यु के बाद तो अपना फ़र्ज निभाया, और मुझे बुलाने की तक़लीफ की। अब मैं भी अपना फर्ज निभाना चाहता हूँ।"

मैं चुपचाप उन्हें उस कमरे में ले गया जहाँ मृतक का शरीर रखा था। उनके कुछ कहने से पहले ही मैंने कहा :

"देखिये मामला संगीन है। श्रीमती ब्लैंक ने एक चीनी दाई के पास जाकर गर्भपात करवाया था। उसके बाद उन्होंने मुझे बुलवा भेजा। उनके प्राण बचाना मेरे लिये असंभव था, लेकिन मरने से पहले उन्होंने मुझसे वचन मांगा था कि मैं उनके नाम पर धब्बा न लगने दूं। मैं इस मामले में आपकी सहायता चाहता हूँ।"

सिविल सर्जन ने चकित स्वर में उत्तर दिया—"क्या आप जानते हैं कि आप इस प्रान्त के मुख्य सर्जन से एक संगीन अपराध पर पर्दा डलवाना चाहते हैं ?"

"जी, मैं यही चाहता हूँ।"

"लेकिन मैं आपके पाप पर पर्दा क्यों डालूं ?" उनके स्वर में तीव्र घृणा थी।

"मैं आपको सारी स्थिति समझा चुका हूँ। यह श्रीमती ब्लैंक का निजी मामला था। पापी कौन है, इस बात में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं। अगर मैं पापी होता, तो कभी का आत्महत्या कर चुका होता। गर्भपात में किस व्यक्ति का हाथ है, यह मालूम करना भी अब निरर्थक

है। श्रीमती ब्लैंक के नाम पर धब्बा लगाकर ही आप अपराधी को पकड़ सकते हैं—लेकिन मैं यह बर्दास्त नहीं करूँगा।"

"आप बर्दाश्त नहीं करेंगे ! मालूम होता है, आप मेरे अफ़सर हैं। आपकी इतनी हिम्मत कि मुझे हुक्म दें ! कल रात आपको पार्टी में देखते ही मैं समझ गया था कि ज़रूर दाल में कुछ काला है। ऐसे आदमी को तो ज़िन्दगी भर जंगली बस्तियों में ही सड़ना चाहिये ! शहर में क़दम रखते ही आपने कमाल कर दिखाया ! खैर मैं मृतक के शरीर की जांच करके अधिकारियों को सही-सही रिपोर्ट दूंगा। आप कभी मुझसे झूठे सर्टिफिकेट पर दस्तख़त नहीं करवा पायेंगे ! समझे !"

मैं भी अपने निश्चय पर दृढ़ था।

"आपको फौरन दस्तख़त करने पड़ेंगे, वरना आप इस कमरे से ज़िन्दा वापिस नहीं जा सकेंगे।"

"मैंने जेब में हाथ डाला। पिस्तौल वहाँ नहीं थी। (वह तो मैं होटल में ही छोड़ आया था) लेकिन मेरी धमकी का असर फौरन हुआ। सिविल सर्जन भयभीत होकर पीछे हट गया। मैंने आगे बढ़ कर सख्त आवाज़ में कहा—

"देखिये ! मैं यहाँ कोई नया काण्ड नहीं खड़ा करना चाहता। लेकिन आप यह अच्छी तरह समझ लें कि मुझे अपने और आपके प्राणों की रत्ती भर परवाह नहीं है। मेरे सामने इस समय केवल एक उद्देश्य है। वह है अपने वचन का पालन। मैं श्रीमती ब्लैंक की मृत्यु का रहस्य कभी किसी के सामने प्रकट नहीं होने दूंगा। मैं क़सम खा कर कहता हूँ कि अगर आप सर्टिफिकेट में यह लिख दें कि तीव्र ज्वर के कारण श्रीमती ब्लैंक के हृदय की गति रुक गई थी तो मैं हफ्ते भर में ही इस देश को छोड़कर कहीं बाहर चला जाऊँगा। लोगों को बिल्कुल संदेह न होगा। अगर आप चाहें तो मैं उनके दफनाये जाने के फौरन बाद आत्महत्या कर लूंगा, ताकि कोई तीसरा व्यक्ति आक्षेप न कर सके। अब तो आपको सारी स्थिति समझ लेनी चाहिए।"

"मेरे चेहरे और आवाज़ में कुछ ऐसी रहस्यमयी शक्ति थी, जिससे सिविल सर्जन नर्म पड़ गया। जब भी मैं क़दम आगे बढ़ाता, वह आतंकित भाव से पीछे हट जाता, जैसे लोग बौराये हुए आदमी के हाथ में लहू से सनी छुरी देखकर पीछे हट जाते हैं। उसकी अफसरी की बू न जाने कहां ग़ायब हो गई थी। उसने बुदबुदाते हुए कहा,

"मैंने आज तक कभी झूठे सर्टिफिकेट पर दस्तख़त नहीं किये। हो सकता है, किसी को मुझ पर संदेह न हो। फिर भी मेरी आत्मा कहती कि यह काम ग़लत है।"

"दक़ियानूसी नैतिकता की दृष्टि में यह चाहे ग़लत हो, लेकिन यह एक असाधारण स्थिति है। आप जानते हैं कि सच बोलने से आप एक ज़िन्दा आदमी की आत्मा को कष्ट देंगे, और एक मृत महिला के चरित्र पर कलंक का धब्बा लगायेंगे। फिर झूठ बोलने में कैसी हिचकिचाहट ?"

उसने सर हिलाकर अपनी स्वीकृति दी। हम दोनों ने एक साथ बैठकर सर्टिफ़िकेट बनाया, जिसमें दिया गया विवरण अगले दिन के समाचार पत्रों में भी छपा था। इसके बाद सिविल सर्जन ने मुझसे पूछा,

"तुम अगले जहाज़ से योरप जा रहे हो न ?" "जी, यह तो मैं आपको पहले ही वचन दे चुका हूँ।"

वह आँखें फाड़कर मेरी ओर देखने लगा। मैं समझ गया कि वह मुझसे सख़्ती से पेश आना चाहता है। उसने अपनी घबराहट छिपाने के लिये कहा।

"मिस्टर ब्लैंक कुछ ही दिनों में अपनी पत्नी को लेकर स्वदेश लौटने वाले थे। मेरा अनुमान है कि वे अपनी पत्नी की लाश को ज़रूर उसके माता-पिता के पास पहुँचायेंगे। आप जानते हैं कि अमीर आदमियों के लिये ये चोचले कठिन नहीं। मैं अभी एक ताबूत मंगवा कर लाश को उसमें बंद करवा दूँगा, जिससे हमारी समस्या भी हल हो जायेगी, और

मिस्टर ब्लैंक भी समझ जायेंगे कि इतनी गर्मी में लाश को खुले में रखना सर्वथा अनुचित था। अगर उन्हें यह जल्दबाज़ी बुरी भी लगी, तब भी वे कुछ कहने का साहस नहीं कर सकेंगे। जो भी हो, हम सरकारी अफ़सर हैं और वह एक व्यापारी है, हालाँकि वह चाहे तो अपने धन से हम दोनों को खरीद सकता है। इसके अलावा हम उसे अनावश्यक पीड़ा से बचाने के लिये ही तो यह सब कर रहे हैं।"

"जो व्यक्ति कुछ मिनिट पहले मेरा दुश्मन था, वह अब मेरा सहयोगी बन गया था, क्योंकि उसे मालूम था कि उसे सदा के लिये मुझसे छुटकारा मिलने वाला है। लेकिन इसी समय उसने एक बेहूदा बात कही। मेरा हाथ झकझोरते हुए उसने कहा,

"उम्मीद है तुम जल्द ही स्वस्थ हो जाओगे।"

"आखिर इसका क्या मतलब था? क्या मैं बीमार था? क्या मैं पागल हो गया था? मैंने आदरपूर्वक दरवाज़ा खोला और सिविल सर्जन से विदा ली। उसके जाते ही मेरा सर ज़ोर से चकराने लगा और मैं निढाल होकर श्रीमती ब्लैंक के बिस्तर के पास गिर पड़ा, जिस तरह कोई बौराया आदमी, गोली से आहत होकर गिर पड़ता है।

"पता नहीं कितनी देर तक मैं उस हालत में पड़ा रहा। सहसा कमरे में किसी के क़दमों की आहट सुनकर मुझे होश आया। श्रीमती ब्लैंक का चीनी नौकर मेरे सिरहाने खड़ा होकर घबराई आवाज़ में कह रहा था,

"कोई व्यक्ति मालकिन को देखने आया है।"

"नहीं, कोई इस कमरे में नहीं आ सकता।"

"लेकिन.....लेकिन।"

उसने आतंकित नेत्रों से मेरी ओर देखा और कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन लज्जा के मारे वह कुछ न कह सका।

"वह आदमी कौन है?"

नौकर पत्ते की तरह काँपने लगा। उसने सिर्फ इतना ही कहा.

"मालकिन उन्हें बहुत चाहतीं थी।"

"मैं फ़ौरन समझ गया। न जाने कैसे इस घबराहट में मैं उस अपरिचित आदमी का अस्तित्व तक भूल गया था। आपको यह जानकर हैरानी होगी कि मुझे यह तक याद न रहा था कि इस मामले में एक तीसरा व्यक्ति भी दिलचस्पी रखता है, जिसे श्रीमती ब्लैंक हृदय से चाहतीं थीं, जिसके आगे वे अपना सर्वस्व अर्पण कर चुकी थीं। जिसके कारण उन्होंने मेरा अपमान किया था। अगर यही व्यक्ति दो दिन पहले मुझे मिलता तो मैं उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालता। लेकिन अब मैं उससे मिलने के लिये व्याकुल हो रहा था क्योंकि मुझे उससे प्रेम हो गया था—क्योंकि वह श्रीमती ब्लैंक का प्रेमी था।

"मैं भागता हुआ ड्राइंग रूम में पहुँचा जहाँ एक सुनहरी बालों वाला शरमीला तरुण अफ़सर खड़ा था। उसके चेहरे पर पीलापन था, देखने में वह लड़का-सा मालूम होता था लेकिन वह अपने पौरुष के प्रदर्शन की कोशिश कर रहा था। उसने कांपते हाथों से मुझे सैल्यूट किया। मेरे जी में आया कि आगे बढ़कर उस सुन्दर तरुण को गले लगा लूँ, क्योंकि मैंने कल्पना में श्रीमती ब्लैंक के प्रेमी का जो चित्र बनाया था, यह तरुण उससे हू-ब्रहू मेल खाता था।—वह कोई चरित्रहीन गुन्डा नहीं था, बल्कि एक कोमल, निश्छल तरुण था, जिसे श्रीमती ब्लैंक ने अपना प्रेमी बनाने के योग्य समझा था।

"वह मेरे सामने खड़ा शरमा रहा था। मेरे कौतूहल को देखकर उसकी घबराहट और भी बढ़ गई थी। वह बच्चे की तरह रुआँसा-सा होकर बोला—

"माफ़ कीजिये, क्या मैं श्रीमती ब्लैंक को एक बार देख सकता हूँ?"

"मुझे न जाने क्या सूझा, मैं उस तरुण के गले में बांह डाल कर उसे श्रीमती ब्लैंक के कमरे में ले गया। उसने कृतज्ञ नेत्रों से मेरी ओर देखा। उसी क्षण हम मैत्री के अज्ञात बंधन में बंध गये। पलंग के पास जाकर हम दोनों खड़े हो गये। चेहरे और बांहों के सिवा उनका सारा

शरीर सफेद चादर में लिपटा था। मुझे लगा कि उस तरुण को एकान्त में छोड़ना ही उचित है। मैं आकर एक कोने में खड़ा हो गया। वह भी मेरी तरह लाश के पास लुढ़क कर गिर पड़ा, फिर बच्चों की तरह फूट-फूट कर रोने लगा। उसकी भावनाओं का तूफ़ान संयम की सीमाएँ तोड़ कर बह निकला था।

"मैं उसे क्या कहता ? क्या कुछ भी नहीं ? मैं क्या करता ? मैंने उसे हाथ पकड़कर उठाया और सोफे पर बैठा दिया। मैं भी उसकी बग़ल में बैठ गया और उसके नर्म सुनहरी बालों को सहलाने लगा। उसने स्नेहपूर्वक मेरा हाथ दबाया और पूछा—

"डाक्टर, सच बताना, कहीं उसने आत्महत्या तो नहीं की ?"

मैंने उत्तर दिया, "नहीं।"

"तो क्या उसकी मृत्यु के लिये कोई दूसरा व्यक्ति ज़िम्मेदार है ?"

"नहीं" मैंने कहा। लेकिन मेरी अन्तरात्मा कह रही थी, "हाँ मैं, मैं ज़िम्मेदार हूँ। मैं और तुम, और तीसरा उस घमन्डी औरत का ज़िद्दीपन !"

लेकिन मैंने अन्तरात्मा की आवाज को दबाकर उत्तर दिया,

"नहीं—उसकी क़िस्मत में यही लिखा था।"

"लेकिन मुझे अब भी यक़ीन नहीं होता कि वह मर गई है। परसों पार्टी में वह मेरी ओर देखकर मुस्करा रही थी। यह सब कैसे हुआ ? वह इतनी जल्दी कैसे इस संसार से चली गई ?"

"मैंने उसे अनेक मनगढ़न्त कहानियाँ सुनाईं। कैसी विडम्बना थी ! मुझे उस स्त्री के प्रेमी से भी छल करना पड़ रहा था। तीन दिन तक हम दोनों सगे भाइयों की तरह बातें करते रहे। उस मृत स्त्री ने हम दोनों को एक अज्ञात स्नेहसूत्र में बाँध दिया था। मेरे मन में कई बार आया कि उसके प्रेमी से सारी बातें कह दूँ। लेकिन उस अभागे को यह कभी पता न चला कि वह श्रीमती ब्लैंक के शिशु का होने वाला पिता था, न ही यह कि उसकी प्रेमिका प्रेम की उस निशानी को नष्ट करने के

लिये मेरे पास आई थी और निराश होकर उसने एक ग़लत क़दम उठाया था, जिससे उसे अपने प्राण गंवाने पड़े थे। हम लगातार उसी के बारे में बातें करते रहे थे। मैं आपको यह बताना भूल ही गया कि मैं तीन दिन तक उस तरुण के घर छिपा रहा था। चारों ओर मेरी तलाश हो रही थी। मिस्टर ब्लैंक ने अपनी पत्नी की मृत्यु के बारे में अनेक अफ़वाहें सुनीं थी, जिनसे उनके मन में संदेह पैदा हो गया था, और वह मुझसे मिलकर सचाई मालूम करना चाहते थे। लेकिन मैं मिस्टर ब्लैंक से मिलने के लिये बिल्कुल तैयार न था, क्योंकि मैं जानता था, कि उन्हीं के आतंक के कारण उनकी पत्नी ने मौत का रास्ता अपनाया था। इसीलिये मैं उस तरुण अफ़सर के घर जाकर छिप गया था। उस तरुण की सहायता से मैंने जाली पासपोर्ट बनवाया और सिंगापुर जाने वाले एक जहाज़ में सवार हो गया। मैं अपने घर-द्वार और नौकरी को छोड़ कर चला आया था। निश्चय ही अधिकारियों ने अफ़सरों की सूची में से मेरा नाम काट दिया होगा, क्योंकि मैं बिना छुट्टी लिये गैरहाज़िर हो गया था। लेकिन मेरे लिये अब उस शहर में, उस देश में रहना असंभव था, क्योंकि वहाँ की हर चीज़ मुझे श्रीमती ब्लैंक की याद दिलाती थी। उसे भूलने के लिये ही तो मैं रात को चोर की तरह जावा छोड़कर भाग निकला था।

"लेकिन मेरे सब प्रयत्न विफल हुए। आधी रात को जब मैं जहाज़ पर सवार हुआ, तो मैंने देखा कि क्रेन की मदद से एक बड़े काठ के सन्दूक को जहाज़ पर लादा जा रहा था। यह श्रीमती ब्लैंक का ताबूत था, जो मेरा पीछा करता हुआ इस जहाज़ पर आ पहुँचा था। श्रीमती ब्लैंक का तरुण प्रेमी मुझे जहाज़ पर चढ़ाने आया था। हम दोनों चुप-चाप सन्दूक को देखते रहे। श्रीमती ब्लैंक का पति ताबूत लेकर इंग्लैंड जा रहा था। अगर उसने वहाँ जाकर लाश का दुबारा पोस्ट मार्टम कराया, तब·····क्या होगा ? जो भी हो, आखिर उसने श्रीमती ब्लैंक को हम दोनों से छीन ही लिया. ···वे अब उसी के कब्जे में थी···हम

दोनों विवश थे। सिंगापुर में जब मैं जहाज़ बदल कर इस जहाज़ में सवार हुआ, तो ताबूत ने यहां भी मेरा पीछा न छोड़ा। मिस्टर ब्लैंक भी इसी जहाज़ में यात्रा कर रहे हैं। लेकिन मैं श्रीमती ब्लैंक के रहस्य की रक्षा जीवन के अन्तिम क्षण तक करूँगा—जिस नरपशु से मुक्ति पाने के लिये वे मृत्यु की गोद में चली गईं थीं, उसे मैं कभी यह रहस्य नहीं मालूम होने दूंगा। कभी नहीं, कभी नहीं। वे अपना रहस्य मुझे सौंप गई हैं। मैं उसे पुण्य धरोहर की तरह संभालकर रखूंगा।

"अब आपकी समझ में आया कि मैं क्यों अन्य यात्रियों की दृष्टि से बचना चाहता हूँ, क्यों उनके हँसी-मज़ाक की आवाज़ से मुझे चिढ़ है! मैं कैसे हँस सकता हूँ जबकि मुझे मालूम है कि नीचे सामान के कमरे में चाय और अख़रोटों की पेटियों के बीच श्रीमती ब्लैंक की लाश पड़ी है! मैं उस कमरे तक नहीं पहुँच सकता, क्योंकि उसमें ताले लगे हैं। लेकिन जब यात्री डेक पर सैर करते हैं और डान्स करते हैं, तो मुझे उसकी उपस्थिति का आभास होता है। हो सकता है कि यह मेरी अस्वस्थ कल्पना का परिणाम हो। वैसे तो धरती के कण-कण में मानव शरीर के अवशेष बिखरे पड़े हैं और समुद्र के गर्भ में अनगिनत लाशें होंगी, लेकिन मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता। मैं नहीं चाहता कि जिस जहाज़ में श्रीमती ब्लैंक का शव जा रहा हो, उसके यात्री रंगरेलियाँ मनायें। मैं जानता हूँ कि श्रीमती ब्लैंक को अब भी मुझसे बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। उनका रहस्य अभी भी सुरक्षित नहीं है। मैंने उन्हें वचन दिया था कि अन्तिम सांस तक उनके रहस्य को गोपनीय रखूंगा। मैं उनके साथ विश्वासघात नहीं कर सकता।"

डेक पर नाविकों का आना-जाना शुरू हो गया था। मेरा साथी चौंक कर खड़ा हो गया और बोला, "मुझे अब यहाँ से चल देना चाहिए।"

उसके चिन्तातुर चेहरे को देखकर मेरे मन में करुणा उमड़ आई। उसकी आँखें रोने और शराब पीने से लाल हो रहीं थीं। बातचीत के

बीच वह अचानक मुझसे उदासीन हो गया था। शायद उसे यह पश्चाताप हो रहा था कि उसने मेरे सामने अपने हृदय की सारी व्यथा क्यों कह डाली। मैंने उसे विश्वास दिलाना चाहा कि मैं उसका मित्र हूँ। मैंने पूछा, "क्या आज दोपहर के समय मैं आपकी केबिन में आ सकता हूँ ?"

उसके ओठों पर एक कटु और सन्दिग्ध मुस्कान फैल गई। उसने झिझक कर उत्तर दिया, "क्यों नहीं ! आप तो परोपकारी जीव ठहरे। 'अपने भाई को मुसीबत में देखकर इन्सान को उसकी सहायता करनी चाहिए !' आपके इन शब्दों को सुनकर मेरी अपनी वाणी पर से संयम जाता रहा था। आपकी सद्भावना के लिए धन्यवाद, लेकिन आप मेरे एकान्त में बाधा न डालें तो अच्छा हो। यह मत सोचिएगा कि आपके सामने सारी कहानी सुना करके मेरे दिल का बोझ हल्का हो गया है। मेरी जिन्दगी की धज्जियाँ उड़ चुकी हैं, कोई उसे जोड़ नहीं सकता। सात बरस तक सरकारी नौकरी करने के बाद भी मैं आज भिखारी की तरह अपने देश लौट रहा हूँ, उस कुत्ते की तरह जो मुर्दे के पीछे लंगड़ाता हुआ चलता है। बौराया आदमी दुनिया की नज़रों से नहीं बच सकता। अंत में लोग उसे मार ही डालते हैं। मेरा अन्त जितनी जल्दी आ जाय उतना ही अच्छा है। आप मुझसे दोस्ती बढ़ाना चाहते हैं, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन मेरी केबिन में बढ़िया ह्विस्की की ढेरों बोतलें रखी हैं। उनसे बढ़कर हमदर्द दोस्त कौन हो सकता है ? मेरे साथ मेरा एक और दोस्त भी है। मुझे अफसोस है कि मैंने पहले उससे काम क्यों नहीं लिया। मेरा मतलब अपने पिस्तौल से है, जो मेरी आत्मा के लिए सबसे बड़ा प्रायश्चित सिद्ध होगा। इसलिए आप मुझसे मिलने का कष्ट न करें। एकान्त में मनमाने रूप से टर्राना भी मनुष्य का जन्म-सिद्ध अधिकार है, जिसे कोई नहीं छीन सकता। क्षमा कीजिए मुझे किसी 'सहकारी' की जरूरत नहीं है।"

उसने तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा। लेकिन मैं जानता

था कि उसका हृदय ग्लानि से जल रहा है। दुआ-सलाम के बिना ही वह अपनी केबिन की ओर भाग गया। इसके बाद मैंने उसे कभी नहीं देखा। मैंने कई रोज़ तक आधी रात के बाद डेक के चक्कर काटे। लेकिन उसका कहीं पता न था। मैं सोचने लगा, हो सकता है यह मेरी आँखों का भ्रम रहा हो, लेकिन यात्रियों के बीच एक विषादमग्न डच व्यापारी को देखकर मेरा यह सन्देह दूर हो जाता। मुझे लोगों ने बताया कि कुछ दिन पहले उस बेचारे की पत्नी तीव्र ज्वर से पीड़ित होकर चल बसी थी। उसकी बाँह पर शोक-सूचक काली पट्टी बँधी थी। वह किसी से बातचीत किए बग़ैर अकेला ही डेक पर घूमता रहता था और उसके चेहरे पर विषाद की गहरी रेखाएँ थीं। उसे देखकर मेरा मन बेचैन हो जाता, क्योंकि मैं उसकी यातना से परिचित था। ज्यों ही वह मेरे सामने आता, मैं अपना मुँह दूसरी ओर फेर लेता। मुझे डर था कि कहीं वह मेरे चेहरे के भावों से कुछ भाँप न जाय।

नेपल्स की बन्दरगाह में एक ऐसी घटना घटी, जिसका रहस्य मेरे सिवा कोई न समझ सका। जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, अधिकांश यात्री सैर-सपाटे के लिए शहर गये हुए थे। मैंने भी शहर जाकर ऑपेरा देखा था और उसके बाद एक जगमगाते हुए कॉफी हाउस में रात का खाना खाया था। जब मैं जहाज़ पर लौटा तो मैंने देखा कि जहाज़ के कर्मचारी कुछ घबराये से हैं, और कुछ नाविक डोंगियों में बैठकर मशालों की रोशनी में कुछ ढूंढ रहे हैं। डेक पर कुछ खलासी धीमे स्वर में बातें कर रहे थे। मैंने एक को बुलाकर पूछताछ की, लेकिन वह बात को टाल गया। मालूम पड़ता था कि वह कुछ छिपाने की कोशिश कर रहा है। अगले दिन सुबह हमारा जहाज़ जिनेवा की ओर चल पड़ा। मैंने रात की घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की, लेकिन कुछ हाथ न लगा। जिनेवा पहुँचकर एक इटैलियन अख़बार में मैंने नेपल्स में हुई दुर्घटना की सनसनी खेज़ ख़बर पढ़ी।

सन्ध्या के झुटपुटे में जहाज पर से एक बड़ा काठ का ताबूत एक

डोंगी में उतारा जा रहा था, ताकि जहाज़ के यात्रियों को इसकी सूचना न मिले । सन्दूक में एक स्त्री की लाश थी । उस स्त्री का पति नीचे डोंगी में बैठा था । (वह लाश को इंगलैण्ड ले जाकर दफ़नाना चाहता था ।) अभी ताबूत डोंगी में पहुँचा ही था कि ऊपर डेक से एक भारी-सी चीज़ ताबूत के ऊपर आकर गिरी, जिसके धक्के से डोंगी फौरन उलट कर समूद्र में डूब गई । खुशकिस्मती से डोंगी में बैठे लोगों की जान बचा ली गई ।

इस दुर्घटना का कारण क्या था, इस बारे में अख़बार के रिपोर्टर का कहना था कि कोई पागल व्यक्ति डेक पर चढ़ आया था, और उसने ताबूत के कब्ज़े रिंच से खोलकर ढीले कर दिये थे । शायद जहाज़ के कर्मचारियों की लापरवाही को छिपाने के लिये तरह-तरह की कहानियाँ गढ़ी गईं थीं । खैर, जो भी हो, जहाज के अधिकारी इस विषय में चुप थे ।

इसी अख़बार के एक कोने में एक छोटी-सी खबर और भी थी । नेपल्स की बन्दरगाह में एक पैंतीस वर्ष के नवयुवक की लाश बरामद हुई थी । उसके माथे में गोली का निशान था । किसी ने इस घटना को जहाज़ की दुर्घटना से जोड़ने की कोशिश नहीं की थी ।

अख़बार के छपे हुये काग़ज़ में से निकलकर उस दुःखी डाक्टर का प्रेत जैसा चेहरा मेरी आँखों के आगे खड़ा हो गया, जिसकी कहानी मैंने यहाँ लिखी है ।

एक अज्ञात स्त्री का पत्र

उपन्यासकार 'र' छुट्टियाँ बिताने पहाड़ गया हुआ था। वियाना वापिस पहुँचकर उसने स्टेशन से अख़बार खरीदा। जब उसकी नज़र अख़बार पर छपी तारीख़ पर गई तो उसे याद आया कि आज उसका जन्मदिन है। "इक्तालीस वर्ष !" यह विचार बिजली की तरह उसके दिमाग़ में घूम गया। उसके मन में इस बात की कोई खुशी या रंज नहीं था। उसने एक टैक्सी बुलाई और फिर अख़बार पढ़ने में तल्लीन हो गया। घर पहुँचकर उसे नौकर से ख़बर मिली कि उसकी अनुपस्थिति में कुछ मिलने वाले आये थे। एकाध साहब ने टेलीफ़ोन भी किया था।

उपन्यासकार 'र' ने लापरवाही से मेज़ पर रखे डाक के ढेर की ओर देखा और दो-चार ख़त उठाकर पढ़े, जो शायद उसके मित्रों के थे। डाक में एक भारी पुलिंदा भी था, जिस पर किसी अपरिचित की लिखावट थी। 'र' ने आराम कुर्सी पर बैठकर सुबह की चाय पी, अख़बार ख़त्म किया, और एक सिगार सुलगाकर उस पुलिन्दे को खोला।

पुलिन्दे में किसी स्त्री के हाथ के लिखे हुये दर्जनों पृष्ठ थे। लिखावट से मालूम होता था कि किसी ने घबराहट और आवेश में लिखा है। उपन्यासकार ने उन पृष्ठों को किसी पुस्तक की पाण्डुलिपि समझकर लिफ़ाफे को अच्छी तरह उलट-पुलटकर देखा, लेकिन भेजने वाले का नाम और पता कहीं नहीं था। "ताज्जुब है !" उपन्यासकार ने

मन ही मन कहा और वह उन पृष्ठों को पढ़ने लगा। पहले पृष्ठ पर लिखा था, "यह तुम्हें समर्पित है—तुम्हें, जो मुझे कभी नहीं जान पाये।" उपन्यासकार चकित होकर सोचने लगा, क्या ये शब्द मेरे लिए लिखे गये हैं, अथवा किसी काल्पनिक व्यक्ति के लिए! उसकी जिज्ञासा बढ़ गई और वह उस पत्र को पढ़ने लगा जो इस प्रकार था।

"मेरा बेटा कल चल बसा। तीन दिन और तीन रातों तक मैं उसके नन्हें जीवन के लिए मृत्यु से जूझती रही। चालीस घन्टों तक उसका शरीर इन्फ्लुएन्ज़ा के ज्वर से तपता रहा, और मैं उसके सिरहाने बैठकर उसके माथे पर ठण्डे पानी की पट्टियां रखती रही, और उसके नन्हें बेचैन हाथों को सहलाती रही। तीन दिन और तीन रातों तक। तीसरी रात को मेरे शरीर ने जवाब दे दिया। अनजाने में ही मेरी आंख लग गई और मैं स्टूल पर बैठी-बैठी सो गई। इन्हीं तीन-चार घन्टों में मृत्यु आकर उसे ले गई। मेरे सामने मेरा नन्हा मुन्ना पालने में पड़ा है। मानो अभी-अभी सोया हो। सिर्फ उसकी आंखें मुँदी हैं, काली, प्रतिभाशाली आंखें। उसकी दोनों बाहों को क्रॉस की मुद्रा में सीने से लगा दिया गया है। उसके पालने के कोनों में चार मोमबत्तियां जल रही हैं। हर कोने में एक मोमबत्ती। मेरी आँखों में उस ओर देखने का साहस नहीं है। मैं हिलडुल नहीं सकती, क्योंकि टिमटिमाती हुई मोमबत्तियों की परछाइयां उसके बन्द ओठों पर नाच रही हैं। मुझे लगता है, उसके ओंठ फड़क रहे हैं और वह अब भी जीवित है। वह अभी उठकर अपनी नन्हीं तोतली बोली में कुछ कहेगा। लेकिन मेरा हृदय जानता है कि वह अब नहीं उठेगा, इसलिए मैं उसकी ओर नहीं देखूंगी, वरना निराशा से मेरा कलेजा दो टूक हो जायेगा। अब मैं जान गई हूँ कि मेरे बेटे की कल मृत्यु हो चुकी है। अब संसार में केवल तुम्हीं अपने रह गये हो—तुम, जो मुझे जानते तक नहीं; तुम, जो सब बातों से बेखबर जीवन का आनन्द लूट रहे हो; केवल तुम, जिसके लिये मैं निरी अपरिचिता हूँ, फिर भी मैं तुम्हें सदा से प्रेम करती आयी हूँ।

"मैंने अभी पाँचवीं मोमबत्ती जलायी है और मेज पर बैठ कर तुम्हें पत्र लिख रही हूँ। किसी से अपने हृदय की वेदना कहे बिना मैं अपने मृत शिशु के सिरहाने अकेली नहीं बैठ सकती। तुम्हारे सिवा इस भयानक घड़ी में भला मैं किससे अपने मन की व्यथा कहूँ? तुम तो मेरे सर्वस्व हो। शायद मैं यह बात तुम्हें ठीक से समझा नहीं पाऊँगी। शायद तुम भी इस बात को समझ नहीं सकोगे। मेरा सर चकरा रहा है। मेरे माथे की नसें फट रही हैं। मेरा शरीर थकान से चूर हो गया है। शायद मुझे तेज बुखार है। इस ओर इन्फलुएँजा का प्रकोप है और मुझे भी उसकी छूत लग गई है। मुझे इसका अफसोस नहीं, क्योंकि आत्म-हत्या करने की बजाय इस तरह मरना कहीं अच्छा है। हो सकता है, इस रास्ते से मैं अपने बच्चे के पास पहुँच जाऊं। मेरी आँखों के आगे बार-बार अंधेरा छा रहा है, लगता है कि मैं इस खत को पूरा नहीं कर पाऊँगी। लेकिन मैं अपनी पूरी शक्ति लगाकर इस आखिरी बार तुमसे अपने मन की बात कहने की कोशिश जरूर करूँगी। मेरे प्रियतम, तुम तो मुझे जानते भी नहीं।

"मैं तुम्हें पहली बार अपने हृदय की सारी बातें बताना चाहती हूँ। मेरे जीवन के इतिहास को तुम कभी नहीं जान पाये, यद्यपि यह जीवन सदा से तुम्हारा ही रहा है। तुम्हें यह इतिहास अब मेरी मृत्यु के बाद ही मालूम होगा। तुम्हें किसी के आगे उत्तरदायी नहीं होना पड़ेगा। यदि इस ज्वर की गरमी ने मेरा अन्त न किया तो मैं इस खत को फाड़ डालूंगी और सदा की तरह मूक बनी रहूँगी। अगर यह खत तुम्हें पहुँच जाये तो समझ लेना कि एक मृत स्त्री तुम्हें अपने जीवन की कहानी सुना रही है; जिसका जीवन अन्तिम क्षण तक तुम्हें समर्पित था। तुम्हें चिन्ता करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। एक मृत स्त्री प्रेम, करुणा, स्नेह, सान्त्वना कुछ भी नहीं मांगती, मैं सिर्फ इतना ही चाहती हूँ कि तुम मेरे हृदय की वेदना को समझने की कोशिश करना, मेरी बातों पर

विश्वास करना। कोई माँ अपने इकलौते बेटे की लाश के सिरहाने बैठ कर झूठ नहीं बोल सकती।

"मैं तुम्हारे आगे अपने जीवन का सारा इतिहास दुहराने जा रही हूँ, जिसका आरंभ उस दिन से ही हुआ था जिस दिन मैंने तुम्हें पहली बार देखा था। उस दिन से पहले की सभी स्मृतियाँ धुँधली पड़ गई हैं, उस अँधेरी सीली कोठरी की तरह, जिसमें हर तरफ मकड़ी के जाले लगे हों। उन स्मृतियों से मुझे कोई सरोकार नहीं। जब तुम मेरे जीवन में आये, उस समय मैं तेरह बरस की थी, और मैं उस घर में रहती थी, जिसके सामने तुम अब भी रहते हो और जहाँ बैठ कर तुम इस खत को पढ़ रहे हो। यह खत मेरे जीवन का अन्तिम श्वास है। तुम्हारा फ़्लैट हमारे फ्लैट के सामने था। निश्चय ही तुम हमारे परिवार को भूल गये होगे। अपने पड़ोसी अकाउन्टेन्ट की विधवा पत्नी और उसकी मरियल-सी बेटी की याद तुम्हें क्योंकर होगी? हम माँ-बेटी हमेशा चुप रहती थीं। शायद तुमने हमारा नाम तक न सुना हो। क्योंकि हमारे दरवाज़े पर नाम की कोई तख्ती नहीं थी, न ही कभी कोई हमें मिलने आता था। फिर वे बातें बहुत पुरानी हैं, पन्द्रह-सोलह बरस पुरानी, इन्हें याद रखना असंभव है। लेकिन मेरे मन में सभी स्मृतियाँ सुरक्षित हैं। मुझे लगता है, जैसे यह सब कल परसों ही हुआ है। मैंने तुम्हें पहली बार कब, कहाँ देखा, यह सब मुझे अच्छी तरह याद है। क्यों कर न हो, मेरे जीवन का आरम्भ भी तो वहीं से जो हुआ है। कहीं मेरी कहानी सुनते-सुनते उकता न जाना—मैं जीवन भर तुमसे प्रेम करती रही हूँ और कभी नहीं उकताई।

"तुम्हारे आने से पहले जो लोग तुम्हारे फ्लैट में रहते थे, वे बड़े दरिद्र और झगड़ालू थे। स्वयं ग़रीब होते हुए भी वे हमारी ग़रीबी से नफ़रत करते थे। पति शराबी था और अपनी पत्नी को बहुत पीटता था। रात को उनके घर में से कुर्सियाँ और प्लेटें टूटने की आवाज़ें आती थीं, जिन्हें सुनकर हमारी नींद खुल जाती थी। एक बार उसने मारते-मारते अपनी

पत्नी को लहूलुहान कर दिया। यह रोती-चिल्लाती ज़ीने की ओर भागी, बहुत से लोग जमा हो गये, उन्होंने पुलिस बुलाने की धमकी दी। मेरी माँ को इन बातों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह सदा मुझे उन पड़ोसियों के बच्चों से अलग रखती थी, और मेरे ज़िद करने पर गालियाँ बकती थी। बच्चे भी मुझे सड़क पर अकेला पाकर खूब चिढ़ाते थे। एक बार बच्चों ने बर्फ की गेंद बनाकर मेरी ओर फेंकी, जिससे मेरा माथा फट गया। मुहल्ले भर के लोग उस परिवार से नफरत करते थे। जब एक दिन अकस्मात् वे मकान खाली करके चले गये, तो सबने सुख की सांस ली। शायद वह आदमी चोरी के अपराध में पकड़ गया था। कुछ दिनों तक उस फ्लैट के दरवाजे पर 'किराये के लिये खाली' की तख्ती लटकी रही। एक दिन वह तख्ती उतार दी गई और मकान-मालिक के कारिन्दे ने हमें बताया कि उस फ्लैट में कोई लेखक आ रहा है। उसने यह भी बताया कि तुम अविवाहित हो, इसलिये पड़ोसियों की शान्ति भंग नहीं होगी। इस दिन पहली बार मैंने तुम्हारा नाम सुना था।

"कुछ दिन बाद फ्लैट की सफाई की गई। दीवारों को नया रङ्ग किया गया, पेन्टरों और सजाने वालों [1] ने आकर फ्लैट को अच्छी तरह सजा दिया। मेरी माँ इस चहल-पहल को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई और कहने लगी, "अच्छा हुआ अब भला पड़ोसी मिलेगा।" तुम्हारा बूढ़ा नौकर सारे काम की देखभाल कर रहा था। उसके शालीन और गम्भीर चेहरे से मालूम होता था कि वह सदा से सम्पन्न घरानों में रहता आया है। उसकी कार्यकुशलता को देखकर सभी पड़ोसी प्रभावित हुए, क्योंकि हमारे मुहल्ले वालों ने ऐसा सलीकेदार नौकर कभी नहीं देखा था। वह हर किसी से नम्रतापूर्वक बोलता था, लेकिन मामूली नौकरों-चाकरों को

---

१. योरप में कलात्मक ढंग से घर सजाने के लिये पेशेवर लोगों की

कभी मुँह नहीं लगाता था। आरम्भ से ही वह मेरी माँ की इज्जत करने लगा, जैसे वह कोई रईस महिला हो, यहाँ तक कि मुझसे भी वह सलीके से बात करता था। वह हमेशा लोगों के सामने बड़े अदब-कायदे से तुम्हारा नाम लेता। मुझे वह बूढ़ा जॉन बहुत पसन्द था, लेकिन मन ही मन मुझे उससे ईर्ष्या भी होती थी, क्योंकि उसे तुम्हारे नजदीक रहने और तुम्हारी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त था।

"जानते हो, मैं इन छोटी-छोटी घटनाओं का जिक्र क्यों कर रही हूँ? इसलिये कि तुम समझ सको कि बचपन से ही मैं तुम्हारे व्यक्तित्व से कितनी प्रभावित थी। तुम्हें देखने से पहले ही मैंने मन में तुम्हारे अद्भुत और रहस्यमय व्यक्तित्व की कल्पना कर ली थी। तुम वैभव और सम्पन्नता की आभा लेकर हमारे पड़ोस में आये थे। दरिद्रता की संकीर्ण सीमाओं में रहने वाले लोगों का जीवन नवीनता से खाली रहता है। हमारे मुहल्ले के सभी लोग तुम्हें देखने के लिये आतुर थे। एक दिन दोपहर को जब मैं स्कूल से लौटी तो तुम्हारे फ़्लैट के आगे फ़र्नीचर का ठेला देखकर मेरे कौतूहल की सीमा न रही। बहुत-सा भारी सामान ऊपर जा चुका था, और मज़दूर छोटी-मोटी चीज़ों को उठाने में लगे थे। मैं अपने घर के दरवाजे पर खड़ी होकर चकित नेत्रों से तुम्हारे सामान को देखने लगी, क्योंकि हम लोगों के सामान से तुम्हारा सामान कितना भिन्न था। उसमें भारतीय और इटैलियन मूर्तियाँ, विशाल रंगीन चित्र और ढेरों सुन्दर पुस्तकें थीं। नौकर सावधानी से एक-एक किताब उठा कर, उसे कपड़े से पोंछ रहा था। मैं ललचाई आंखों से उस ढेर को देख रही थी। तुम्हारे नौकर ने मुझे दुत्कारा नहीं, फिर भी आगे बढ़ कर उन चमचमाती चमड़े की जिल्दों को छू लेने का साहस मुझमें नहीं था। मैं भीरुतापूर्वक पुस्तकों के टाइटल पढ़ने की कोशिश करने लगी, लेकिन उनमें से बहुत सी पुस्तकें फ्रेंच और अंग्रेजी की थीं, जिनका एक अक्षर भी मुझे नहीं आता था। शायद मैं घंटों खड़ी उस वैभव को

देखती रहती, लेकिन इसी समय मां ने मुझे आवाज़ दी और मैं भीतर चली गई।

"मैं रात भर तुम्हारे बारे में सोचती रही, हालांकि मैंने तुम्हें देखा तक नहीं था। मेरे पास गत्ते की सस्ती जिल्दों से मढ़ी कुल एक दर्जन किताबें थीं, जिन्हें मैं अपना अमूल्य ख़ज़ाना समझती थी और एक-एक पुस्तक को बीसियों बार पढ़ चुकी थी। मैं सोच रही थी, वह व्यक्ति देखने में कैसा होगा, जिसने इतनी ढेर-सी किताबें पढ़ डाली हैं और जो इतनी भाषायें जानता है, जो इतना वैभवशाली होने के साथ ही साथ विद्वान् भी है। उन किताबों को देखकर मेरे मन में एक अलौकिक भक्तिभाव जागा। मैं मन ही मन तुम्हारी शक्ल की कल्पना करने लगी—श्वेत लम्बी दाढ़ी और चश्में वाले एक वृद्ध की, जो हमारे भूगोल के अध्यापक से कहीं अधिक दयालु और सुन्दर होगा। न जाने क्यों मुझे विश्वास हो गया था कि तुम अतीव सुन्दर हो। उस रात मैंने पहली बार तुम्हारा सपना देखा।

"अगले दिन तुम नये मकान में आगये थे। बहुत कोशिश करने पर भी मैं तुम्हें देख न पाई। इस असफलता ने मेरी जिज्ञासा को और भी बढ़ा दिया। तीसरे दिन कहीं जा कर तुम्हारे दर्शन हुए। लेकिन तुम मेरी बालसुलभ कल्पना के धर्मपिता न थे—तुम आज भी उतने ही तरुण दिखाई देते हो, जितने उस दिन थे। तुमने हल्के बादामी रंग के ट्वीड का सूट पहन रखा था, और तुम बड़ी फुर्ती से सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे—तुम्हारी चाल में सदा से किशोरों जैसी चपलता रही है। हाथ में हैट था, जिसके कारण मैं तुम्हारे आभायुक्त सुन्दर चेहरे और बालों को देख पाई। तुम्हारे छरहरे शरीर को देखकर मुझे बड़ा अचम्भा हुआ। कितनी विचित्र बात है, कि उस प्रथम भेंट में ही मैंने तुम्हारे रहस्यमय व्यक्तित्व को परख लिया! मैं जान गई कि तुम्हारे भीतर दो व्यक्ति हैं, एक चपल खिलाड़ी है और दूसरा गंभीर, मननशील कलाकार। अनायास ही मैं वह बात जान गई थी, जो तुम्हारे सभी मित्र जानते हैं—कि तुम्हारे दो

जीवन हैं—एक सार्वजनिक जीवन, दूसरा तुम्हारा निजी जीवन, जिसके बारे में संसार कुछ भी नहीं जानता। मैं तेरह बरस की बच्ची तुम्हारे व्यक्तित्व के प्रबल आकर्षण से आहत होकर भी पहली नज़र में तुम्हारे जीवन-द्वैत की इस विषम खाई को कैसे देख सकी, इस पर मुझे आश्चर्य है।

"अब तुम समझ सकोगे कि तुम्हारा व्यक्तित्व उस समय मुझ बालिका के सम्मुख कितनी बड़ी पहेली रहा होगा। संसार तुम्हें महान् लेखक के रूप में जानता और पूजता था। लेकिन मेरे सम्मुख तुम एक पच्चीस वर्ष के हँसमुख तरुण के रूप में प्रकट हुए। मेरे सीमित संसार में तुम ही सबसे बड़ी हस्ती हो गये। मेरा जीवन तुम्हारे जीवन के गिर्द एक किशोर बाला की संपूर्ण आस्था लेकर घूमने लगा। मैं तुम्हारा, तुम्हारी आदतों का, तुम्हारे परिचितों का निरीक्षण करने लगी—जिसके परिणामस्वरूप तुम्हारे प्रति मेरा आकर्षण और भी बढ़ता गया। तुम्हारे व्यक्तित्व का द्वैत तुम्हारे परिचितों में प्रकट होता था। तुम्हारे पास तुम्हारे कई विद्यार्थी दोस्त आते थे, जिनके साथ बैठकर तुम गप्प लड़ाते थे और हँसते थे। मोटरों में बैठकर धनी महिलायें भी तुमसे मिलने आतीं थीं। एक बार ऑपेरा का निर्देशक भी हाथ में बेंत लिये तुमसे मिलने आया था। बहुत सी जवान शर्मीली लड़कियाँ, जो शक्ल से विद्यार्थी मालूम होती थीं, तुमसे मिलने आतीं थीं। एक दिन सुबह, जब मैं स्कूल जा रही थी, मैंने एक पर्दानशीन औरत को तुम्हारे फ़्लैट से बाहर निकलते देखा। मैं अभी बच्ची थी। मैं तब भी यह न समझ सकी कि मेरी उत्सुकता के मूल में प्रेम छिपा है।

"मुझे वह दिन और क्षण अच्छी तरह याद है, जब पहली बार मेरे हृदय में प्रेम की चेतना उत्पन्न हुई और मैंने अपना जीवन तुम्हें अर्पित कर दिया। मैं अपनी एक सहेली के साथ सैर करके लौटी थी, हम दोनों अपने घर के बाहर खड़ी बातें कर रहीं थीं। इतने में एक मोटर वहाँ आकर खड़ी हो गई और तुम मोटर से निकलकर अपने घर की ओर

बढ़े। मैंने किसी अज्ञात प्रेरणावश आगे बढ़कर तुम्हारे लिये दरवाजा खोल दिया। हम दोनों की टक्कर होते-होते बची। तुमने स्नेहभरे नेत्रों से मेरी ओर देखा। तुम्हारी मधुर मुस्कान मेरे रोम-रोम में व्याप्त हो गई। तुमने कोमल स्वर में कहा—'धन्यवाद!'

"बस! इसी क्षण से मैं तुम्हारी हो गई। मुझे क्या पता था कि तुम अपनी हर परिचित स्त्री को इसी तरह देखते हो, और यह तुम्हारी आदत है। यह जन्मजात प्रेमी की अदा थी, रोमांचकारी, और सुखद! तुम दुकानों में काम करने वाली सभी लड़कियों और नौकरानियों को इसी अदा से देखते थे। मेरा अर्थ यह कदापि नहीं कि तुम्हारी दृष्टि में वासना छिपी रहती थी, बल्कि किसी भी स्त्री को देखते ही तुम्हारी आँखें उल्लसित हो उठतीं थीं। तेरह बरस की लड़की इन बातों को क्या समझती; लेकिन मुझे लगा जैसे मेरा शरीर आग में जल रहा है। मुझे लगा, तुम्हारी वह दृष्टि केवल मेरे लिये ही थी, इसी क्षण मेरे भीतर का नारीत्व जाग उठा और मैं सदा के लिये तुम्हारी हो गई।

"यह आदमी कौन है?" मेरी सहेली ने पूछा। मैं तुम्हारा नाम कैसे बताती? वह तो मेरे हृदय का गुप्त खजाना था। मैंने सकपका कर कहा, "कोई नहीं, ये हमारे पड़ोसी थे।" मेरी सहेली में भी कम कौतूहल न था, उसने पूछा, "उसे देखकर तुम्हारा चेहरा लाल क्यों हो गया था?" मुझे लगा कि वह मेरा मजाक उड़ा रही है और वह मेरे खजाने को हथियाना चाहती है। क्रोध से मेरा चेहरा सुर्ख हो गया। जी में आया कि उसका गला घोट दूँ। वह व्यंगपूर्ण ढंग से हँसने लगी, मेरी आँखों में बेबसी के आँसू आ गये। "बेवकूफ़—गधी कहीं की!" कहकर मैं ऊपर भागी।

"तभी से मैं तुम्हें प्रेम करती आई हूँ। मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि तुम औरतों के मुँह से प्रेम-निवेदन सुनने के आदी हो। लेकिन मुझे यह विश्वास है कि किसी भी औरत ने इतनी हार्दिकता और दासीभाव से तुम्हारी आराधना नहीं की होगी।

"संसार का कोई प्रेम किसी अबोध बाला के अज्ञात प्रेम की बराबरी नहीं कर सकता। इस प्रेम में संयम और तीव्रता होती है। परिपक्व युवतियों के प्रेम में यह निःस्वार्थ भाव नहीं हो सकता। एकान्त से पीड़ित बच्चे ही इस प्रेम की तीव्रता को समझ सकते हैं। वयस्क लोग अपनी भावनाओं को मैत्री और भेदभरी बातों में गँवा देते हैं। पुस्तकों में प्रेम की बातें पढ़-पढ़ कर वे समझते हैं कि प्रेम सरल-सुलभ वस्तु है। वे प्रेम का प्रदर्शन इस प्रकार करते हैं, जैसे कोई छोकरा पहली बार सिगरेट पीते समय आत्म-प्रदर्शन करता है। वे प्रेम को खिलौना समझ कर खेलते हैं। लेकिन मैंने न ऐसी पुस्तकें पढ़ी थीं, न मेरी किसी अंतरंग सहेली ने मुझे यह शिक्षा ही दी थी। मैं अनुभवहीन और निश्छल थी। मेरे हृदय की सारी कोमल भावनायें तुम्हीं को केन्द्र मानने के लिये मचल उठीं। मेरे पिता कभी के मर चुके थे। माँ को अपनी ग़रीबी के रोने-धोने से ही फ़ुर्सत न थी कि वह अपनी बेटी को समझ सके। मेरी स्कूल की सहेलियों का प्रेम के प्रति दृष्टिकोण अत्यन्त छिछोरा था। इन बातों का नतीजा यह हुआ कि मैं अपनी उम्र की लड़कियों की तरह अपनी भावनाओं को बिखेर न सकी। तुम मेरे लिये, मैं कौनसी उपमा दूँ—जीवन के सर्वस्व हो गये। हर चीज में मैं तुम्हें देखती, तुम्हारे बिना सब निरर्थक था। तुमने आकर मेरा जीवन बदल दिया था। इससे पहले मैं स्कूल में गुम-सुम-सी रहती थी। अब मैं रात-रात भर बैठ कर पुस्तकें पढ़ने लगी, क्योंकि तुम्हें पुस्तकों से प्रेम था। मैं बड़े मनोयोग से प्यानो बजाने का अभ्यास करने लगी, क्योंकि मेरा ख़्याल था कि तुम्हें संगीत में भी रुचि है। मां को मेरा संगीत-प्रेम देखकर हैरानी हुई। तुमसे अपनी दरिद्रता छिपाने के लिये मैं अपने फटे कपड़ों को खुद सीने लगी। मेरे स्कूल जाने के एप्रिन में माँ ने दूसरे रंग की एक चौकोर टाकी लगा दी थी, जिसे देखकर मेरे हृदय में बड़ी वेदना होती थी। मुझे डर था, कहीं तुम उस टाकी की वजह से मुझसे नफ़रत न करने लगो। ज़ीने से उतरते समय मैं उस टाकी को अपने बस्ते से ढँक

लेती थी। मैं भी कितनी बेवकूफ थी। तुमने शायद ही कभी मेरी ओर देखा हो।

"अपने दरवाजे की दरार में से मैं छिप-छिपकर तुम्हें देखा करती थी। प्रियतम, इस बात पर हँसना नहीं। स्कूल से लौटते ही मैं पुस्तक हाथ में लेकर वायलिन के तारों की तरह तुम्हारे सामीप्य से झंकृत होने के लिये बैठ जाती। कई बार मुझे डर लगता कि कहीं मां को संदेह न हो जाये। लेकिन तुम्हारे लिये मेरा महत्त्व कुछ नहीं था। क्या तुम अपनी जेब में रखी घड़ी पर कोई ध्यान देते हो, वह घड़ी जो तुम्हारे जीवन के हर क्षण का हिसाब रखती है, उसकी टिकटिक से क्या तुम्हारे हृदय में कोई हूक उठती है? मैं तुम्हारी सभी आदतों से परिचित हो गई थी। तुम्हारे हर सूट और हर टाई का रंग मुझे याद हो गया था। तुम्हारे परिचितों को भी मैं जान गई थी, यहाँ तक कि मुझे उनमें से कुछ ना-पसंद भी आने लगे थे। तेरह से सोलह बरस की उम्र इसी तरह कट गई। इस बीच मैंने कौनसी बेवकूफी से भरी हरकतें नहीं कीं? मैंने तुम्हारे दरवाजे के हैंडल को न जाने कितनी बार चूमा होगा। मैं तुम्हारे झूठे सिगरेट के टुकड़ों को बटोरती थी, क्योंकि तुम्हारे ओंठों ने कभी उन्हें स्पर्श किया था। सैकड़ों बार मैं किसी न किसी बहाने से यह जानने के लिये सड़क पर जाती थी कि तुम्हारे किस कमरे में रोशनी हो रही है, ताकि मैं कल्पना में तुम्हारा सामीप्य पा सकूँ। जब तुम कहीं बाहर जाते (तुम्हारे नौकर जॉन को तुम्हारा सामान नीचे ले जाते देखकर मेरे हृदय की धड़कन बन्द हो जाती थी) तो मेरे जीवन में सूना-पन छा जाता। मैं खोई-खोई-सी रहती। बात-बात में माँ से झगड़कर रो पड़ती, और बेमतलब आवारागर्दी करने लगती। मुझे डर लगता कि कहीं माँ मेरे आँसुओं का अर्थ न समझ ले।

"मैं जानती हूँ कि तुम्हारे लिये ये बातें एक मूर्ख छोकरी की कल्पना-सृष्टि से अधिक महत्त्व नहीं रखेंगी, तुम इन्हें लज्जाजनक समझोगे। लेकिन सच पूछो तो मुझे इस प्रसंग में तनिक भी लज्जा नहीं आती,

क्योंकि उस समय मेरा प्रेम सर्वथा पवित्र था। मैंने कितने वर्ष तुम्हारे सहवास में बिताये हैं, यह जानकर तुम्हें आश्चर्य होगा। जब कभी ज़ीने में हमारा आमना-सामना हो जाता तो मै सर झुकाकर दूर निकल जाती, जैसे कोई आग में झुलसने के भय से पानी में छलांग लगा दे। तुम्हारी आंखों की गर्मी मुझसे बर्दाश्त न होती। अगर मैं इन दिनों का सारा इतिहास लिखने बैठ जाऊँ तो न जाने कितने घंटे लग जायेंगे। तुम्हारे विस्मृत जीवन का कैलेंडर मेरे मस्तिष्क में सुरक्षित है। लेकिन मैं तुम्हें इन बातों के ब्यौरे से तंग नहीं करना चाहती, लेकिन अपने किशोरकाल की एक घटना का ज़िक्र मैं यहां अवश्य करना चाहूँगी। तुम्हारी नज़रों में यह घटना चाहे कितनी ही तुच्छ हो, फिर भी इस पर हँसना मत, क्योंकि मेरे लिये यह अत्यन्त अर्थपूर्ण रही है।

"उस दिन जरूर इतवार रहा होगा। तुम उन दिनों बाहर थे। तुम्हारा नौकर बाहर बरामदे में कालीन झाड़ रहा था। कालीन भारी थे, मैंने साहस करके पूछा, "क्या मैं आकर तुम्हारी सहायता करूँ ?" उसे मेरे इस अनुरोध से आश्चर्य हुआ, लेकिन उसने उसे ठुकराया नहीं। क्या तुम कल्पना कर सकते हो कि मैंने कितने आदर से तुम्हारे घर में पैर रखा होगा ? उस दिन पहली बार मैंने नज़दीक से तुम्हारे संसार को देखा। तुम्हारे लिखने की मेज़ पर नीले काँच के फूलदान में सजे फूलों को, दीवारों में लगे चित्रों और अलमारियों में सजी पुस्तकों के ढेर को मैंने छिपी नज़रों से देखा, हालांकि अगर मैं जॉन से कहती तो वह अवश्य भीतर ले जाकर मुझे तुम्हारा घर अच्छी तरह दिखाता। लेकिन मेरे लिये इतना ही पर्याप्त था, इससे मेरे सपनों को नया वातावरण, नई प्रेरणा मिली।

यह क्षण मेरे बचपन का सबसे सुखद क्षण था। मैं तुम्हें इसलिये ये सब बताना चाहती हूँ कि तुम, जो मुझे जानते तक नहीं हो, समझसको कि मेरा जीवन किस सीमा तक तुम्हारा आश्रित था। जैसा कि मैं पहले बता चुकी हूँ, उन दिनों मैं और सब बातों को भूलकर केवल तुम्हारे

विचारों में डूबी रहती थी। मुझे अपनी मां से और अपने घर आने वाले लोगों में बहुत कम दिलचस्पी थी। मुझे यह भी याद न रहा कि इन्सब्रुक का एक अधेड़ व्यापारी अक्सर आकर कई दिनों तक हमारे यहाँ ठहरा करता था। वह मां को अपने साथ थियेटर ले जाता, मैं घर में अकेली रह जाती और तेरोकटोक दरार में से तुम्हें देखा करती—यही मेरे जीवन का एकमात्र सुख था। एक दिन मां ने मुझे अपने पास बुलाया और नम्रतापूर्वक कहा कि वह मुझसे एक 'गंभीर विषय' पर बात करना चाहती है। मेरा चेहरा पीला पड़ गया और मेरा दिल ज़ोर से धड़कने लगा। क्या उसे सब कुछ मालूम हो गया था? क्या मेरे चेहरे से उसे शक हो गया था? मुझे डर लगा कि मेरा खजाना मुझ से छिनने वाला है। लेकिन उधर मां स्वयं संकोच में गड़ी जा रही थी। उसने कभी आज तक मुझे प्यार से नहीं चूमा था। लेकिन उस दिन उसने कई बार स्नेह से मेरा माथा चूमा और हाथ पकड़ कर मुझे सोफे पर बैठाया, फिर झिझकती हुई कहने लगी कि उसके एक विधुर रिश्तेदार ने उससे शादी का प्रस्ताव किया है और उसने मेरी खातिर वह प्रस्ताव स्वीकार कर लेने का निश्चय किया है। मैं यह सुनकर घबरा गई, मैंने हकलाती आवाज़ में पूछा, "लेकिन हम इसी घर में रहेंगे न?"

"नहीं, इन्सब्रुक में फ़र्डीनैण्ड की कोठी है, हम वहीं जाकर रहेंगे।" इससे अधिक मैं कुछ नहीं सुन पाई। मेरी आँखों के आगे अन्धेरा छा गया। बाद में मुझे मालूम हुआ कि मैं बेहोश हो गई थी। मैं ज़ोर से अपने हाथों को मरोड़ने लगी। मेरा सारा शरीर ऐंठ गया था। मैं तुम्हें नहीं बता सकती कि अगले चंद दिनों में मेरे मन पर क्या बीती। यह एक असहाय बच्ची के असफल विद्रोह की कहानी है। इस घटना की स्मृतिमात्र से ही मेरे हाथ कांप रहे हैं। मैं अपने विद्रोह का असली कारण नहीं बताना चाहती थी, इसलिए मुझे चिड़चिड़ी और ज़िद्दी समझकर किसी ने मुझसे कुछ न कहा। चुपके-चुपके इन्सब्रुक जाने की तैयारियाँ होने लगीं। जब मैं स्कूल जाती तो मेरी अनुपस्थिति में घर का

सामान हटा दिया जाता या बेच दिया जाता। मुझे लगता, मानो मेरा जीवन टुकड़े-टुकड़े हो कर बिखर रहा है। आखिर एक दिन जब मैं रात के खाने के समय घर लौटी तो देखा कि सब कमरे खाली थे। एक कमरे में सामान से भरे कुछ संदूक और दो चारपाइयां बच रहीं थीं। वियाना में यह हमारी आखिरी रात थी।

"इस आखिरी रात को मैंने निश्चय किया कि जो भी हो, मैं तुम्हें देखे बगैर जीवित नहीं रह सकती। मैं ठीक से नहीं कह सकती, इस समय मेरे मन में क्या बीत रही थी, क्योंकि दुख और उदासी से मेरी चेतना लुप्त हो गई थी। मां कहीं बाहर गई हुई थी। मैं स्कूल के कपड़े पहने ही उठकर तुम्हारे दरवाज़े के पास चली गयी। कोई अज्ञात शक्ति मुझे वहाँ खींच लाई थी। आवेश से मेरे घुटने कांप रहे थे। मैं तुम्हारे पैर पकड़कर यह प्रार्थना करने आई थी कि तुम मुझे अपनी नौकरानी बनाकर अपने घर रख लो। शायद तुम मेरे इस अन्धे मोह पर हँसोगे। लेकिन ज़रा कल्पना करो, ठंडे फर्श पर पंद्रह वर्ष की एक अबोध बालिका दिल में एक तूफान लिए खड़ी थी। मैंने घंटी बजाने के लिए हाथ उठाया, लेकिन मेरे हाथों को जैसे लकवा मार गया। आखिर मैंने पूरी ताकत लगाकर बटन दबाया। घंटी की तीखी आवाज़ अब भी मेरे कानों में गूंज रही है। लेकिन उसके बाद डर से मेरे रक्त की गति बन्द हो गई। मैं भयभीत और आशंकित हृदय से तुम्हारे आने की प्रतीक्षा करने लगी। लेकिन तुम बाहर नहीं आये। दरवाज़ा बन्द रहा। शायद तुम घर में नहीं थे और जॉन भी कहीं बाहर गया हुआ था। मैं चुपचाप अपने घर लौट आई और चारपाई पर लेटकर रोने लगी। घण्टी की आवाज़ अब भी मेरे कानों में गूँज रही थी, और मैं इस तरह थकान से चूर हो गई थी जैसे घंटों बरफ़ में भटकती फिरी होऊँ। तो भी, इस थकान के बावजूद, जाने से पहले अन्तिम बार मैं तुम्हें देखना चाहती थी, तुमसे कुछ बातें करना चाहती थी। सच मानो उस समय मेरे मन में वासना लेश-मात्र न थी। मैंने तुम्हारे सिवा कभी किसी का ध्यान न किया था। इस-

लिए मुझे वासना का ज्ञान तक न था। मैं एक बार, सिर्फ एक बार, तुम्हारे पैरों से लिपटना चाहती थी। मैं रात भर जाग कर तुम्हारे घर लौटने की प्रतीक्षा करती रही। जब मां सो गई तब मैं दबे पाँव दरवाज़े के छेद के पास आकर खड़ी हो गई। जनवरी की सर्द रात थी। घर में कोई कुर्सी भी नहीं थी, इसलिए मैं ठंडे फर्श पर ही लेट गई। दरवाजे की दरार में से बर्फानी हवा के झोंके आते रहे। मैं बिना कुछ ओढ़े सर्दी में काँपती रही। मुझे डर था कि कम्बल ओढ़ने से मुझे नींद आ जायेगी, और मैं तुम्हारे कदमों की आहट न सुन सकूँगी। ठंड से मेरा शरीर सुन्न पड़ गया था। मैं इन्तज़ार करती रही, करती रही, करती रही।

"तड़के दो-तीन बजे तुम्हारी सीढ़ियों का दरवाज़ा खुला और किसी के क़दमों की आहट सुनाई दी। मेरे ठंडे शरीर में गर्मी की एक लहर दौड़ गई। मैं चुपके से दरवाज़ा खोलकर तुम्हारे क़दमों पर गिरने के लिये आगे बढ़ी। उस पागलपन में मैं न जाने क्या करने वाली थी। तुम मोम-बत्ती लिए ज़ीने से ऊपर आ रहे थे, हाँ तुम ही प्रियतम! लेकिन तुम अकेले नहीं थे। मुझे किसी के हँसने की आवाज़ सुनायी दी, किसी के रेशमी कपड़ों की सरसराहट और तुम्हारी धीमी आवाज़! तुम्हारे साथ एक औरत थी·····

"मैंने वह रात कैसे काटी, वह यहाँ नहीं लिखूँगी। अगले दिन सुबह आठ बजे वे मुझे इन्सब्रुक ले गये। मुझ में विद्रोह करने की शक्ति नहीं बची थी।

"कल मेरे बेटे की मृत्यु हुई है। अगर मैं ज़िंदा रही तो मेरा जीवन फिर सूना हो जायेगा। कल काले कपड़े पहनकर कुछ फूहड़ अजनबी आयेंगे, हाथों में मेरे इकलौते बेटे के लिए काठ का ताबूत लिए हुए। शायद कई मित्र भी फूलों की मालाएँ लेकर पहुँचे। लेकिन ताबूत पर मालाएं चढ़ाने से क्या होगा? वह मुझे सान्त्वना देने के लिए तरह-तरह के शब्द इस्तेमाल करेंगे···शब्द, शब्द, कोरे शब्द! ··· शब्दों से क्या होगा? मैं फिर अकेली रह जाऊँगी। मानव-समाज में अकेले रहने से

बड़ा अभिशाप कोई नहीं। इन्सब्रुक में दो साल रहकर मैंने यही सीखा है। वे दो साल मैंने एक कैदी और अछूत की तरह गुज़ारे हैं। मेरे सौतेले पिता दयालु प्रकृति के थे। मां भी जैसे किसी अज्ञात अन्याय का प्रतिकार करने के लिए, मेरी सभी मांगों को पूरा करने के लिए तैयार रहती थी। मेरी उम्र की कोई भी लड़की मेरी मित्रता पाकर प्रसन्न होती, लेकिन मैंने क्रोधपूर्वक उनकी सभी सद्भावनाओं को दूर धकेल दिया। तुमसे दूर रहकर मैं सुखी नहीं होना चाहती थी; मैंने एकान्त और आत्मपीड़न का मार्ग चुना। मां मेरे लिए नई भड़कीली पोशाकें खरीद कर लाती थी, मैंने उन्हें पहनने से इन्कार कर दिया। मैं किसी संगीतसभा, थियेटर या पिकनिक में शामिल नहीं होती थी। क्या तुम विश्वास करोगे कि दो वर्ष तक इन्सब्रुक में रहने के बाद भी वहाँ की सड़कें मेरे लिये अपरिचित थीं, क्योंकि मैं घर से बाहर बहुत कम निकलती थी। शोक ही में मुझे सुख था। तुम्हारे वियोग की पीड़ा में एक अद्भुत नशा था। मैं केवल तुम्हारी ख़ातिर जीना चाहती थी। चौबीसों घंटे तुम्हारी स्मृतियाँ मेरे मन की रंगशाला में नर्तन करती रहतीं। आज भी उन बीते हुए वर्षों की एक-एक घटना मेरी स्मृति में ताज़ी है। ऐसा लगता है, जैसे यह सब कल की ही बात है।

इसी तरह तुम मेरे जीवन के केन्द्र बनते गये। मैंने तुम्हारी लिखी सारी किताबें खरीद कर पढ़ डालीं। अगर किसी दिन अख़बारों में तुम्हारा नाम छपता तो वह दिन मेरे लिये सौभाग्य-दिवस होता। तुम्हें यह जान कर आश्चर्य होगा कि मुझे तुम्हारी हर पुस्तक की हर पंक्ति कंठस्थ हो गई थी। आज तेरह वर्ष बाद भी है। तुम्हारा हर शब्द मेरे लिये ब्रह्म-वाक्य था। मैं केवल तुम्हारे लिये जीती थी। वियाना के अख़बारों में कंसर्ट और थियेटरों के विज्ञापन पढ़कर मैं सोचती, "तुम आज इनमें से कौनसा नाटक देखने जाओगे? शाम होते ही मैं कल्पना के कंसर्ट हाल में तुम्हारे साथ दाखिल होती। बचपन में मैंने एक बार तुम्हें एक कंसर्ट

में देखा था। उसी स्मृति के आधार पर मैंने हजारों कंसर्टों की कल्पना कर डाली।

इन बातों को दुहराने से क्या फायदा? एक अभागी बच्ची के नैराश्यपूर्ण जीवन का इतिहास लिखने से क्या फायदा? फिर तुम्हें तो कभी सपने में भी मेरी भावनाओं का आभास न हुआ होगा। लेकिन तब क्या मैं बच्ची थी, सत्रहवां पार करके मैं अठारहवें में पहुँच गई थी, सड़कों पर युवक गर्दन घुमाकर मेरी ओर देखते थे—मुझे इस बात पर बड़ा क्रोध आता था। तुम्हारे सिवा किसी और के विचार तक को मैं पाप समझती थी। कोई और मुझसे प्रेम-निवेदन करे, यह मुझे सहन न था। उम्र के साथ मेरे प्रेम की तीव्रता भी बढ़ती गई थी—अब मैं तुम्हारे साथ तुम्हारे शरीर को भी चाहने लगी थी। तुम्हारे दरवाज़े की घंटी बजाते समय जो बात मेरे मन में न आई थी, वही अब मेरी एक-मात्र साध बन गई थी। मैं तुम्हें आत्मसमर्पण करना चाहती थी।

लोग मुझे डरपोक और शरमीली समझते थे। लेकिन मेरा लक्ष्य निश्चित था। मैं वियाना तुम्हारे पास लौटना चाहती थी, उसके लिये चाहे मुझे मां-बाप का कितना ही विरोध क्यों न करना पड़े। मेरे सौतेले पिता काफ़ी धनी थे और मुझे अपनी सगी बेटी मानते थे। लेकिन मैंने ज़िद की कि मैं वियाना जाकर नौकरी करूँगी। उन्होंने मुझे अपने एक दोस्त के सिलाई के कारखाने में नौकरी दिलवा दी।

क्या तुम्हें यह बताना पड़ेगा कि वियाना पहुँचकर सबसे पहले मैं किस ओर गई थी? स्टेशन पर सामान रखवा कर मैंने एक ट्राम पकड़ी, ओफ़! ट्राम कितनी धीमी चल रही थी—मुझे बार-बार क्रोध आ रहा था। तुम्हारे घर के नीचे पहुँचकर मैंने देखा, तुम्हारे कमरे में बत्ती जल रही थी। सहसा वियाना मुझे चिर-परिचित मालूम होने लगा और तुम्हारे समीप आकर मैं फिर जी उठी। हमारे बीच केवल खिड़की का पतला शीशा था, लेकिन मुझे इसी में संतोष था, क्योंकि मैं तुम्हारे घर के नीचे खड़ी थी—और तुम घर में मौजूद थे। दो वर्ष से मैं इसी क्षण

की प्रतीक्षा करती आई थी, आज वह क्षण आ पहुँचा था। मैं सारी शाम वहीं खड़ी रही। जब तुम्हारे कमरे की बत्ती बुझ गई, तो मैं वापिस लौट आई।

हर शाम को मैं वहीं आकर खड़ी हो जाती थी। शाम के छः बजे मुझे काम से छुट्टी मिलती थी। दिनभर मेहनत करने के बावजूद मैं प्रसन्न थी, क्योंकि शो-रूम की चहल-पहल कुछ घंटों के लिये मेरे हृदय के आवेग को थामे रखती थी। छः बजते ही मैं अपने चिर-प्रिय स्थान पर पहुँच जाती। मैं केवल एक बार तुमसे मिलना चाहती थी—नज़दीक से नहीं —केवल दूर से ही तुम्हारी सूरत देखना चाहती थी। एक हफ़्ते की तपस्या के बाद कहीं मेरी साध पूरी हुई। मैं सड़क पर खड़ी तुम्हारी खिड़की की ओर देख रही थी, इतने में तुम सड़क से आते दिखाई दिये। उसी क्षण मैं फ़िर तेरह बरस की बच्ची बन गई। मेरे गाल शर्म से लाल हो गये। मैं सर झुका कर वहाँ से भाग गई। तुम्हारी आँखों का ओज सहने की शक्ति मुझमें नहीं थी। बाद में मुझे अपने इस फूहड़-पन पर लज्जा हुई—क्योंकि मैं चाहती थी, कि तुम मुझे पहचानो और मुझसे प्रेम करो।

बहुत दिनों तक तुम्हारा ध्यान मेरी ओर नहीं आकृष्ट हो सका, यद्यपि मैं तूफान और बर्फबारी में भी तुम्हारी खिड़की की ओर देखा करती थी। कई बार तो मेरी साधना विफल जाती थी। तुम अपने दोस्तों के साथ बाहर घूमने चले जाते थे। दो बार मैंने तुम्हें एक अज-नबी स्त्री (जो मेरे लिये अजनबी थी) के साथ बाँह में बाँह डालकर बाहर जाते देखा। उसे देखकर मेरे मन में गहरी वेदना हुई। मैं बचपन से ही तुम्हारे घर में नौजवान लड़कियों को आते-जाते देखती थी, लेकिन उस दिन पहली बार मेरे मन में ईर्ष्या और वासना का उदय हुआ। एक दिन अभिमानवश मैं तुम्हारी खिड़की के नीचे नहीं आई (शायद अब भी मैं उस अभिमान से मुक्त नहीं हुई), लेकिन उस शाम ने मेरा अहं-कार चूर कर दिया और अगले दिन मैं नतमस्तक होकर तुम्हारे बन्द

द्वार के आगे जा खड़ी हुई, सदा की तरह। आखिर एक दिन तुम्हारा ध्यान मेरा ओर गया। तुम्हें दूर से आते देखकर मैंने अपना सारा साहस बटोर कर निश्चय किया कि तुम्हें देखकर मैं नज़रें नीची नहीं करूँगी। संयोगवश सड़क पर से कुछ सामान से लदी गाड़ियाँ गुज़र रही थीं, इसलिये तुम्हें मेरे पास से गुज़रना पड़ा। अनायास तुम्हारी आँखें मेरे शरीर की ओर उठीं और तुम्हारे ओठों पर चिर-परिचित मुस्कान आ गई। वही मुस्कान जिसने मेरे शरीर में विद्युत दौड़ा दी थी, जिसने मुझमें पहली बार नारीत्व का संचार किया था। मैं भी तुम्हारी ओर देखती रही। जब तुम चले गये तो मैंने पीछे मुड़कर तुम्हारी ओर देखा। तुम भी खड़े होकर मुझे देख रहे थे। तुम्हारी कौतूहल भरी दृष्टि से साफ़ जाहिर था कि तुमने मुझे नहीं पहचाना। तुमने बाद में भी मुझे कब पहचाना! मैं अपनी निराशा का वर्णन किन शब्दों में करूँ? ऐसी निराशा मुझे कभी नहीं हुई थी, लेकिन वही निराशा मेरी जीवन-संगिनी बनी। तुमने मुझे आज तक नहीं पहचाना। मैं इसी तरह मर जाऊँगी। काश! तुम मेरे हृदय की वेदना को समझ पाते। मैं जब इन्सब्रुक में थी, तो सोचती थी, हमारी अगली भेंट कितनी अलौकिक होगी! मेरे मन में न जाने कितनी सुखद कल्पनायें आई होंगी। कभी मैं सोचती कि तुम मुझे बदसूरत कह कर मुझे घृणा से दुत्कार दोगे। मैंने सभी निष्ठुरताओं की कल्पना की थी, लेकिन घोर नैराश्य के क्षणों में भी मैंने इस बात को नहीं सोचा था कि तुम मेरे अस्तित्वमात्र से ही बेख़बर हो। लेकिन अब मैं जान गई हूँ (तुमने यह सिखाया है) कि पुरुष को आकर्षित करने के लिये स्त्री के पास अभिनेता का चेहरा चाहिये। पुरुष स्त्री का चेहरा बहुत जल्दी भूल जाता है, क्योंकि उम्र समय और पोशाक के अनुसार स्त्री के चेहरे की छवि बदलती रहती है। ज्ञान में वृद्धि के साथ-साथ स्त्री के व्यक्तित्व में आत्मविश्वास आ जाता है। लेकिन मैं अभी लड़की ही थी। मैं तुम्हारे भुलक्कड़पन को न समझ सकी। तुम्हें देखने के बाद, तुम इस तरह मेरे मन पर छा गये थे, कि मैं समझने लगी थी

कि तुम्हें भी अक्सर मेरी याद आती होगी। फिर, तुम्हारी स्मृति में मेरे लिये तिलभर स्थान नहीं, यह जानकर भला मैं कैसे ज़िन्दा रह सकती थी ? तुम्हारी उस दिन की दृष्टि ने स्पष्ट कर दिया कि तुम्हारे जीवन से मेरे जीवन का कोई सम्बन्ध नहीं—उस दिन पहली बार मुझे यथार्थ का ज्ञान हुआ, और मुझे अपने भाग्य का लेखा दिखायी दिया।

दो दिन बाद सड़क पर जब फिर हमारी मुलाक़ात हुई तो तुमने बड़ी आत्मीय दृष्टि से मेरी ओर देखा, इसलिये नहीं कि तुमने मुझे पहचान लिया था, बल्कि इसलिए कि अठारह वर्ष की उस युवती का चेहरा तुम्हें सुन्दर मालूम हुआ था। तुम्हारे चेहरे पर एक मैत्रीपूर्ण मुस्कान फैल गयी। मेरे पास आकर तुमने अपनी चाल धीमी कर दी। मेरा रोम-रोम सिहर उठा। मुझे लगा कि तुम पहली बार मेरे अस्तित्व से परिचित हुए हो। मैंने भी तुमसे नज़रें चुराने की कोशिश नहीं की। मैं जानती थी, तुम मेरे पास आकर मुझसे कुछ कहोगे। इस प्रतीक्षा में मेरा हृदय ज़ोर से धड़कने लगा। तुम आकर मेरी बगल में खड़े हो गये, इस तरह जैसे बरसों से हमारी पहचान है—हालाँकि तुम वास्तव में मुझे नहीं जानते थे और कभी नहीं जान पाये। तुम्हारी बातचीत का लहजा इतना सरल और शिष्ट था कि मैं बेखटके तुमसे बातें करने लगी। हम काफ़ी देर तक सड़क पर चहल-कदमी करते रहे। इसके बाद तुमने मुझे साथ खाने के लिए निमंत्रित किया। मैंने तत्काल स्वीकार कर लिया। मैं तुम्हारी कौन-सी बात टाल सकती थी ?

हमने एक छोटे से रेस्तरां में बैठकर खाना खाया। तुम उस रेस्तरां का नाम भूल गये होगे, क्योंकि तुम्हारे लिये यह कोई नयी घटना नहीं थी। मेरी जैसी सैकड़ों लड़कियाँ तुम्हारे जीवन में आ चुकी होंगी। मैं उस लम्बी शृंखला की एक छोटी-सी कड़ी मात्र हूँ। फिर मुझमें ऐसी कौन-सी विशेष बात थी जो तुम मुझे याद रखते ? मैंने बातचीत में बहुत कम हिस्सा लिया था, क्योंकि तुम्हारे समीप बैठकर और तुम्हारी बातें सुनकर मुझे

अलौकिक सुख मिल रहा था। मैं ज्यादा बोलकर उस सुख को नष्ट नहीं करना चाहती थी। मैं उन अलौकिक क्षणों के लिये सदैव तुम्हारी कृतज्ञ रहूँगी, क्योंकि तुमने मेरे आराध्य गुणों का परिचय दिया था। तुम्हारी उस दिन की व्यवहार-कुशलता को मैं कभी नहीं भूलूंगी। तुमने मुझे आलिंगन में बाँधने के लिए कोई आतुरता नहीं प्रकट की। लेकिन तुम्हारे आत्मीय भाव ने मुझ पर ऐसा जादू डाला, कि मैं यदि पहले से तुमसे प्रेम न करती होती, तो भी सहर्ष तुम्हें आत्म-समर्पण कर देती। उस दिन मेरी पाँच वर्षों की साधना सफल हुई थी। क्या तुम मेरे उल्लास का अनुमान लगा सकते हो ?

काफी रात बीते हम रेस्तरां से बाहर निकले। तुमने मुझ से पूछा, "क्या इस समय तुम्हें कहीं जाना है ?" मैंने उत्तर दिया कि मेरे पास समय की कमी नहीं है। भला तुम्हारे लिए मेरे पास समय न होता ? तुमने संकोचपूर्वक कहा, "मुझे तुम से कुछ बातें करनी हैं, क्या मेरे साथ घर चलोगी ?" "खुशी से", मैंने उत्तर दिया। मैंने सच ही कहा था। लेकिन मेरी इस स्वीकृति से तुम्हें आश्चर्य हुआ। तुम नाराज़ हुये या प्रसन्न, यह मैं ठीक से नहीं जान सकी। लेकिन आज मैं तुम्हारे आश्चर्य का कारण भली भांति समझ सकती हूँ। मैं जान गई हूँ कि आत्म-समर्पण के लिए आतुर होने पर भी स्त्रियां अपने प्रेमियों के सामने उदासीनता और आक्रोश का अभिनय करती हैं। स्त्रियों के आगे अनुनय-विनय करने और झूठे बहाने बनाने में ही पुरुषों को परम सुख प्राप्त होता है। मैं समझने लगी हूँ कि केवल पेशेवर वेश्याएँ और सरल हृदय, अपरिपक्व लड़कियां ही ऐसे निमन्त्रण को तत्काल स्वीकार कर लेती हैं। तुम्हें कैसे मालूम होता कि मैंने किसलिए तुम्हारे साथ जाना स्वीकार किया था ? तुम्हें क्या पता कि मेरे मन में चिरकाल से दबी कितनी आकांक्षाएँ तुम्हें देखकर जाग उठी थीं ?

"खैर, मेरे उत्तर से मुझ में तुम्हारी दिलचस्पी बढ़ गई। मुझे लगा कि बातचीत के बीच तुम मुझे परखने की कोशिश में लगे थे। अनुभवी

होने के कारण तुम जान गये थे कि मुझ में कोई असाधारणता है। तुम्हारा लेखक-सुलभ कौतूहल जाग उठा था। और तुम खोद-खोदकर मेरे जीवन का रहस्य जानने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन मैं भी टालमटोल करती रही, तुम्हें ऊटपटांग जवाब दिये। अपना रहस्य खोलने की बजाय, तुम्हारी दृष्टि में मूर्ख बनना मुझे अधिक पसन्द था।

तुम्हारे फ्लैट की सीढ़ियां चढ़ते समय प्रसन्नता से मेरा दम घुटा जा रहा था। उस क्षण की याद आते ही मेरी आंखों से आंसू झरने लगते हैं। लेकिन अब मेरी आंखों में आँसू नहीं रहे। तुम्हारे घर की एक-एक चीज़ मेरे लिए भावुकता में सिक्त थी। हर चीज़ मेरी बचपन की आकांक्षाओं की प्रतीक थी। तुम्हारे दरवाज़े के पीछे मैंने हज़ारों बार खड़े होकर तुम्हारी प्रतीक्षा की थी। तुम्हारी सीढ़ियों पर ही तो पहले पहल हमारी मुलाकात हुई थी। तुम्हारे कमरे के पायदान पर मैंने कभी घुटने टेके थे। तुम्हारी चाबी घुमाने की आवाज़ मेरे लिए सिगनल थी। मेरे बचपन की सारी स्मृतियाँ इस तंग दायरे तक ही सीमित थीं, जो उस दिन तूफान बनकर उमड़ आयी थीं। मैं परिपूर्ण होने जा रही थी। मैं तुम्हारे साथ, तुम्हारे घर में दाखिल हुई थी। अपना घर कहूँ तो तुम्हें मेरी क्षुद्रता लगेगी। तुम्हारा दरवाज़ा मेरे कल्पना के संसार का द्वार था, अलादीन के परीदेश का द्वार था। इस द्वार पर मेरी आशा-भरी आँखें हज़ारों बार टकराईं थीं—उस दरवाज़े में दाखिल होते समय मेरे मन की भावनाओं का अनुमान तुम कभी नहीं लगा पाओगे।

वह सारी रात मैंने तुम्हारे साथ बितायी। तुमने कल्पना भी न की होगी कि तुम से पहले किसी पुरुष ने मेरे शरीर का स्पर्श नहीं किया। तुम्हें इसका आभास क्योंकर होता—मैंने मुक्त हृदय से तुम्हें आत्म-समर्पण जो कर दिया था? मैं अपने मन का रहस्य मन में ही रखना चाहती थी, अन्यथा तुम आशंकित हो उठते। तुम जीवन में आसानी से आने-जाने वाली चीज़ों को पसन्द करते हो, जिनकी वजह से तुम्हें कोई परेशानी न उठानी पड़े। तुम किसी और के भाग्य से नहीं बँधना

चाहते। तुम मुक्त-हृदय से सब लोगों में अपना खज़ाना लुटाना चाहते हो, लेकिन त्याग के लिए तुम तैयार नहीं। मैंने अपना अछूता शरीर तुम्हें अर्पण किया था, इस बात का ग़लत अर्थ न समझ बैठना। मैं तुम्हारे ऊपर दोषारोपण नहीं कर रही। तुम मुझे धोखे से फुसला कर तो अपने साथ लाये नहीं थे, जो मैं तुम पर दोषारोपण करूं? मैंने अपने प्रारब्ध के आगे बाहें फैला दी थीं। उस रात के लिये आज भी मैं तुम्हारी कृतज्ञ हूँ। तड़के जब मेरी आंखें खुलीं तो मैंने देखा, तुम मेरी बग़ल में लेटे थे। मुझे लगा मैं सपना देख रही थी। प्रियतम, उस रात के लिये मेरे मन में कभी पश्चात्ताप नहीं हुआ। मैं कान लगा-कर तुम्हारी सांस सुनने लगी और तुम्हारे शरीर का स्पर्श करने लगी—तुम्हें इतने समीप पाकर मेरी आंखों में प्रसन्नता के आंसू छलक आये।

अगले दिन सुबह मुझे काम पर जाना था, इसलिये मैं जल्दी उठकर तुम्हारे नौकरों के जागने से पहले ही चली गई। जाने से पहले तुमने मेरी कमर में बाहें डालकर मुझे अपने पास खींच लिया और बड़ी देर तक मुझे देखते रहे। क्या तुम्हारे मन में अतीत की कोई स्मृति-रेखा उभर आई थी, या मैं तुम्हें सुन्दर दिखाई दे रही थी? तुमने मेरे ओठों को चूमा और कहा, "अपने साथ कुछ फूल तो लेती जाओ!" तुम्हारी लिखने की मेज़ पर चिर-परिचित नीले फूलदान में चार सफेद गुलाब थे, जो तुमने मुझे भेंट में दिये। कई दिनों तक मैं उन्हें चूमती रही।

हमने दूसरी बार फिर मिलने का वादा किया था। एक बार फिर मुझे अलौकिक सुख का अनुभव हुआ। मैंने तुम्हारे साथ तीन रातें गुजारीं। उसके बाद तुमने कहा कि तुम कुछ अरसे के लिये वियाना से बाहर जा रहे हो। मुझे तुम्हारी इन यात्राओं से सख्त चिढ़ थी। तुमने वादा किया कि तुम मुझे खत लिखते रहोगे। मैंने तुम्हें अपना सही नाम और पता नहीं बताया। विदा के समय तुमने फिर मुझे गुलाब के फूल दिये।

दो महीने तक मेरे दिल पर क्या बीती···नहीं मैं उस वेदना का वर्णन नहीं करूंगी। मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं। मैं तुम्हें तुम्हारी

स्वच्छन्दता, तुम्हारे भुलक्कड़पन और तुम्हारी बेवफ़ाई के बावजूद भी जी-जान से चाहती हूँ। तुम सदा से ही ऐसे थे। दो महीने से पहले ही तुम वियाना लौट आये। तुम्हारे कमरे की बत्तियों से मुझे तुम्हारे आगमन की सूचना मिल गई थी, लेकिन तुमने मुझे एक भी खत नहीं लिखा। इन अन्तिम क्षणों में मेरे पास तुम्हारे हाथ की लिखी एक पंक्ति भी नहीं है। मैं प्रतीक्षा करती रही, तुमने मुझे न खत लिखा, न अपने पास बुलाया।

कल मेरे बच्चे की मृत्यु हुई है। वह तुम्हारा बेटा था, उन तीन रातों की स्मृति था। मैं उसके जन्म के बाद भी तुम्हारी ही रही। तुम्हारे स्पर्श ने मेरे शरीर को जो पवित्रता प्रदान की थी, उसे मैं किसी अन्य के आलिंगन द्वारा नष्ट नहीं करना चाहती थी। प्रिय, वह हमारा बेटा था! मेरे हार्दिक आत्मसमर्पण का और तुम्हारे लापरवाह प्रेम का! हमारा इकलौता बेटा! तुम सोचोगे, मैंने पहले तुम्हें, तुम्हारे बेटे के बारे में क्यों नहीं बताया और इतने वर्षों की लम्बी चुप्पी को आज तोड़ने की कौनसी जरूरत आ पड़ी है—आज जब हमारा इकलौता चिरनिद्रा में सोया पड़ा है? मैं तुम्हें कैसे बताती? मैं तुम्हारे लिये एक अपरिचिता जो थी, जिसने सहर्ष तीन रातें तुम्हारे साथ गुजारी थीं। तुम्हें कभी विश्वास न हो पाता, कि मैं चिरकाल से तुम्हारे प्रति वफ़ादार रही हूँ, क्योंकि तुम वफ़ा से अपरिचित हो। तुम कभी भी उस बच्चे को अपना बेटा न स्वीकार करते। तुम्हें अगर मेरे प्रेम पर विश्वास हो भी जाता, तो भी मन ही मन तुम मुझे कुलटा समझते—जिसने तुम्हारे धन के कारण तुम्हें, अपने किसी अज्ञात प्रेमी के बच्चे का पिता बना दिया। हम दोनों के बीच में आजीवन अविश्वास की दीवार खड़ी रहती। मुझे यह स्वीकार न था। मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती हूँ—शायद तुम भी अपनी आत्मा को इतना नहीं पहचान पाये। तुम दायित्वहीन स्वच्छन्द जीवन पसन्द करते हो, प्रेम का तुम्हारे लिये यही अर्थ है। अपने को अकस्मात् पिता के स्थान पर बँधा देखकर तुम्हें चिढ़ होती—एक बालक

के जीवन का दायित्व तुमसे कैसे संभल पाता ? तुम स्वच्छन्द प्राणी हो, मैं तुम्हारे जीवन में बन्धन बनकर नहीं दाखिल होना चाहती थी। तुम्हारा अवचेतन मन सदा मुझे अप्रिय भार मानकर घृणा करता रहता। लेकिन मेरे स्वाभिमान ने मुझे भार न बनने दिया। मुझे स्वयं सारा भार उठाना स्वीकार था। मैं तुम्हारे जीवन में आने वाली उन स्त्रियों में से एक स्त्री बनना चाहती थी, जिसके प्रति तुम्हारे हृदय में कृतज्ञता का भाव है। लेकिन तुमने तो मुझे उस श्रेणी से भी बहिष्कृत कर दिया। तुम मुझे बिल्कुल भूल गये।

मैं कोई शिकायत नहीं कर रही। बीच-बीच में मेरी कलम से विष के बुझे जो शब्द निकलते हैं, उन्हें क्षमा कर देना। क्योंकि मेरा बेटा, हमारा बेटा, टिमटिमाती हुई मोमबत्तियों की छाया में सो रहा है। मैंने आवेश में आकर ईश्वर को गालियां दी हैं, हत्यारा कहा है। तुम दयालु हो, इस पागलपन को क्षमा कर दोगे। तुम अपरिचितों को सहायता करते हो, लेकिन तुम्हारी दयालुता को परिधि में नहीं बांधा जा सकता। जिसके मन में जितना आये मांग ले। लेकिन बिना मांगे तुम्हारी दयालुता प्राप्त नहीं हो सकती। लोकलज्जा और कमजोरी से तुम्हारा हृदय द्रवित होता है, दान की गरिमा से नहीं। मैं साफ-साफ कहूँगी कि तुम्हें अपने सुखी दोस्त, विपद्ग्रस्त अभागों से कहीं अधिक प्यारे हैं। इसलिये तुम जैसे लोगों से याचना करना बड़ा कठिन काम है। बचपन में एक बार मैंने अपने दरवाज़े की दरार में से तुम्हें एक भिखारी को दान देते देखा था। तुमने उसके कुछ कहने से पहले ही उसे दे-दिलाकर विदा कर दिया था। तुम्हारी जल्दबाजी और घबराहट से साफ जाहिर था कि तुम उससे आँखें मिलाने में डरते हो, और किसी भी कीमत पर उससे छुटकारा पाना चाहते हो। तुम 'धन्यवाद' शब्द से बचना चाहते थे। तुम्हारा दान देने का यह तरीका मुझे अभी तक याद है। इसीलिये मुसीबत में मैं कभी तुम्हारे पास नहीं आई। मैं जानती हूँ, तुम मेरी और मेरे बच्चे की सहायता करते, पैसे की कमी कभी न होने देते—लेकिन उसके पीछे

तुम्हारी पिण्ड छुड़ाने की प्रवृत्ति छिपी रहती। मेरा तो यहाँ तक विश्वास है कि तुम मुझे अजन्मे बच्चे से ही पिण्ड छुड़ाने की राय देते। मुझे सबसे अधिक इसी बात का भय था, क्योंकि तुम्हारा आदेश टालना मेरे लिए सम्भव न था। लेकिन अब बच्चा ही मेरे लिये सब कुछ था, क्योंकि बच्चे के रूप में तुमने जन्म लिया था। स्वच्छन्द प्रेमी के रूप में नहीं, क्योंकि उस रूप में तुम कभी मेरे नहीं हो पाते, बल्कि मेरे प्राणों के प्राण बनकर तुम मेरे जीवन में आये थे। आखिर मैंने तुम्हें पा ही लिया था। अब तुम आजीवन मेरे थे। तुम्हारा रक्त मेरी धमनियों में आ गया था। मैं जब चाहे तुम्हें अपनी गोद में लेकर तुम पर अपना वात्सल्य उंडेल सकती थी। तुम केवल मेरे थे। इसीलिये जब मुझे मालूम हुआ कि मैं माँ बनने वाली हूँ तो मेरी प्रसन्नता का पारावार न रहा। इसीलिये मैंने यह भेद तुमसे छिपाकर रखा।

लेकिन प्रतीक्षा के इन दिनों में भी दुःखों ने मेरा साथ न छोड़ा। मेरे मन में इन्सान की क्षुद्रता के प्रति असीम घृणा थी। मुझे डर था कि कहीं लोग मेरे सौतेले पिता को खबर न कर दें। इसलिये बच्चे के पैदा होने के कुछ महीने पहले ही मैंने नौकरी छोड़ दी। मेरे स्वाभिमान ने मां से पैसे मांगने की इजाज़त न दी। अपनी चूड़ियाँ बेचकर मैं किसी तरह अपना गुज़ारा करती रही। प्रसव से एक सप्ताह पहले मेरी धोबिन ने मेरे सब पैसे चुरा लिये, इसलिये मुझे खैराती हस्पताल में भरती होना पड़ा। तुम्हारे बेटे का जन्म दरिद्रता और अभाव में हुआ था। उस हस्पताल में केवल परित्यक्ता या निर्धन स्त्रियाँ ही आती थीं—वे एक दूसरे को घृणा की दृष्टि से देखती थीं। क्लोरोफार्म और रक्त की गंध से भरे उस वार्ड में हमेशा रोने-कराहने की आवाज़ आती रहती थी। एकान्त और दरिद्रता के नाते हम सब आपस में रिश्तेदार थे। इन वार्डों में आकर मरीज़ का व्यक्तित्व बिल्कुल समाप्त हो जाता है। पलंग पर लगी तख्ती का नम्बर ही उसका एकमात्र परिचय रह जाता है। पलंग पर प्रसववेदना से तड़पती हुई स्त्री दर्शकों के लिये तमाशा होती है···

मुझे इस अप्रिय प्रसंग के लिए क्षमा करना। ग्यारह बरसों की लम्बी चुप्पी के बाद, आज मैं अपने हृदय की पीड़ा को कागज पर उंडेल रही हूँ—इसके बाद मैं फिर, सदा के लिये चुप हो रहूँगी। मुझे एक बार तुम्हें अपने इस बेटे के बारे में बताना ही था, जो मेरी आँखों का तारा था, और जो अब नहीं रहा। उसकी तोतली बातों और नन्हीं मुस्कान में मैं अपना दुःख भूल जाती थी। लेकिन उसके जाने के बाद मेरे हृदय के घाव फिर हरे हो उठे हैं। इसके लिये तुम दोषी नहीं हो। केवल ईश्वर ही इस निरुद्देश्य दुःख की सृष्टि करता है। मेरे मन में तुम्हारे लिये क्रोध नहीं उपजा, प्रसव की भयंकरतम पीड़ा में भी मैंने तुम्हें दोषी नहीं ठहराया। तुम्हारे साथ गुजारी हुई तीन रातों के लिये मुझे कभी पछतावा नहीं हुआ, मेरे जीवन में तुम्हारा आना पुनीत पर्व था। अपने दुर्भाग्य को जानते हुए भी अगर मुझे तुम्हारे लिये नर्क-यातना सहनी पड़ती, तो मैं उसे सहर्ष सह लेती।

तुम्हारा बेटा भी सदा तुम्हारे लिये अनजान रहा। उसके नन्हें व्यक्तित्व ने कभी तुम्हारे जीवन के दायरे में कदम नहीं रखा। मैंने उसके जन्म के बाद अपने को तुमसे छिपाये रखा। मैं अपने प्रेम को तुम्हारे और तुम्हारे बेटे में नहीं बाँटना चाहती थी, क्योंकि तुम स्वच्छन्द थे, तुम्हारे लिये मेरे प्रेम का कोई मूल्य नहीं था, बच्चे को मेरी ममता की जरूरत थी। मैं बच्चे को पाकर तुम्हारे वियोग को भूल गई। तुम उस नये स्वरूप में मेरे अपने थे। तुम्हारे बारे में सोचना मैंने बहुत दिनों से बंद कर दिया था, हाँ—तुम्हारे जन्मदिन पर हर साल मैं तुम्हें सफेद गुलाब के फूलों का एक गुच्छा भेजती थी, तुमने वैसा ही गुच्छा पहली बार दिया था। क्या तुम्हें इन ग्यारह वर्षों में एक बार भी यह जानने का कौतूहल नहीं हुआ कि तुम्हें फूल भेजने वाला कौन है? क्या तुम्हें याद है, कि कभी तुमने किसी लड़की को सफेद फूल भेंट किये थे? मैं नहीं जानती। लेकिन हर साल उस क्षण की स्मृति को ताज़ा बनाये रखने के लिये मैं तुम्हें फूल भेजती हूँ।

तुमने अपने बेटे को कभी नहीं देखा। इसके लिये मैं दोषी हूँ। अगर तुम उसे देखते तो जरूर उसे प्यार करते। काश ! तुमने उसकी नन्हीं-नन्हीं काली आँखें देखी होती, बिल्कुल तुम्हारे जैसी आंखें—जिन आँखों से उसने पहले-पहल मुझे और इस संसार को देखा था। वह कितना सुन्दर बच्चा था ! उसने तुम्हारी चपलता और कल्पना शक्ति पाई थी। वह खिलौनों से खेलता था। तुम जीवन से खेलते हो। वह भी तुम्हारी तरह घंटों बैठकर किताबें पढ़ता रहता था। वह तुम्हीं बच्चे के रूप में जो थे। स्वच्छन्दता और गंभीरता का अद्भुत संयोग ! इसीलिये मैं उसे चाहती थी। वह पढ़ाई में होशियार था और धाराप्रवाह फ्रेंच बोलता था। उसकी कॉपियाँ क्लास में सबसे अधिक साफ-सुथरी थीं। आह, वह कितना प्रतिभाशाली था। जब गर्मी की छुट्टियों में मैं उसे समुद्रतट पर ले गई, तो स्त्रियाँ उसे देखकर खड़ी हो जाती थीं और स्नेह से उसके सुनहरी बालों को सहलाती थीं। जब वह बर्फ पर स्केटिंग करता तो लोगों की नज़रें अनायास ही उसकी ओर उठ जातीं। वह इतना सुन्दर, विनयशील और तेजस्वी था। पिछले साल वह बोर्डिंग में भरती हुआ था और अठारहवीं शताब्दी के अर्दलियों जैसी वर्दी पहन कर पढ़ने जाता था। अब वह केवल बनियान पहिने सोया है। उसके ओंठ पीले पड़ गये हैं।

तुम्हें आश्चर्य होगा, मैं उसे इतनी शान-शौकत से कैसे रख सकी, मेरे पास उसकी पढ़ाई के लिये पैसा कहां से आया ? प्रियतम ! मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाऊँगी—मुझसे नफरत न करना। मैंने अपना शरीर बेचकर यह सब किया। मामूली वेश्या की हैसियत से नहीं। मेरे मित्र और प्रेमी धनी थे। पहले तो मुझे उनकी तलाश थी, बाद में वे मेरी तलाश में रहने लगे, क्योंकि मैं सुन्दर हूँ (क्या तुम्हें कभी इस बात का आभास हुआ था ?)। मैं जिन्हें अपना शरीर सौंपती थी, वे मुझसे प्रेम करने लगते थे, उनके प्रेम में कृतज्ञता और भक्तिभाव की झलक थी। सब पुरुष मुझे चाहते थे—सिवा तुम्हारे—जिसके सिवा मैंने किसी से प्रेम नहीं किया।

मुझे विश्वास है, तुम मेरी परिस्थितियों को समझोगे और मुझसे नफ़रत नहीं करोगे। मैंने जो कुछ किया, केवल तुम्हारे लिये किया—तुम्हारे बेटे के लिये। हस्पताल में रह कर मैंने गरीबी का जो भयंकर स्वरूप देखा था, उससे मुझे विश्वास हो गया कि दरिद्रता से बड़ा दुर्भाग्य कोई नहीं, मैंने निश्चय किया कि मैं तुम्हारे बेटे को गंदी गलियों के विषाक्त वातावरण में नहीं रहने दूंगी। उसके नाजुक ओंठ नाबदान की भाषा नहीं सीखेंगे। उसका सफेद संगमरमर जैसा बदन चीथड़े नहीं पहनेगा। तुम्हारे बेटे को संसार का ऐश्वर्य उपलब्ध होगा। तुम्हारी तरह वह भी जीवन में स्वच्छन्द होकर विहार करेगा।

इसीलिये मैंने अपने को बेचा। मेरे लिये यह कोई महान् त्याग नहीं था, क्योंकि 'आबरू' 'बेइज्जती' आदि शब्द मेरे लिये कुछ महत्व नहीं रखते थे। मेरा शरीर केवल तुम्हीं को अर्पित था—तुमने उसे स्वीकार नहीं किया, फिर उसका मेरे लिये क्या उपयोग था? मेरे प्रेमियों के गूढ़तम आलिंगन मेरी आत्मा को नहीं छू सके। उनमें से कई मुझसे सच्चा प्रेम करते थे—मुझे उनसे सहानुभूति भी थी। उन्हीं के कारण मुझे अभाव के दिन नहीं देखने पड़े। उनमें से एक बड़ा प्रतिष्ठित और प्रभावशाली व्यक्ति था। उसी के प्रयत्नों से तुम्हारा बेटा राजकुमारों के स्कूल में भरती हो सका। वह मुझे अपनी बेटी की तरह प्यार करता था। उसने तीन-चार बार मुझसे शादी का प्रस्ताव रखा। अगर मैं चाहती तो आज मैं एक काउन्टेस होती—टायरोल के विशाल किले की एकमात्र स्वामिनी। मुझे सदा के लिये आर्थिक चिन्ताओं से मुक्ति मिल जाती। लड़के को पिता का स्नेह प्राप्त होता, और मुझे प्रतिष्ठित दयालु-हृदय पति। लेकिन मैंने उसका प्रेम ठुकरा दिया। शायद यह मेरी मूर्खता हो। उससे शादी करके मैं शान्ति से अपनी ज़िन्दगी गुजारती। मेरा बेटा भी मेरे पास रहता। लेकिन मैं तुमसे क्यों छिपाऊँ? मैं अपने को बन्धन में नहीं डालना चाहती थी। मैं मुक्त रहना चाहती थी—तुम्हारे लिये। मेरे हृदय के किसी कोने में बचपन के सपने अब भी सिमटे थे। मैं सोचती

थी, शायद किसी दिन तुम मुझे अपने पास बुलाओगे, एक घंटे के लिये ही सही। इस संभावित एक घंटे के लिये मैंने सब चीजों को ठुकरा दिया, ताकि जब मुझे बुलावा आये तो मैं भागी-भागी तुम्हारे पास आ सकूं। आखिर जब से मैं स्त्री बनी, मेरा जीवन सिवा एक लंबी प्रतीक्षा के क्या रहा है ?

एक दिन प्रतीक्षा का वह क्षण भी आया, लेकिन तुम इस बार भी मुझे नहीं पहचान पाये। तुमने मुझे कभी नहीं पहचाना। कभी, कभी नहीं। मैंने तुम्हें कई बार थियेटर और कंसर्ट हॉल में देखा है। लेकिन तुमने मेरे हृदय की धड़कन कभी नहीं सुनी। मेरा बाहरी रूप इस बीच बदल गया था। अब मैं भीरु लड़की से विकास करके पूर्ण स्त्री बन गई थी। लोग कहते थे कि मैं सुन्दर हूँ। मेरे शरीर पर बढ़िया कीमती कपड़े थे। सदा मेरे साथ प्रशंसकों का दल रहता था। तुम मुझे कैसे पहचानते ? तुमने तो अपने शयनकक्ष की मद्धिम रोशनी में एक शर्मीली लड़की को देखा था ! कई बार मेरे मित्र तुमसे दुआ-सलाम करते। तुम आदरपूर्वक मेरी ओर देखते—शिष्ट अजनबी की तरह, लेकिन तुम मुझसे दूर थे—बहुत दूर। मुझे याद है, एक बार तुम्हारे इस व्यवहार से मुझे घोर मानसिक पीड़ा हुई। मैं एक मित्र के साथ बॉक्स में बैठकर ऑपेरा देख रही थी। तुम साथ वाले बॉक्स में बैठे थे। जब हॉल की रोशनी मद्धिम हुई तो मैं तुम्हारे चेहरे को न देख सकी, लेकिन तुम इतने नज़दीक बैठे थे कि मैं तुम्हारी सांस को सुन सकती थी—मुझे तुम्हारे शयनकक्ष की रात याद आ गई। तुम बॉक्स के बीच लटकते हुए मखमली पर्दे को पकड़े बैठे थे। मेरे मन में इच्छा हुई कि आगे बढ़कर तुम्हारे हाथ को चूम लूं। ऑर्केस्ट्रा के स्वरों से यह इच्छा और भी तीव्र हो गई। मेरे लिये अपनी इस इच्छा पर संयम करना असंभव हो उठा। पहले अंक के बाद मैं उठकर बाहर चली आई। उस अंधेरे में तुम्हारा इतने पास होकर भी दूर रहना मुझे सह्य न था।

लेकिन एक बार फिर वह क्षण मेरे जीवन में आया। केवल एक

बार। यह पिछले साल की ही बात है, तुम्हारे जन्म-दिन से अगले दिन की। उस दिन मैं तुम्हारे बारे में सोच रही थी, क्योंकि हर साल तुम्हारा जन्मदिन मैं धूमधाम से मनाती थी। सुबह मैं बाजार से सफेद गुलाब के फूल खरीदने गई, दोपहर को मैं अपने बच्चे को घुमाने ले गई और चाय पीने के बाद हम दोनों थियेटर देखने गये, मैं चाहती थी, वह इस दिन को अपने यौवन का सबसे शानदार दिन समझे। लेकिन वह मेरे उल्लास को न समझ सका। अगला दिन मैंने अपने एक तरुण, धनी व्यापारी प्रेमी के साथ गुज़ारा, जिसके साथ मैं पिछले दो वर्ष से रह रही थी। वह भी मुझसे प्रेम करता था और शादी करने के लिये इच्छुक था। वह मेरी निष्ठुरता का कारण न समझ सका। फिर भी उसने मुझे और मेरे बच्चे को कीमती उपहारों से लाद दिया। उसके प्रेम में मूर्खता और दासवृत्ति थी। हम एकसाथ एक कंसर्ट में गये, जहाँ हमें कई पुराने दोस्त मिल गये। हम सबने एक रेस्तरां में खाना खाया। मैंने उस दिन डान्स करने की इच्छा प्रकट की। आमतौर पर लोग शराब पीकर वहाँ हुल्लड़-बाज़ी मचाते हैं, इसलिये मैं ऐसी जगहों पर जाना पसंद नहीं करती, लेकिन इस बार कोई अज्ञात शक्ति मुझे वहां जाने के लिये प्रेरित कर रही थी, मेरे साथियों ने भी मेरे प्रस्ताव का मुक्त हृदय से समर्थन किया। मुझे लग रहा था, कि नृत्यशाला में मेरे जीवन की कोई ऐतिहासिक घटना घटने वाली है। सब मित्र सदा की तरह मेरी इच्छा को पूर्ण करने के लिये उत्सुक थे। नृत्यशाला पहुँचकर हमने शैम्पेन पी, और मेरे मन में न जाने कैसे अभूतपूर्व उल्लास आ गया। मैं एक के बाद एक गिलास पीती गई और एक सामूहिक प्रेमगीत के साथ नाचने लगी। अकस्मात् मुझे ऐसा लगा, जैसे मेरे हृदय को किसी बर्फ जैसे ठंडे हाथ ने पकड़ लिया हो। तुम अपने कुछ मित्रों के साथ पास वाली मेज़ पर बैठे प्रशंसा-भरी दृष्टि से मेरी ओर देख रहे थे। तुम्हारी यह कामनापूर्ण दृष्टि सदा से मेरे हृदय में हलचल मचाती आई थी। दस वर्ष में पहली बार तुमने इतने प्रेम से मेरी ओर देखा था। मेरे हाथ आवेश से कांपने

लगे और शैम्पेन का गिलास टूटते-टूटते बचा। सौभाग्य से मेरे साथियों का ध्यान मेरी दशा की ओर नहीं गया, क्योंकि उनकी चेतना संगीत और हँसी के फव्वारों में तैर रही थी।

तुम्हारी आग-भरी नज़र ने मेरे रोम-रोम को सुलगा दिया। पता नहीं तुमने मुझे पहचाना भी था या नहीं। मेरे गाल लाल हो गये और मैं बेसिर-पैर की बातें करने लगी। तुमने अपनी जादूभरी दृष्टि का असर देख लिया, और धीरे से सर हिलाकर मुझे पास वाले कमरे में आने का इशारा किया, और अपना बिल चुका कर बाहर चले गये। मैं सन्निपात के रोगी की तरह कांपने लगी। मैं अपनी उत्तेजना को किसी तरह रोक नहीं पा रही थी—मेरी आवाज़ लड़खड़ा रही थी। संयोगवश, इसी समय एक हब्शी जोड़े ने बर्बर नृत्य शुरू कर दिया—सब लोगों का ध्यान उधर चला गया। मैं अपने मित्र से यह कहकर कि मैं अभी आती हूँ, तुम्हारे पीछे-पीछे बाहर चली आई।

तुम लॉबी में मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मुझे देखते ही तुम्हारा चेहरा प्रसन्नता से चमक उठा। तुम्हारी मुस्कान से प्रकट था कि तुमने मुझे बिल्कुल नहीं पहचाना। तुम्हारे लिये मैं फिर एक अपरिचित स्त्री थी। तुमने विश्वस्त स्वर में पूछा, "क्या तुम मेरे साथ एक घंटे के लिये चल सकती हो ?" तुम मुझे उन स्त्रियों में से समझते थे, जिन्हें कोई भी एक रात के लिये ख़रीद सकता है। मैंने कांपते स्वर में स्वीकृति दी। ग्यारह बरस पहले भी एक सांझ के झुटपुटे में मैंने तुम्हें इसी तरह 'हां' कही थी। तुमने पूछा "किस वक्त ?" मैंने उत्तर दिया, "तुम जब चाहो" क्योंकि तुम्हारे सामने मुझे क्या शर्म होती ! तुमने संदेह और आश्चर्य-भरी दृष्टि से मेरी ओर देखा। "क्या सचमुच अभी ?" मैंने कहा, "हां अभी, आओ चलें।"

क्लोकरूम से अपना शाल उठाते हुए मुझे याद आया कि मेरे ब्रुन्सविक वाले मित्र ने अपना कोट और मेरा कोट भी वहीं दिया था और टिकट उसी के पास थी। मैं तुम्हारे साहचर्य्य के इस चिर-प्रतीक्षित क्षण को

किसी भी मूल्य पर नहीं छोड़ना चाहती थी। मैं फ़ौरन बिना कोट पहने अँधेरी कुहरेभरी रात में तुम्हारे साथ चली आई, उस स्नेही मित्र को छोड़कर, जिसके साथ मैं कई बरसों से पत्नी की तरह रहती आई थी। मैंने यह भी न सोचा कि सबके सामने लोग उसका यह कहकर अपमान करेंगे कि उसकी प्रेमिका उसे छोड़कर किसी अपरिचित व्यक्ति के इशारे पर चली गई है। मैं मन ही मन इस कृतघ्नता के लिये लज्जित हो रही थी। मैं जानती थी कि इस मूर्खता की मुझे बड़ी महँगी क़ीमत चुकानी पड़ेगी, लेकिन उस मित्र की मित्रता, और मेरे समूचे जीवन का मूल्य तुम्हारे स्पर्श के सामने तुच्छ था। अब सब कुछ समाप्त हो गया है, इसलिये मैं तुम्हें बता सकती हूँ कि मैं तुम्हें कितना चाहती थी। मेरा विश्वास है कि अगर तुम मुझे मेरी मृत्यु शैय्या से पुकारोगे, तो भी मेरे मृत शरीर में शक्ति आ जायेगी और मैं उठ खड़ी होऊंगी।

तुमने टैक्सी बुलाई और मुझे अपने घर ले गये। एक बार फिर मुझे तुम्हारी आवाज़ सुनने का, तुम्हारे समीप आने का अवसर मिला। उन चिरपरिचित सीढ़ियों पर चढ़ते समय मेरे मन की क्या दशा थी, उसे मैं यहां वर्णन नहीं कर सकूंगी। दस साल पुरानी स्मृतियाँ जाग उठी थीं, और मेरा रोम-रोम तुम्हारी कामना कर रहा था। तुम्हारे घर में सब चीज़ें बिल्कुल उसी तरह थीं, जैसे दस वर्ष पहले थीं। केवल चित्रों और पुस्तकों की संख्या बढ़ गई थी, लेकिन तुम्हारे कमरे ने पुराने दोस्त की भांति मेरा स्वागत किया। तुम्हारी लिखने की मेज़ पर गुलाब सजे थे—मेरे गुलाब जो मैंने तुम्हारे जन्म-दिन पर भेजे थे—तुमने फूल भेजने वाली अज्ञात स्त्री को उस दिन भी नहीं पहचाना, जब उसका हाथ तुम्हारे हाथों में था और तुम्हारे ओंठ उसके ओंठों को चूम रहे थे। लेकिन मुझे अपने भेजे हुए फूलों को तुम्हारी मेज़ पर देखकर बड़ा संतोष हुआ—क्योंकि तुमने कम से कम मेरी अर्चना को ठुकराया नहीं था।

मैंने वह रात फिर तुम्हारे साथ बिताई। उस दिन भी तुमने मुझे

नहीं पहचाना। मैं समझ गई कि तुम्हारा प्रेम प्रेमिका और वेश्या में कोई भेद नहीं रखता। नृत्यशाला में एक अपरिचिता स्त्री को देखकर भी तुम्हारे मन में प्रेम का संचार हो सका था। तुमने मेरे प्रति स्नेह और आत्मीयता बरती। मुझे फिर तुम्हारे भीतर छिपे दो व्यक्तियों का ध्यान आ गया। बौद्धिक और शारीरिक वासना का अद्‌भुत सम्मिश्रण। इसी से तो मैं बचपन से तुम्हारी दासी बन गई थी। मैंने किसी भी पुरुष को क्षण के प्रति इस तीव्रता से समर्पित होते नहीं देखा। किसी ने समर्पण का क्षण बीत जाने पर इतनी अमानवीय विस्मृति का परिचय नहीं दिया। लेकिन मैं भूल जाती हूँ कि मैं तुम्हारी कौन हूँ। क्या उस रात मैं अतीत काल की सम्मोहित बालिका थी, या तुम्हारे बेटे की मां थी, या तुम्हारी शैय्या की क्षण भर की साथिन थी? उस रात मैं ये तीनों थी। मैंने ईश्वर से मन ही मन प्रार्थना की कि यह सुख चिरस्थायी हो।

लेकिन सुबह हुई। हम सो कर देर से उठे। तुमने आग्रह किया कि मैं नाश्ता करके ही जाऊँ। कोई चुपचाप आकर खाने के कमरे में चाय रख गया। हम बातें करने लगे। तुमने पहले की तरह हार्दिक स्नेह और आत्मीयता दिखाई, मेरे व्यक्तिगत जीवन के बारे में कोई बेहूदा सवाल नहीं पूछा—यहाँ तक कि मेरा नाम और पता जानने की भी ज़रूरत नहीं समझी, क्योंकि मैं तुम्हारे लिये एक गुमनाम प्रेमिका थी—जो कामना की एक घड़ी समाप्त होने के बाद ही चली जाती है, और पीछे अपना कोई परिचय नहीं छोड़ जाती। तुमने बताया कि तुम दो या तीन महीने के लिये उत्तरी अफ्रीका जा रहे हो। इस समाचार ने मेरे सुख को झिंझोड़ डाला, मैं समझ गई कि अब तुम मुझसे कोई सरोकार नहीं रखना चाहते। मेरे जी में आया कि तुम्हारे क़दमों पर गिर के कहूँ, "मुझे भी अपने साथ ले चलो। मैं तुम्हारी हूँ।" लेकिन मैं भीरु और कमजोर थी। मेरे मुँह से केवल इतना ही निकला "काश

तुम यहीं रहते !" तुमने मुस्करा कर पूछा, "क्या सच तुम्हें मेरे जाने से दुःख होगा !"

क्षण भर के लिए मुझे लगा कि मैं पागल हो जाऊँगी। मैंने उठकर संयत स्वर में उत्तर दिया, "मैं जिसे चाहती हूँ वह सदा यात्रा पर चला जाता है।" यह कहकर मैंने तुम्हारी आँखों में आँखें डालकर देखा और सोचा कि तुम मुझे जरूर पहचान लोगे। तुमने मुस्कराकर सान्त्वना दी, "लोग यात्रा से लौट भी तो आते हैं।" मैंने उत्तर दिया, "हाँ ! लौट आते हैं, लेकिन पहली बातें भूल जाते हैं।"

मेरे स्वर में अवश्य करुणा रही होगी, क्योंकि तुम्हारे हृदय में सहानुभूति उमड़ आई थी। तुमने स्नेह से मेरे कंधे थपथपाये और कहा, "सुख के क्षण सदा याद रहते हैं। तुम्हें याद रखूँगा।" तुम्हारी आँखें मेरा चित्र अंकित कर रही थीं। मैं सोच रही थी कि तुम्हारी दृष्टि मेरे शरीर को भेदने के साथ मेरे हृदय को भी भेदेगी जिससे तुम्हारा अन्धापन दूर हो जायेगा और तुम मुझे पहचान लोगे। उत्तेजना से मेरी आत्मा कांप उठी।

लेकिन मेरा विश्वास फिर ग़लत निकला। तुमने मुझे नहीं, नहीं पहचाना। मैं तुमसे इतनी दूर हूँ इस बात का आभास मुझे उसी दिन हुआ। तुमने जाने से पहले प्रेमावेश में आकर फिर मुझे चूमा, जिस से मेरे बाल अस्त-व्यस्त हो गये। मैं कंघी करने शीशे के सामने खड़ी हुई। मेरा मन यह देखकर ग्लानि से भर गया कि तुम छिपकर मेरी जेब में दो नोट डाल रहे थे। मैंने बड़ी मुश्किल से अपने भीतर उमड़ते हुए आंसुओं को रोका। जी में आया, तुम्हारे गालों पर दो-चार थप्पड़ जड़ दूँ। तुम मुझे, अपनी आर्द्र-प्रेयसी को, अपने बेटे की मां को अपने साथ एक रात गुजारने के लिये पैसे दे रहे थे ? तुम्हारी दृष्टि में मैं वेश्या थी ? मुझे भूल जाने के बाद तुमने मुझे वेश्या समझकर मेरा कितना बड़ा अपमान किया, इसे केवल मैं ही समझती हूँ।

मैंने जल्दी से अपने बाल ठीक किये। मेरे हृदय में भयंकर बेचैनी हो

रही थी। मैं अपना हैट लेने के लिए तुम्हारे कमरे में गई। तुम्हारी लिखने की मेज़ पर फूलदान में सफेद गुलाब लगे थे। मेरे गुलाब। मैंने अन्तिम बार फिर तुम्हारी स्मृति को झकझोरने की कोशिश की। "क्या मैं उनमें से एक फूल ले सकती हूँ" "ज़रूर ज़रूर !" कहकर तुमने सारा गुलदस्ता उठाकर मेरे हाथों में पकड़ा दिया। मैंने पूछा, "शायद ये फूल आपको किसी स्त्री ने भेंट किये हैं—जो आपसे प्रेम करती है।" तुमने उत्तर दिया, "शायद, मुझे जन्मदिन पर भेंट मिले हैं, लेकिन मैं भेजने वाले को नहीं जानता, इसलिये मुझे ये प्रिय हैं।" मैंने तुम्हारी ओर देखते हुए कहा, "शायद तुम उस औरत को भूल गये हो।"

तुम यह सुनकर चकित हो गये। मैंने फिर तुम्हारी ओर देखा। "मुझे अन्तिम बार तो पहचान लो," मेरी आंखें तुमसे कह रही थीं। लेकिन तुम्हारी मुस्कान से साफ़ जाहिर था कि तुमने मुझे नहीं पहचाना। तुमने मुझे फिर एक बार चूमा, लेकिन तुमने मुझे पहचाना नहीं।

मैं उसी क्षण चली आई, क्योंकि मेरी आँखें आंसुओं से डबडबा गई थीं। मैं तुम्हें अपने आंसू नहीं दिखाना चाहती थी। सीढ़ियों में तुम्हारे नौकर जॉन से मेरी टक्कर होते-होते बची। उसने शिष्टतापूर्वक दरवाज़ा खोला। मैंने आंसू भरी आंखों से उसकी ओर देखा। सच मानो उस वृद्ध के चेहरे पर एक अद्‌भुत प्रकाश था। उसने मुझे पहचान लिया था। उस व्यक्ति ने, जिसने मुझे केवल बचपन में देखा था। मेरे मन में कृतज्ञभाव जागृत हुआ। मैं उसके आगे घुटने टेककर उसके हाथ चूमना चाहती थी, लेकिन मैंने जेब में से तुम्हारे रखे दोनों नोट निकालकर जबरदस्ती उसे थमा दिये। वह अप्रतिभ होकर मेरी ओर देखने लगा। उस क्षण में वह मुझे समझ गया—तुम जीवनभर मुझे नहीं समझ सके। जीवन में मैं सब लोगों की लाडली रही हूँ। केवल तुम ही मुझे भूल गये। केवल तुम ने ही मुझे कभी नहीं पहचाना।

मेरा बेटा—हमारा बेटा अब नहीं रहा। अब तुम्हारे सिवा संसार

में दूसरा कोई नहीं बचा, जिसे मैं प्रेम करूँ। लेकिन तुम मेरे क्या हो, जिसने मुझे कभी नहीं पहचाना। तुम मुझे एक नदी समझकर कितनी बार पार कर चुके हो, पत्थर समझकर कुचल चुके हो। क्या मैं अनादि-काल तक तुम्हारी प्रतीक्षा करती रहूँगी ? कभी मैंने तुम्हें अपना बनाने का स्वप्न देखा था। मैंने तुम्हारे बच्चे को पा लिया था। लेकिन वह भी आखिर तुम्हारा ही बेटा था न ! रात के अन्धेरे में वह मुझे अकेली छोड़ कर यात्रा को चल दिया। वह भी मुझे भूल गया है। वह अब कभी नहीं लौटेगा। सदा की तरह मैं आज फिर अकेली रह गई हूँ। जीवन में मैं तुम से कुछ नहीं पा सकी। प्रेम का एक शब्द, एक पंक्ति तक नहीं, यहां तक कि तुम्हारी स्मृति का एक कोना भी नहीं। अगर कोई तुम्हारे सामने मेरा नाम लेगा तो तुम समझोगे कोई किसी अपरिचित स्त्री का नाम ले रहा है। ऐसी दशा में क्या मेरा मरना अनुचित होगा ? वैसे भी मैं तुम्हारे लिए अपरिचित ही रही हूँ। तुमने मुझे छोड़ दिया, फिर मैं भी क्यों न चली जाऊँ ?

प्रियतम, मैं तुम्हें दोष नहीं दूंगी। तुम्हारे सुखी जीवन में मैं अपने दुःखों की परछांई नहीं आने दूंगी। निश्चिन्त रहो, मैं इसके बाद कभी तुम्हें तकलीफ न दूंगी। लेकिन एक बार तो मुझे इजाज़त दो कि मैं तुम्हारे सामने अपना हृदय खोल सकूँ। खासकर इस निष्ठुर क्षण में। इसके बाद मैं फिर विस्मृति के पर्दे के पीछे चली जाऊँगी—सदा की तरह। जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, तुम मेरा रोदन नहीं सुन पाओगे। मेरी मृत्यु के बाद ही मेरी यह विरासत तुम तक पहुँचेगी—उस अभागी स्त्री का एकमात्र और अन्तिम पत्र, जो जीवनभर प्रतीक्षा करती रही कि तुम उसे बुलाओगे, लेकिन तुमने उसे नहीं बुलाया। शायद यह पत्र पढ़ने के बाद तुम मुझे पुकारो, मैं शायद पहली बार तुमसे बेवफाई करूँगी —मैं चिर निद्रा में तुम्हारी आवाज़ नहीं सुन पाऊँगी। मैं अपनी कोई तस्वीर या निशानी नहीं छोड़ रही, क्योंकि तुमने मेरे लिये कुछ नहीं छोड़ा। सदा की तरह अब भी तुम मुझे नहीं पहचान सकोगे। मेरे भाग्य

में यही बदा है। जीवन के अन्तिम क्षणों में मैं तुम्हें अपने सिरहाने नहीं बुलाऊँगी। तुम मेरा नाम और सूरत कभी नहीं जान सकोगे। तुम्हारे पास न रहने से मुझे मरने में आसानी होगी, क्योंकि मेरी मृत्यु से अगर तुम्हें दुःख पहुँचता तो मैं कभी मरने का साहस न कर पाती।

मैं और अधिक नहीं लिख सकती। मेरा सर भारी हो गया है। बुखार से मेरे शरीर में दर्द हो रहा है। मैं जाकर बिस्तर पर लेटूंगी। शायद जल्द ही मेरी जीवन-लीला समाप्त हो जायेगी। एक बार तो ईश्वर को मुझ पर दया आयेगी। मैं अपने बच्चे को लकड़ी के ताबूत में अनजान लोगों के साथ जाता नहीं देख सकूँगी।.....मैं और अधिक नहीं लिख सकती। अलविदा, प्रियतम! मैं तुम्हारी चिरकृतज्ञ हूँ। जो हुआ अच्छा हुआ। मुझे खुशी है, मैंने तुम्हें सारी कहानी सुना दी। अब तुम जान जाओगे—लेकिन मेरा प्रेम तुम्हारे लिये बोझ नहीं बनेगा। मैं यही सान्त्वना लेकर संसार से जा रही हूँ। तुम्हारे सुखमय जीवन में कोई बाधा नहीं पहुँचेगी। मुझे संतोष है कि मेरी मृत्यु से तुम्हें कोई नुक़सान नहीं पहुँचेगा।

लेकिन तुम्हारे जन्मदिन पर तुम्हें कौन सफेद गुलाब के फूल भेजेगा? तुम्हारा फूलदान क्या खाली पड़ा रहेगा? मेरे जीवन की जो सुगंध साल में एक बार तुम्हारे घर में महकती थी, अब वह कैसे तुम तक पहुँचेगी? मेरी एक प्रार्थना मानोगे? यह मेरी पहली और अन्तिम प्रार्थना है। अपने जन्मदिन पर हमेशा सफेद गुलाब के फूल खरीदकर अपने फूलदान में लगा लिया करना। इससे मेरी आत्मा को शान्ति मिलेगी। लोग साल में एक बार अपने मृत प्रियजनों की आत्मा को शान्ति प्रदान करने के लिये गिरजे में प्रार्थना करवाते हैं, मुझे ईश्वर में विश्वास नहीं रहा, मैं केवल तुम्हें चाहती हूँ। मैं केवल तुम्हारे भीतर जीवित रहना चाहती हूँ। साल में केवल एक दिन—चुपके से तुम्हारे पास आना चाहती हूँ। मेरे प्यारे यह जरूर करना—जरूर.....मेरी पहली और अन्तिम

इच्छा.....धन्यवाद, धन्यवाद.....मैं तुमसे प्रेम करती हूँ—अल-विदा.....।"

उपन्यासकार 'र' के हाथों से ख़त गिर गया। वह बड़ी देर तक गहरी सोच में बैठा रहा। हां, उसे पड़ौस में रहने वाली एक बच्ची की, एक युवती की, नृत्यशाला में देखी एक स्त्री की धुंधली-सी याद थी। नदी की तेज धारा के तल में पड़े हुए पत्थर की झलक जैसी स्मृति, जिसकी आकृति उसे ठीक से याद नहीं थी। उसकी स्मृति में बहुत-सी परछाइयां एक-दूसरे के पीछे भागती नजर आईं—लेकिन उस अपरिचिता का चित्र न सामने आया। भावना-लोक में कुछ स्मृतियां जागृत हुईं, लेकिन उसे कुछ याद न आ सका। उसे लगा कि वह उन आकृतियों को सपने में देखता रहा है। उसने लिखने की मेज पर रखे फूलदान की ओर देखा। फूलदान खाली था। कई वर्षों से उसके जन्म दिन पर फूलदान में गुलाब के फूल सजे रहते थे। वह कांप उठा। उसे लगा उसके कमरे का अज्ञात दरवाज़ा खुल गया है, जिसमें से होकर दूसरे लोक की ठंडी हवा भीतर आ रही है। उसे मौत का ख्याल आया—और वह प्रेम की अमरता के बारे में सोचने लगा। उसके हृदय में टीस-सी उठी, और उस अपरिचिता स्त्री के विचार, दूर से सुनाई देने वाले संगीत के स्वरों की तरह उसके मन में हलचल मचाने लगे।

अदृश्य संग्रह

(जर्मनी के आर्थिक मंदी के दिनों की एक घटना)

ड्रैसडन के बाद ट्रेन जब एक जंक्शन पर पहुँची तो एक अधेड़ सज्जन हमारे डिब्बे में सवार हुये। उन्होंने सब मुसाफ़िरों की तरफ सौहार्द्रपूर्वक मुस्कराकर देखा। मुझ पर उनकी विशेष कृपा-दृष्टि पड़ी, जैसे वे मेरे पुराने मित्र हों। मुझे संकोच में पड़ा देखकर उन्होंने अपना परिचय दिया। सचमुच वे मेरे पुराने परिचित निकले। वे बर्लिन के एक प्रसिद्ध कला-पारखी और कला-चित्रों के व्यापारी थे। युद्ध से पहले मैंने उनसे अनेक अलभ्य हस्तलिपियां और पुस्तकें खरीदीं थीं। वे मेरे सामने वाली खाली सीट पर आकर बैठ गये और इधर-उधर की बातें शुरू हो गईं। बातचीत के दौरान में उन्होंने बताया कि वे व्यापार के सिलसिले में कहीं गये थे और उन्हें एक ऐसा अनुभव हुआ जो उनके सैंतीस वर्ष के व्यापारिक जीवन में अभूतपूर्व था। इतना परिचय ही काफ़ी है। अब आप उन्हीं से यह कहानी सुनिये, मैं उद्धरण चिह्नों के प्रयोग से कहानी में पेचीदगी नहीं पैदा करना चाहता।

आप जानते हैं (उन्होंने कहा) कि मन्दी के बाद हमारे कारोबार में क्या हो रहा है। मुनाफ़ाखोरों को भी प्राचीन कलाकृतियों के संग्रह का शौक चर्राया है और वे प्राचीन चित्रों के पीछे दीवाने हो रहे हैं। उनके लालच को सन्तुष्ट करना कठिन काम है, विशेषकर मेरे जैसे व्यक्ति

के लिये, जो सर्वोत्तम कलाकृतियां अपने लिये सुरक्षित रखना चाहता है। अगर उनका बस चले तो वे मेरी कमीज़ के बटन और पढ़ने का लैम्प तक लूट लें। उनके खरीदने के लिये रोज़ इतना सामान कहां से आये ? मैं जानता हूँ कि कलाकृतियों के लिए 'सामान' शब्द आपको खटक रहा है, लेकिन क्षमा करें, खरीददारों के सम्पर्क से मैं ऐसे शब्द सीख गया हूँ। बुरी संगत का बुरा फल·····पुरानी अलभ्य पुस्तकों का मेरे लिये वही महत्त्व है, जो कपड़ों के शौकीन के लिये एक क़ीमती ओवरकोट का महत्त्व होता है, या किसी मूर्ख लखपति के लिये गुरसीनों के स्केच का महत्त्व होता है, जो कलाकृति में अपने खर्च किये गये पैसों की आत्मा देखता है।

इन पैसा फूंकने वालों के लालच का मुक़ाबिला करना कठिन है। हाल ही में मैंने पाया कि मेरे पास केवल इनी-गिनी कलाकृतियां ही बच रही हैं। संभव है, मुझे अपना कारोबार बन्द करना पड़े। मेरे बाप-दादा के ज़माने में कारोबार खूब चला हुआ था, लेकिन तब दुकान में कूड़ा भरा था, जिसे सन् १९१४ से पहले कोई फेरीवाला भी बेचने को राज़ी न होता।

इस परेशानी में एक दिन मैं अपने पुराने ख़रीदारों की सूची देख रहा था। मुझे ख्याल आया, शायद मन्दी के कारण वे उन कलाकृतियों को बेचने के लिये तैयार हो जायें, जो उन्होंने सम्पन्नता के दिनों में मुझ से खरीदी थीं। ऐसी सूचियां, लाशों से पटे युद्ध-क्षेत्र की तरह होती हैं। मुझे मालूम था कि उनमें से अधिकाँश लोग या तो मर चुके होंगे या मन्दी के कारण अपने कला-संग्रह कभी के बेच चुके होंगे। मेरे पास एक व्यक्ति के पत्रों का पुलिन्दा पड़ा था, लेकिन मैं उसे भूल चुका था, क्योंकि १९१४ के विस्फोट के बाद उसने मुझ से कुछ नहीं खरीदा था। अब तो वह बहुत बूढ़ा होगा। उसके पत्र आधी शताब्दी पहले लिखे गये थे, जब मेरे दादा कारोबार चलाते थे। पिछले सैंतीस बरसों में वह कभी मेरे सम्पर्क में नहीं आया था।

उसके खतों से स्पष्ट था कि वह उन सनकी संग्रहवादियों में से था, जो यत्र-तत्र आज भी जर्मनी के छोटे शहरों में मिल जाते हैं। उसकी लिखावट टेढ़ी-मेढ़ी थी, और उसके हर आर्डर के नीचे लाल स्याही से लकीरें पड़ी थीं। हर क़ीमत को आंकड़ों और शब्दों में लिखा गया था ताकि धोखा न हो सके। ये पत्र पुरानी कापियों को फाड़कर लिखे गये थे। लिफ़ाफ़ों के रंग अलग-अलग थे, जिनसे पता चलता था कि वह किसी जंगली इलाके का रहने वाला है। उसके नाम के नीचे हर बार लिखा रहता था, "फारेस्ट रेंजर और इकोनोमिक्स एडवाइज़र, रिटायर्ड; प्रथम श्रेणी के लौह क्रास का विजेता।" वह १८७०-७१ के युद्ध में सम्मानित किया गया था, इसलिये अब वह अस्सी बरस के क़रीब ज़रूर होगा।

लेकिन अपनी सारी विलक्षणता के बावजूद उसने छपाई और नक्काशी के संग्रह में बड़ी बुद्धिमता और सुरुचि का परिचय दिया था। उसके आर्डरों को ग़ौर से पढ़ने से पता चलता था कि उस ज़माने में जब लोग नक्काशी के काम के लिये मुँहमांगे दाम देने के लिये तैयार थे, यह फूहड़ देहाती हमारी दुकान का अलभ्य संग्रह सस्ते में लूट ले गया था। आज उस संग्रह की क़ीमत लाखों तक जा सकती है। मैंने सोचा, हो न हो इस आदमी ने और बहुत-से संग्रह भी जमा किये होंगे। क्या ये चीज़ें अब भी उसके पास सुरक्षित होंगी! अगर उस आदमी ने यह संग्रह बेचा होता तो मेरे कानों तक इसकी ख़बर ज़रूर पहुँचती। अगर वह मर गया होगा, तो यह कलाकृतियाँ उसके उत्तराधिकारियों के पास सुरक्षित होंगी।

मैं कल शाम को ही सैक्सनी के उस दूरदराज़ क़स्बे में गया था। रेलवे स्टेशन से बाहर निकलकर जब मैं क़स्बे की सड़क पर पहुँचा तो मुझे विश्वास हो गया कि इन टूटे-फूटे घरों में विश्वविख्यात कलाकृतियों को पाना असम्भव है। खैर, मैंने डाकखाने में जाकर पूछताछ की, और मुझे मालूम हुआ कि उस नाम का व्यक्ति अब भी ज़िन्दा है। उसके

घर के नज़दीक पहुँचकर मेरा दिल ज़ोर से धड़कने लगा । यह आज दोपहर की बात है।

पिछली शताब्दी में सट्टे के मुनाफ़ाखोरों ने धड़ाधड़ सस्ते मकान तैयार करके किराये पर चढ़ा दिये थे। वह व्यक्ति भी ऐसे ही एक मकान की दूसरी मंज़िल पर रहता था। निचले हिस्से में एक टेलर मास्टर की दुकान थी। मैंने उसके नाम की तख्ती के पास जाकर घन्टी बजाई । एक सफेद बालों वाली बुढ़िया ने आकर दरवाज़ा खोला। मैंने उसे अपना कार्ड देकर गृहस्वामी के बारे में पूछा। औरत संदिग्ध नज़रों से मेरे चेहरे की ओर देखने लगी। उस अभागे कस्बे में राजधानी के किसी व्यक्ति का आना एक सनसनी-खेज़ घटना थी । उस औरत ने आदरपूर्वक मुझे प्रतीक्षा करने के लिये कहा और भीतर ग़ायब हो गई। भीतर से एक ऊँची आवाज़ सुनाई दी, "हेर रेकनर, बर्लिन के मशहूर कला व्यापारी ? मैं उनसे ज़रूर मिलूंगा।" वह औरत फिर आई और मुझे अपने साथ भीतर लिवा ले गई।

घर का सामान और पर्दे सस्ते थे। फौजी कपड़े पहने एक वृद्ध ने मेरे स्वागत के लिये हाथ बढ़ाये। मुझे हाथ मिलाने के लिये उसके नज़दीक जाना पड़ा—उसके इस विचित्र व्यवहार से मुझे कम हैरानी नहीं हुई, लेकिन अगले ही क्षण मुझे सब पता चल गया—वह व्यक्ति अंधा था।

बचपन से ही अंधे व्यक्तियों की उपस्थिति में मुझे घबराहट अनुभव होती है। एक स्वस्थ जीवित व्यक्ति को इस तरह असहाय देखकर मेरा मन आत्मग्लानि से भर उठता है। मुझे लगता है, जैसे मैं उसकी असहायता का फायदा उठा रहा हूँ। उस व्यक्ति की ज्योतिहीन पुतलियों को देखकर मुझे घबराहट हुई, लेकिन उसने हँसकर कहा :

"आज का दिन ऐतिहासिक दिन है। बर्लिन का एक बड़ा आदमी इस कस्बे में बिना खबर दिये आ पहुँचे, इससे बड़ा चमत्कार कौन-सा हो सकता है ? फिर आप जैसे कला-व्यवसायी से तो हम देहाती हमेशा

सावधान रहते हैं। हमारे यहाँ एक कहावत है, 'बनजारों को देखते ही अपनी जेबों के बटन और घर के दरवाजे बंद कर लो!' मैं जान गया हूँ, आप किस लिये आये हैं, मैंने सुना है आजकल व्यापार में बड़ी मंदी है, ख़रीदार बड़ी मुश्किल से मिलते हैं, इसलिये कला-व्यवसायी अपने पुराने खरीदारों की तलाश में घूम रहे हैं। लेकिन आपको यहाँ आकर निराशा होगी। हम पेन्शन पाने वालों को अगर सूखी रोटी भी मिल जाये तो बहुत है। एक ज़माने में मुझे भी संग्रह का शौक था, लेकिन अब वे दिन बीत गये।"

मैंने उसे बताना चाहा कि उसे गलतफ़हमी हो गई है। मैं पड़ोस के एक कस्बे में आया था, इसलिये अपने पुराने और प्रतिष्ठित ख़रीदार से मिलने का लोभ संवरण न कर सका था, जो किसी जमाने में जर्मनी भर में सबसे बड़ा संग्रहकर्त्ता था। यह सुनते ही, बूढ़े के चेहरे में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया। एक अज्ञात गर्व से उसका चेहरा आलोकित हो उठा और उसने अपनी पत्नी की ओर मुड़कर कहा, "सुना तुमने!" उसकी आवाज़ में अपूर्व कोमलता आ गयी थी। उसका फौजी अक्खड़पन न जाने कहां ग़ायब हो गया था :

"आपकी बड़ी कृपा है कि आपने सिर्फ मुझ जैसे हीनव्यक्ति से मिलने के लिये इतना कष्ट उठाया। आपको दिखाने के लिये अब भी मेरे पास कुछ ऐसी कलाकृतियाँ हैं, जो आपको बर्लिन, वियना, यहाँ तक कि पैरिस के अजायबघरों में भी नहीं मिलेंगी (खुदा की गाज गिरे पैरिस पर!)। जो आदमी पचास बरसों से कलाकृतियों का संग्रह करता आया हो, उसके मुकाबिले की चीज़ें कहीं नहीं मिल सकतीं। एलिज़ाबेथ, मेरी अलमारी की चाबी लाओ!"

इसी समय एक विचित्र बात हुई। उसकी पत्नी जो अभी तक मुस्करा रही थी, सहसा भय से चौंक उठी। उसने अपने दोनों हाथ उठाकर मुझसे किसी बात की याचना की। मैं इस सांकेतिक भाषा को न समझ सका। उसने पति के कंधे थपथपाकर कहा :

"फ्रांज प्यारे, तुमने हमारे अतिथि से यह तो पूछा ही नहीं, कि उनके पास समय भी है या नहीं," फिर वह मेरी ओर मुड़कर बोली, "मुझे अफ़सोस है कि हमारे घर में आपके लिये पर्याप्त भोजन नहीं है। आप तो निश्चय ही किसी होटल में खाना खायेंगे न ! खाने के बाद आप काफी यहीं पीजियेगा, तबतक हमारी बेटी एना मेरिया भी आ जायेगी। उसको कलाकृतियों के बारे में मुझसे कहीं अधिक पता है।

एक बार फिर उसने याचनापूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा। वह नहीं चाहती थी कि मैं उसी समय कला-संग्रह देखने बैठ जाऊँ। मैंने कहा कि गोल्डन स्टैग होटल में मुझे किसी मित्र ने खाने का निमन्त्रण दिया है। तीन बजे के करीब मैं लौट आऊँगा।

गृहस्वामी ने इस तरह मुंह बनाया, जैसे किसी बच्चे से उसका प्रिय खिलौना छीन लिया गया हो।

"क्यों नहीं, मैं जानता हूँ, आप बर्लिन के पन्डों के पास समय कहाँ रहता है। लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप मेरा कला-संग्रह अवश्य देखें, मेरे पास अमूल्य कृतियों की सत्ताईस पेटियाँ हैं। अगर आप ठीक तीन बजे लौट आयें, तो छः बजे तक वापिस लौट सकते हैं।"

उसकी पत्नी मुझे छोड़ने के लिये दरवाजे तक आई। उसने मेरे पास आकर धीमे स्वर में कहा—

"तीन बजे से पहले मैं एना मेरिया को आपके होटल में भेजूंगी। इसके कई कारण हैं, जो इस समय मैं आपको नहीं बता सकूंगी।"

"ज़रूर-ज़रूर—आपकी बेटी से मिलकर मुझे बड़ी खुशी होगी।"

एक घन्टे बाद मैं खाना खाकर होटल के ड्राइंगरूम में आकर बैठा ही था कि एना मेरिया क्रोनफेल्ड आ पहुँची। वह अधेड़ उम्र की लड़की थी, और सादे कपड़े पहने हुए थी। मुझे देखकर वह घबरा सी गई। मैंने उससे कहा कि अगर उसके पिता ने मुझे फौरन बुला भेजा है तो मैं फौरन उसके साथ चल पड़ूंगा। यह सुनते ही उसका चेहरा लाल हो उठा और उसने लड़खड़ाती जबान में मुझसे कुछ कहने की इच्छा प्रकट की।

"मेहरबानी करके बैठ जाइये।" मैंने एक कुर्सी बढ़ाते हुए कहा।

उसके ओंठ और हाथ काँप रहे थे। उसने अपनी बात शुरू की।

"माँ ने मुझे आपके पास भेजा है। हमारी एक प्रार्थना है। जब आप हमारे घर आयेंगे तो पिताजी आपको अपना संग्रह दिखाने के लिये व्याकुल हो उठेंगे। संग्रह.....संग्रह.....सच पूछिये तो अब उस संग्रह में बहुत थोड़ी चीजें बच रही हैं।"

फिर उसने करुण स्वर में कहा, "मैं आपसे कुछ नहीं छिपाऊँगी.....आप जानते हैं, आजकल हम लोगों को किन-किन मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है। युद्ध के बाद ही मेरे पिता की आँखें जाती रहीं थीं, शायद उत्तेजना के कारण ही यह हुआ था। सत्तर बरस के बूढ़े होते हुए भी वे फिर लड़ाई में हिस्सा लेने की ज़िद कर रहे थे। लेकिन इस उम्र में उन्हें कौन फौज में लेता? फिर जब हमारी फौजों को आगे बढ़ने से रोक दिया गया तो पिताजी के दिल को बड़ा सदमा पहुँचा। डाक्टर का कहना है कि इसी से उनकी दृष्टि कमजोर होती गई। वैसे उनकी सेहत अब भी अच्छी है, जैसा आपने स्वयं देख ही लिया होगा। सन् १९१४ तक वे लम्बी सैर करने और शिकार खेलने जाते थे। आँखों के जाने के बाद उन्हें अब अपने कला-संग्रह में ही रुचि रह गई है। वे दिन में एक बार उसे जरूर देखते हैं। लेकिन बिना आँखों के भला कोई कैसे देख सकता है? रोज दोपहर को वे सारी जिल्दें अपनी मेज़ पर मँगवाते हैं और सब चित्रों पर बारी-बारी से उंगलियाँ फेरते हैं। उनके जीवन का एकमात्र आनन्द ये चित्र हैं। वे मुझसे नीलामियों की खबरें पढ़वाकर सुनते हैं—कलाकृतियों का दाम जितना ऊँचा लगाया जाता है, उतना ही पिता जी का उत्साह भी बढ़ता जाता है।

"पिता जी को मन्दी का कुछ पता नहीं। उन्हें यह भी नहीं पता कि हम तबाह हो चुके हैं, और उनकी पेन्शन से तो एक दिन की खुराक भी नहीं खरीदी जा सकती। इसके अलावा हमें अपनी बहन के बच्चों की परवरिश भी करनी पडती है। हमारे बहनोई वरदँ के युद्ध में मारे

गये थे। पिता जी से हमने कभी ये बातें नहीं बताईं। हम बड़ी किफ़ायत से रहते हैं, फिर भी गुजारा नहीं चलता। हमने मजबूर होकर अपने गहने बेचने शुरू कर दिये, ताकि पिता जी के संग्रह को आंच न आये। पिता जी ने अपनी सारी आमदनी काष्ठ-कृतियों और ताम्रपत्रों पर खर्च कर डाली थी। संग्रहकर्त्ता की सनक! आखिर एक दिन ऐसा भी आया, जब हमारे सामने दो ही रास्ते रह गये—या तो पिता जी को भूखों मरते देखा जाये, या उनके संग्रह को बेचकर आर्थिक संकट से छुटकारा पाया जाये। हमने पिता जी से इजाज़त मांगना उचित नहीं समझा। उससे क्या लाभ होता? उन्हें क्या पता कि आजकल खाने की चीज़ें कितनी मुश्किल से मिलती हैं? उन्हें तो यह भी नहीं पता कि लड़ाई में जर्मनी की हार हुई थी और उसे अल्सेस-लोरेन के प्रदेश फ्रांस को लौटा देने पड़े थे। हम उन्हें अखबारों में से राजनैतिक समाचार कभी नहीं सुनाते।

सबसे पहले हमने रैम्ब्रां की एक कृति बेची, जिससे हमें कई हज़ार मार्क वसूल हुए। हमारा ख्याल था कि हम बरसों तक उसी से गुज़ारा चला लेंगे, लेकिन आप जानते हैं कि १९२२—१९२३ में मार्क की क़ीमत कितनी रह गई थी। दो महीने के भीतर सारी रक़म ख़र्च हो गयी और हमें मजबूर होकर एक के बाद एक कलाकृतियां बेचनी पड़ीं। वह मन्दी का भयानकतम दौर था। कला-व्यापारी जान-बूझकर सौदा करने में देर कर देते थे, जिससे कुछ ही दिनों में क़ीमत और भी कम हो जाती थी। हमने नीलाम घरों का आश्रय भी लिया, लेकिन हमें धोखा ही हुआ। हालाकि हमें एक कृति के दस लाख मार्क मिले थे। लेकिन दस लाख मार्क मिट्टी के बराबर थे। इस तरह सारा संग्रह दो समय की रोटी जुटाने में ही बर्बाद हो गया—दोनों समय खाना भी हमें कहां नसीब हुआ?

"इसीलिये आपको देखकर मां इतनी घबरा गई थीं। सन्दूकचियां खोलते ही हमारा धोखा प्रकट हो जायेगा। पिता जी हर चित्र को छू

कर बता सकते हैं। हमने तस्वीरें बेचकर कोरी कैनवस को उन्हीं फ्रेमों में मढ़वा दिया था, इसलिये उन्हें सच्चाई का कुछ पता न चल सका। उन्हें तो छूने और गिनने से ही सन्तोष मिल जाता है। आजतक उन्होंने किसी कुपात्र को अपना संग्रह नहीं दिखाया। उन्हें कला से इतना प्रेम है कि अगर उन्हें मालूम हो गया कि उनका संग्रह बिक चुका है तो उनका दिल टूट जायेगा। बहुत साल पहले उन्होंने ड्रेसडन के अजायबघर के क्यूरेटर को अपना संग्रह दिखाया था।

मेरिया ने भग्नस्वर में कहा, "मैं आपसे विनती करती हूँ कि आप पिता जी का सुख-स्वप्न मत तोड़ियेगा। हम जानते हैं कि हमने पाप किया है, लेकिन जिन्दा रहने का इसके सिवा और कोई चारा भी तो नहीं था। अनाथ बच्चे पुराने चित्रों से कहीं अधिक कीमती हैं। इसके अलावा पिता जी को अभी तक इस बारे में कुछ नहीं मालूम। वे अब भी हर तस्वीर से बातें करते हैं, जैसे हर तस्वीर उनकी दोस्त हो। वे कितने बरसों से किसी कलाप्रेमी को अपना संग्रह दिखाने के लिये व्याकुल हैं। आज उन्हें कितनी खुशी होगी·····काश! अगर आप भी हमारी तरह उन्हें धोखा·····"

मैं आपको बता नहीं सकता कि उस लड़की की आवाज में कितनी वेदना थी! मैंने इस मन्दी के ज़माने में कितने कलाप्रेमियों को रोटी के एक टुकड़े की खातिर अपने कीमती संग्रह बेचते देखा है, लेकिन इतना दुख मुझे पहले कभी नहीं हुआ था। मैंने अभिनय करना स्वीकार कर लिया।

रास्ते में मुझे उस लड़की से मालूम हुआ कि उन अभागिनों ने कितनी कम कीमत पर कई दुर्लभ चित्र बेच डाले थे। मैंने निश्चय किया कि जैसे भी हो इस परिवार की सहायता करूँगा। जब हम सीढ़ियां चढ़ने लगे तो भीतर से आवाज़ आई, "चले आइये! चले आइये!" अन्धे व्यक्तियों की श्रवणशक्ति बहुत तेज़ होती है। उसने दूर से ही हमारे कदमों की आवाज पहचान ली थी।

बुढ़िया ने मुस्कराकर कहा, "वैसे तो फ्रेंज़ खाने के बाद आराम करते हैं, लेकिन आप के आने की खुशी में आज ये जागते रहे हैं।" मेज़ पर कलाकृतियों का ढेर लगा था। उस अन्धे कलाप्रेमी ने मेरी बाँह पकड़कर मुझे कुर्सी पर बिठा दिया।

"मेरे पास बहुत चीज़ें हैं, आइये फ़ौरन देखना शुरू कर दें, वरना आपको देर हो जायेगी। देखिये, इस अलबम में द्यूरर्ज की कृतियां हैं। हैं न शानदार! आप खुद ही फैसला कीजिये!"

वह बड़ी सावधानी से चित्रों को छू रहा था (जैसे कोई बड़ी कीमती टूटने वाली चीज़ को छू रहा हो)। उसने कोरी कैनवस को मेरी आँखों और अपनी दृष्टिहीन आंखों के सामने खड़ा किया। उसके उत्साह को देखकर यह विश्वास नहीं होता था कि वह अंधा था। उसका चेहरा एक विचित्र आभा से चमक रहा था।

"क्या आपने कभी इससे बढ़िया चित्र देखा है? हर चीज़ शीशे की तरह साफ़ है। ड्रेसडन के अजायबघर में भी एक ऐसा चित्र है, लेकिन इस चित्र के सामने वह बिल्कुल तुच्छ है। फिर मेरे पास इन चित्रों की पूरी नस्ल है।"

उसने चित्र की पीठ पर लिखी अदृश्य पंक्तियां पढ़ीं, "यह देखिये नैंगलर रेमी और एज़डेल की मोहरें। इन लोगों को क्या पता था कि यह संग्रह कभी मेरे छोटे-से मकान की शोभा बढ़ायेगा?"

उसे कोरी कैनवस पर उंगलियाँ चलाते देखकर मैं कांप उठा, विशेषकर जब उसके नाखूनों ने तथाकथित मोहरों को छुआ। मेरी जीभ तालू से चिपक गई। क्रोनफील्ड की पत्नी और बेटी को देखकर मैंने किसी तरह अपने आपको संभाल लिया। फिर मैंने उत्साह का प्रदर्शन करते हुए कहा—

"सचमुच यह चित्र एकदम दुर्लभ है।" गर्व से उसका चेहरा खिल उठा।

"लेकिन यह चित्र तो कुछ भी नहीं है। जरा इन दो चित्रों की

ओर देखिये, 'अवसाद' और 'भावुकता'। इसके रंग अब भी कितने ताजे हैं! आपके बर्लिन के कला-व्यवसायी और आर्ट-गैलरियों के अधिकारी इसे देखकर ईर्ष्या से जल मरेंगे!"

यह नाटक दो घंटे तक चलता रहा। उसने एक के बाद एक अलबम दिखाई। लगातार खाली कैनवस के टुकड़ों की ओर देखना और बीच-बीच में उनकी प्रशंसा करते जाना, मेरा एकमात्र कर्तव्य बन गया था। उसके उत्साह को देखकर मेरे कलाप्रेम को बड़ी प्रेरणा मिली।

केवल एक बार दुर्भाग्य आते-आते टल गया। वह मुझे रेम्ब्रा का एक चित्र 'दिखा' रहा था, जो सचमुच बड़ा कीमती रहा होगा। कैनवस पर अपनी उंगलियाँ फेरते-फेरते सहसा वह रुक गया। उसके चेहरे पर विषाद के बादल छा गये। कांपते हुए ओंठों से उसने पूछा :

"यह रेम्ब्रां का चित्र है न! घर में मेरे सिवा कोई इस संग्रह को हाथ नहीं लगा सकता, फिर रेम्ब्रां किधर गया?"

"यह रेम्ब्रां ही है हेर क्रोनफील्ड!" मैं अपनी भूली हुई स्मृतियों को बटोरकर उस चित्र के सौन्दर्य की प्रशंसा करने लगा।

प्रशंसा सुनकर उसका चेहरा फिर खिल उठा। उसने विजेता के स्वर में दोनों औरतों से कहा :

"देखा, ये सज्जन कलाप्रेमी हैं और कला की कद्र करना जानते हैं। तुम दोनों को शिकायत रहती थी कि मैं कलाकृतियों के संग्रह में पैसे लुटाता रहता हूँ। यह सच है कि आधी शताब्दी से मैंने अपने को बियर, तम्बाकू, यात्रा, थियेटर, पुस्तकों से वंचित रखा है और मैं अपनी बचत की कौड़ी-कौड़ी अपने इस शौक में खर्च करता रहा हूँ, जिससे तुम्हें सख्त नफरत है। लेकिन हेर रैकनर मुझसे सहमत होंगे। जब मैं इस दुनिया से चला जाऊँगा तो तुम ड्रेसडन के धनी परिवारों से भी अधिक धनी हो जाओगी। तब तुम्हें मेरी इस 'सनक' की कीमत मालूम होगी। लेकिन जब तक मैं जिन्दा हूँ, इस संग्रह को अपने से जुदा नहीं होने दूंगा। मेरे कब्र में जाने के बाद ये महाशय या कोई और कला-

व्यवसायी इस संग्रह को बेचने में तुम्हारी मदद करेंगे। इसके सिवा कोई चारा नहीं, क्योंकि मेरे मरने के बाद मेरी पेन्शन भी खत्म हो जायेगी।"

वह बड़े दुलार से उन लुटी हुई अलबमों पर उंगलियाँ फेर रहा था। यह दृश्य बड़ा करुण था। १९१४ के बाद मैंने किसी जर्मन के चेहरे पर इतनी खुशी नहीं देखी। उसकी पत्नी और बेटी की आँखों में आँसू आ गये, जेरुसलम की उन दो बूढ़ी औरतों की तरह, जो पवित्र समाधि के खज़ाने को लुटः देखकर रोई थीं। लेकिन उस आदमी का उत्साह अब भी कम नहीं हुआ था। वह एक के बाद एक कलाकृति को दिखाता चला गया। अन्त में जब उसने सब कोरी कैनवसें अलबम में रख दीं, तो मेरे दिल का भार कुछ हल्का हुआ।

मेज़ पर कॉफी आई। मेरा मेज़मान अभी भी नहीं थका था, वह इन कलाकृतियों का इतिहास सुनाने लगा और उन्हें एक बार फिर दिखाने के लिये व्याकुल हो उठा। पत्नी और बेटी के यह कहने पर कि मुझे देर हो जायेगी, वह एकदम चिड़चड़ा हो उठा·····

मैंने आने से पहले उससे विदा ली। उसने नम्रता-पूर्वक मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर सहलाये और काँपती आवाज़ में कहा :

"आपके आने से मुझे कितनी खुशी हुई, यह बताना कठिन है—मुद्दत के बाद आज किसी कलाप्रेमी से बातें करने का अवसर मिला है। अपनी कृतज्ञता जतलाने के लिये मैं अपने वसीयतनामें में लिख जाऊँगा कि मेरे मरने के बाद आपकी फर्म ही मेरे कला-संग्रह को नीलाम करे।"

उसके हाथ खाली अलबमों के ढेर को दुलार से सहलाने लगे।

"मैं आपसे एक वचन मांगता हूँ—इस संग्रह का बढ़िया-सा सूचीपत्र छपवाइएगा।" उसकी पत्नी और बेटी बड़ी कठिनाई से अपने कंपन को रोकने की चेष्टा कर रही थीं। मैंने उस असंभव प्रयास को पूरा करने का वचन दे डाला। उसने कृतज्ञतापूर्वक मेरे हाथ दबाये।

दोनों औरतें मुझे दरवाज़े तक छोड़ने आईं। उनके गाल आंसुओं से तर थे। मैं सोचने लगा कि मैं कला-संग्रह खरीदने आया था, लेकिन मुझे कलाकृतियों की प्राप्ति की बजाय, झूठ और धोखाधड़ी में शामिल होना पड़ा।

लेकिन मुझे इसका अफसोस नहीं है, क्योंकि दुख और निराशा के इस युग में मैं एक वृद्ध के जीवन में सुख का संचार कर सका हूं। आज के वातावरण में यह सुख कहां मिलता है ?

जैसे ही मैं सड़क पर आया, मैंने खिड़की में से किसी को अपना नाम पुकारते सुना। वृद्ध की ज्योति-हीन आंखें मेरे कदमों की ओर मुड़ गईं थीं। उसने खिड़की में से नीचे झुककर अपना रूमाल हिलाकर मुझे विदा दी।

"आपकी यात्रा सुखद रहे, हेर रैंकनर !"

उसकी आवाज़ में शैशव की सरलता और गूंज थी। उसके प्रफुल्ल चेहरे को मैं कभी नहीं भूलूंगा—जो सड़क पर दिखाई देने वाले चेहरों से बिल्कुल अलग था। मैंने उसके भ्रम को प्रश्रय देकर उसके जीवन को मंगलमय बनाया था। गेटे ने कहा है :

"कला के संग्रह-कर्त्ता सुखी जीव हैं !"

गवर्नेस

दोनों बालिकाएँ कमरे में अकेली थीं। बत्ती बुझा दी गई थी, और सब तरफ गहरा अंधकार छाया था। दोनों की सांस इतनी धीमी थी कि वे सोयी हुई मालूम देती थीं।

"सुनो।" एक बिस्तर में से कोमल स्वर में बारह बरस की बच्ची बोली,

"क्या बात है ?" दूसरी ने जवाब दिया, जो तेरह बरस की थी।

"अच्छा हुआ जो तुम जाग रही हो। मुझे तुमसे कुछ कहना है।"

दूसरी तरफ़ से केवल कपड़ों की सरसराहट सुनाई दी। वह बिस्तर में उठकर बैठ गई थी, और उसकी आंखें प्रतीक्षा में चमक रही थीं।

"सुनो, पहले यह बताओ; क्या तुमने मिस मान के व्यवहार में इन दिनों कुछ विचित्रता देखी है ?"

"हां, वे कुछ बदली-बदली सी नज़र आती हैं, अब वे पहले जैसी सख्ती भी नहीं करतीं। पिछले दो दिनों से मैंने सवाल नहीं किये, फिर भी मुझे डांट नहीं पड़ी। पता नहीं उन्हें क्या हुआ है, लेकिन इतना मैं जान गई हूँ, कि उन्हें हम लोगों में कोई दिलचस्पी नहीं रही। वे अब हमारी खेलों में भी शामिल नहीं होतीं, और दिनभर अकेली बैठकर न जाने क्या सोचा करती हैं।"

"मेरा ख्याल है कि वे दुखी हैं, और अपने दुख को छिपाना चाहती हैं। आजकल उन्होंने प्यानो बजाना भी बंद कर दिया है।"

कुछ देर रुककर बड़ी लड़की बोली—

"तुमने तो कहा था कि तुम मुझे एक बात बताओगी।"

"हां, लेकिन किसी से कहना मत। कहीं मां को या अपनी सहेली लौटी को बता दिया तो·····।"

"मैं क्यों बताऊंगी ? अच्छा बात तो बता ?"

"बात यह है कि आज सोने से पहले मुझे ध्यान आया कि मैंने मिस मान को गुडनाईट नहीं कहा। मैं बिना जूते पहने ही उनके कमरे में चली गई। मेरा ख्याल था कि कमरे में कोई नहीं है। सहसा मुझे किसी के रोने की आवाज़ सुनाई दी। मैंने देखा कि मिस मान तकिये में मुँह छिपाकर ज़ोर से सिसक रहीं थीं। उन्होंने मुझे नहीं देखा। मैंने धीमे से दरवाज़ा बंद कर दिया और कान लगा कर सुनने लगी। सिसकियों की आवाज़ अब भी आ रही थी। इसके बाद मैं अपने कमरे में लौट आई।

क्षण भर के लिये दोनों चुप रहीं। फिर बड़ी लड़की ने ठंडी सांस लेकर कहा—

"बेचारी मिस मान !"

"पता नहीं वे क्यों रो रही थीं। मुझे तो कोई कारण दिखाई नहीं देता। आजकल तो मां भी उन्हें डांटती-डपटती नहीं। हम लोगों ने भी कोई ऊधम नहीं मचाया। फिर वे क्यों रो रही थीं ?"

'मै बता सकती हूँ।"

"तो बताती क्यों नहीं ?"

"मेरा ख्याल है कि वे किसी से प्रेम करती हैं।"

"प्रेम करती हैं ? प्रेम ? किससे ?" छोटी लड़की चौंक पड़ी।

"तुमने नहीं देखा ?"

"क्या तुम्हारा इशारा ओटो की तरफ़ है।"

"और नहीं तो ? वह भी मिस मान से प्रेम करता है। उसे हमारे घर रहते तीन बरस हो चुके हैं। लेकिन वह कभी हमारे साथ घूमने नहीं

गया। लेकिन मिस मान के आते ही उसे हमारा ध्यान भी आ गया। मिस मान अगर हमें पार्क या बाग़ में ले जाती हैं तो वह पहले से ही वहां मौजूद रहता है। तुमने भी तो देखा होगा।"

"हां मैंने देखा तो था, लेकिन मैंने सोचा......... ।"

"पहले मैं भी यही सोचती थी, लेकिन कुछ ही दिनों से मुझे पता लग गया कि हम तो सिर्फ उसके लिये बहाना हैं......... ।"

इसके बाद दोनों लड़कियां किसी गहरी सोच में डूब गईं। सहसा छोटी लड़की ने पूछा—

"लेकिन रोने का क्या अर्थ हो सकता है? ओटो उन्हें बहुत चाहता है। मेरा तो ख्याल है कि प्रेम में बड़ा आनंद आता होगा।"

"मैं भी यही सोचती हूँ। कुछ समझ में नहीं आता।"

बड़ी लड़की ने नींदभरी आवाज़ में कहा, "बेचारी मिस मान!"

इसके बाद दोनों लड़कियाँ सो गईं।

अगले दिन दोनों में इस विषय पर कोई चर्चा नहीं हुई, लेकिन दोनों एक दूसरे की जिज्ञासा से परिचित थीं। मिस मान को देखते ही दोनों की आँखें बरबस एक दूसरे से टकरा जातीं। खाने के समय उन्होंने बड़े ग़ौर से अपने ममेरे भाई ओटो की ओर देखा। वे उसके चेहरे के भीतर छिपे उस रहस्य का पता लगाना चाहती थीं, जिसका मिस मान के रोने से अज्ञात संबंध हो सकता था। खेलते वक्त भी उनका ध्यान इसी पहेली में उलझा रहा। शाम होने पर एक लड़की ने उदासीनता का अभिनय करते हुए दूसरी से पूछा—

"तुमने आज कोई नई बात देखी?"

"नहीं," उत्तर बड़ा संक्षिप्त था।

दोनों को इस विषय पर चर्चा करते हुए डर लगता था। इसी तरह कई दिन बीत गये। दोनों लड़कियाँ मन ही मन इस रहस्य को जानने की कोशिश कर रहीं थीं।

रात के खाने पर छोटी लड़की ने देखा कि मिस मान ने ओटो को

इशारे से कुछ कहा, जिस पर ओटो ने सर हिलाकर स्वीकृति प्रकट की। छोटी लड़की ने मेज़ के नीचे अपनी बहन की टांगें हिलाईं। बड़ी बहन ने प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा, छोटी बहन ने अर्थपूर्ण दृष्टि से उसका जवाब दिया। इसके बाद दोनों के लिये समय काटना मुश्किल हो गया। खाने के बाद गवर्नेस ने लड़कियों से कहा—

"अपने पढ़ने के कमरे में जाकर लिखाई करो। मेरे सर में दर्द है। मैं आध घंटा आराम करूँगी।"

एकान्त पाते ही छोटी लड़की फूट पड़ी—

"देख लेना, ओटो भी उनके कमरे में जायेगा।"

"इसीलिये तो मिस मान ने हमें यहाँ भेज दिया है।"

"हम दरवाजे के छेद में से सारी बात सुनेंगे।"

"मानलो किसी ने देख लिया तब ?"

"किसने ?"

"मां ने"

"तब तो मुसीबत आयगी।" छोटी लड़की घबरा गई।

"सुनो, मैं दरवाज़े के पास जाकर सुनूंगी और तुम गैलरी में रहना।"

छोटी बहन ने ओंठ सिकोड़कर कहा, "लेकिन तुम मुझे सारी बातें नहीं बताओगी।"

"बताऊंगी।"

"भगवान् की क़सम ?"

"भगवान् की क़सम ! कोई इधर आये तो जोर से खांसना।"

दोनों गैलरी में जाकर खड़ी हो गईं। जिज्ञासा से उनके हृदय धड़क रहे थे। इसी समय किसी के क़दमों की आहट हुई। ओटो ने मिस मान के कमरे में जाकर दरवाज़ा बंद कर लिया। बड़ी बहन अपने नियत स्थान पर आकर खड़ी हो गई, छोटी बहन की आँखों में ईर्ष्या थी। उसने जिज्ञासावश छेद में से झांकना चाहा, लेकिन बड़ी बहन ने उसे दूर धकेल दिया और उसे गैलरी में खड़े रहने का इशारा किया।

कई मिनिटों तक दोनों प्रतीक्षा में खड़ी रहीं। छोटी को लगा मानो कई युग बीत गये हों। मारे उत्सुकता के उससे एक जगह पर खड़ा भी नहीं हुआ जाता था। इसी वक्त किसी के आने की आहट पाकर वह खांसने लगी, दोनों भागकर पढ़ने के कमरे में आ गईं। छोटी ने उत्सुकतापूर्वक पूछा :

"जल्दी बताओ, क्या हुआ ?"

बड़ी ने विस्मित भाव से उत्तर दिया :

"कुछ समझ में नहीं आया।"

"क्या कहा ?"

"मामला बड़ा असाधारण है।"

"क्या ? क्या ?" छोटी का स्वर क्रुद्ध हो उठा।

"मैंने जो सोचा था, वह नहीं हुआ। ओटो ने ज़रूर मिस मान की कमर में हाथ डाला होगा और उसे चूमने की कोशिश की होगी, क्योंकि मिस मान कह रही थी, 'इस समय नहीं। मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ।' चाबी अटकी होने की वजह से मुझे कुछ ठीक से दिखाई नहीं दे सका, लेकिन मैं सारी बातें साफ सुन सकती थी। ओटो ने विचित्र ढंग से पूछा, "क्या मामला है ?" तुम जानती हो कि वह कितना बदतमीज है, लेकिन उस समय वह डरा हुआ मालूम होता था। मिस मान ने भी उसका बुद्धूपन देखकर कहा था, "मेरा ख्याल है, तुम भी इस मामले से वाकिफ़ हो।" ओटो बोला, "बिल्कुल नहीं।" इस पर मिस मान ने कहा, "तो फिर तुम मुझसे इतने दूर क्यों रहने लगे हो ? एक हफ्ते से तुमने मुझसे बात तक नहीं की। मुझे देखते ही तुम आँखें चुराते हो। जब मैं लड़कियों को घुमाने पार्क में जाती हूं। तुम वहां भी नहीं दिखाई देते। अचानक तुम कैसे बदल गये ? मैं जानती हूँ, तुम किसलिये जान-बूझकर पीछे हटना चाहते हो।" ओटो ने जवाब दिया, "तुम्हें पता है कि मेरी परीक्षा कितनी निकट है। मुझे पढ़ाई से बिल्कुल फ़ुर्सत नहीं मिलती। इसमें मेरा क्या कसूर है ?" इसपर मिस मान फूट-फूटकर रोने लगीं

और बोलीं, 'ओटो, मुझसे झूठ मत बोलो। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मैं तुमसे कुछ नहीं चाहती, लेकिन तुम्हारे चेहरे से साफ ज़ाहिर है कि तुम्हें सब पता है—"

यह कहकर बड़ी लड़की की जबान लड़खड़ाने लगी। छोटी ने पास आकर पूछा :

"क्या पता है ?"

"उनके बेबी के बारे में।"

"उनका बेबी ? बेबी ! यह नहीं हो सकता।"

"मैंने खुद सुना था।"

"तुम्हें सुनने में ग़लती हो गई होगी।"

"नहीं। ओटो ने भी कहा था, 'हमारा बेबी।'

मिस मान ने पूछा, "अब क्या होगा ?"

"फिर ?"

"फिर तुम खाँस पड़ीं और मुझे वहां से भागना पड़ा।"

छोटी बहन स्तब्ध रह गई।

"लेकिन उनका बेबी कहां है ?"

"पता नहीं।"

"शायद मिस मान उसे घर छोड़ आई होंगी। मां ने बेबी को यहाँ लाने की इजाज़त नहीं दी होगी। इसीलिये मिस मान इतनी दुखी हैं।"

"क्या बकवास करती हो ? तब वे ओटो को जानती भी नहीं थी।"

दोनों कुछ सोचने लग गईं। छोटी ने कहा :

"मिस मान की तो अभी शादी भी नहीं हुई। फिर उनका बेबी कैसे हो सकता है ?"

"हो सकता है कि उनकी शादी हो चुकी हो।"

"तुम निरी गधी हो। ओटो से उनकी शादी कहाँ हुई है ?"

"तो फिर ?"

दोनों एक-दूसरे का मुंह ताकने लगीं।

"बेचारी मिस मान !"

वे हमेशा अपनी समवेदना प्रकट करने के लिये यही कहा करतीं थीं। लेकिन उनकी उत्सुकता यहीं तक सीमित नहीं रहती थी।

"तुम्हारा क्या ख्याल है, बेबी लड़का है या लड़की ?"

"मुझे क्या पता ?"

"क्या मैं मिस मान से पूछकर देखूं ?"

"हुश !"

"इसमें हर्ज क्या है ? वे हमें कितना चाहती हैं !"

"पूछने से कोई फायदा नहीं। वे लोग हमारे सामने इस बारे में कभी कोई बात नहीं करते। हमारे आते ही हमसे फ़िजूल बातें करने लगते हैं। उनका ख्याल है कि हम अभी बच्चियाँ हैं। मैं तो तेरह बरस की हूँ। उन लोगों से पूछोगी तो कुछ मालूम नहीं होगा।"

"लेकिन मैं जानना चाहती हूँ।"

"इससे क्या होता है ? जानना तो मैं भी चाहती हूँ।"

"मुझे गुस्सा इस बात का है कि ओटो यह क्यों दिखा रहा था कि उसे बेबी के बारे में कुछ भी पता नहीं। अपने बेबी का किसे नहीं पता होता ? क्या हम अपने मां-बाप के बारे में कभी ऐसे कहते हैं ?"

"नहीं, वह मज़ाक कर रहा होगा।"

"यह भी कोई मज़ाक हुआ ?"

इसी समय गवर्नेस आ गई और दोनों लड़कियाँ लिखने बैठ गईं। दोनों ने क्षणभर में ताड़ लिया कि मिस मान की आँखें सूजी हुई हैं और आवाज़ भारी हो रही है। वे मन ही मन आदरपूर्वक सोच रही थीं, "इन्हें अपने बेबी की याद आ रही है। इसीलिए ये इतनी उदास हैं।" दोनों लड़कियों के मन में भी एक अज्ञात उदासी छा गई।

अगले दिन उन्होंने खबर सुनी कि ओटो वहां से जा रहा है। उसने अपने चचा से कहा था कि यहाँ उसकी पढाई में बड़े विघ्न पड़ते हैं,

इसलिए दो महीने के लिए वह किसी बोर्डिङ्ग में रहेगा।

लड़कियों की जिज्ञासा फिर जाग उठी। उन्हें निश्चय हो गया कि ओटो के जाने का कल की घटना से कोई न कोई सम्बन्ध ज़रूर है। वे अपनी सहज वृत्ति से जान गईं कि ओटो कायर है। जब वह विदा लेने उनके पास आया तो वे वहाँ से चली गईं और छिपकर मिस मान और ओटो को देखने लगीं। मिस मान ने बिना कुछ कहे ओटो से हाथ मिलाए, लेकिन उनके ओंठ कांप रहे थे।

इन दिनों दोनों लड़कियाँ भी बदल गई थीं। उनकी हँसी-खुशी ग़ायब हो गई थी और वे हर समय उदास रहती थीं। एक अज्ञात बेचैनी उनके मन में हर समय छायी रहती थी और वे सब वयस्क लोगों को सन्देहभरी नज़रों से देखने लगी थीं। वे दरवाजे के पीछे छिपकर बातें सुनतीं और उस रहस्य के आवरण को चीरने के लिए व्याकुल हो रहीं थीं, जो यथार्थ को ढँके हुए था। उनकी समस्त आस्था, बचपन का सन्तोष ग़ायब हो गया था। वे हर समय आशंकित भाव से किसी रहस्योद्घाटन की प्रतीक्षा में रहतीं थीं। धोखे और दुराव के वातावरण ने उन्हें भी दुराव सिखा दिया। माँ-बाप की उपस्थिति में वे पढ़ने या खेलने का अभिनय करने लगतीं थीं। वयस्कों के प्रति घृणा ने दोनों को एक-दूसरे के और भी निकट ला दिया था। जब कभी वे अपने को अशक्त पातीं तो एक-दूसरे की बाँहों में लिपटकर आँसू बहातीं। बिना किसी कारण ही उनके जीवन में गतिरोध आ गया था।

दोनों ने चुपचाप यह निश्चय किया था कि वे कभी भी मिस मान को नहीं सतायेंगी, क्योंकि वह पहले से ही इतनी दुखी हैं। दोनों जी लगाकर पढ़ने लगीं, और एक-दूसरे को सबक याद कराने में मदद देने लगीं। वे गवर्नेस के आदेशों को पूरा करने के लिए सदैव तत्पर रहती, लेकिन गवर्नेस ने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया था। इसीलिए दोनों लड़कियाँ दुखी रहतीं थीं गवर्नेस आजकल चुप बैठी रहती थी, और उसकी आँखें दूर किसी चीज की तलाश में व्याकुल दिखाई देती थीं।

लड़कियाँ सोचतीं, बेचारी को अपने बेबी की याद आ रही होगी, इसी-लिए आहिस्ते-आहिस्ते चलतीं थीं। उनका समस्त जागृतोन्मुख नारीत्व गवर्नेस के प्रति श्रद्धा में बदल गया था। मिस मान भी आजकल उन्हें बहुत चाहने लगी थीं। लड़कियों ने उस स्नेह के पीछे छिपे हुए दुख को अनुभव किया। इन दिनों मिस मान की आँखें अक्सर लाल रहती थीं, निश्चय ही वह अपने दुःख को प्रकट नहीं होने देना चाहती थी। दोनों लड़कियों को इस बात का खेद था कि वे अपनी श्रद्धेय गवर्नेस के दुख को हल्का नहीं कर पा रहीं थीं।

एक दिन जब गवर्नेस अपनी आँखों में उमड़ते हुए आँसुओं को पोंछने खिड़की के सामने चली गई, तो छोटी लड़की ने साहस बाँधकर गवर्नेस का हाथ पकड़ लिया :

"मिस मान, आप आजकल उदास रहती हैं। क्या हमसे कोई कसूर हो गया है?"

गवर्नेस ने स्नेहपूर्वक बच्ची के बाल सहलाते हुए उत्तर दिया, "नहीं, प्यारी बच्ची, भला तुम क्या क़सूर कर सकती हो?" यह कहकर उसने भोली बालिका का माथा चूम लिया।

लड़कियों की जासूसी जारी रही। एक दिन छोटी लड़की ने अचानक ड्राइंगरूम में जाकर माँ-बाप की बातचीत सुन ली। उसे देखते ही मां ने बातचीत का विषय बदल दिया, लेकिन उसने जितना सुना था, उतना ही काफी था।

मां कह रही थी, "मुझे भी कुछ शक हुआ है। मैं उसे पूछकर रहूँगी।"

छोटी बच्ची ने बड़ी बहन से सारी बात बतायी और पूछा, "तुम्हारे ख्याल में मां की बात का क्या अर्थ हो सकता है?"

खाने के वक्त दोनों ने मां-बाप को गवर्नेस की तरफ गौर से देखते हुए देखा। खाने के बाद मां ने मिस मान से कहा :

"क्या तुम मेरे कमरे में आ सकोगी? मुझे तुमसे कुछ कहना है।"

लड़कियों के मन में अपार उत्सुकता थी। अब कोई न कोई बात होकर रहेगी। वे छिपकर बातें सुनने की आदी हो गई थीं, और सच्चाई जानना चाहतीं थीं। मिस मान के भीतर जाते ही वे दरवाज़े से कान लगा कर खड़ी हो गईं।

भीतर से फुसफुसाहट सुनाई दी। लड़कियाँ कुछ न समझ सकीं। इसी समय उन्हें माँ का क्रुद्ध स्वर सुनाई पड़ा :

"क्या तुम समझती थीं कि हम सब अंधे हैं? क्या तुम्हारी हालत हमसे छिपी रह सकती है? वाह, तुम तो बड़ी कर्त्तव्यपरायण निकलीं! मुझे अफसोस है कि मैंने तुम जैसी औरत को उन्हें पढ़ाने के लिए रखा। तुमने उनकी ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया····· ।"

इस पर गवर्नेस ने धीमी आवाज़ में कुछ कहा, जिसे लड़कियाँ नहीं समझ सकीं, फिर मां की क्रुद्ध आवाज़ आई—"बातें चाहे जितनी बनाओ। हर दुश्चरित्र स्त्री बातें बनाना जानती है। तुम जैसी लड़कियाँ किसी भी पुरुष के आगे आत्मसमर्पण कर देती हैं। तुम जैसी बाज़ारू औरत को गवर्नेस के पद पर देखकर मुझे हैरत होती है। तुम्हें अब मैं इस घर में नहीं रख सकती, यह तो तुम भी जानती हो····· ।"

दोनों लड़कियाँ कांप उठीं। उन्हें अपनी मां से गहरी नफ़रत हो गई। मिस मान की सिसकियों को सुनकर दोनों लड़कियों की आंखों में आँसू आ गये। उनकी मां कह रही थी—

"अब तुम रोकर अपना पाप धोना चाहती हो। तुम्हारे आँसुओं का मुझ पर कोई असर नहीं होगा, न ही मुझे तुम जैसे लोगों से हमदर्दी हो सकती है। तुम्हारा क्या होगा, यह तुम जानो, यह तुम्हारा निजी मामला है। तुम्हें मददगारों की कमी तो रहेगी नहीं। लेकिन मैं तुम्हें अपने घर में अब एक दिन भी नहीं रख सकती।"

मिस मान फूट-फूट कर रोने लगी। लड़कियों ने कभी किसी को इस तरह रोते नहीं देखा था। वे सोचने लगीं कि सिर्फ़ कसूर करने पर ही आदमी रोता है। उनकी मां ने फिर कहा—

"बस मुझे तुमसे यही कहना था। आज ही अपना सामान बांध लो, कल सुबह आकर अपनी तनख्वाह ले जाना। अब तुम यहां से जा सकती हो।"

लड़कियां भागकर अपने कमरे में आ गईं। इस आकस्मिक झंझावात को समझना उनके लिये असंभव था, लेकिन मन ही मन उन्हें सत्य की झलक दिखाई देने लगी थी। उनका हृदय अपने मां-बाप के प्रति ग्लानि से भर गया।

"मां को ऐसी बातें कहते शर्म आनी चाहिये थी।" बड़ी ने कहा।

छोटी लड़की इस खुल्लमखुल्ला आलोचना से डर गई। उसने हकलाते हुए कहा—

"लेकिन···लेकिन·····हमें गवर्नेस का कसूर तो नहीं मालूम।"

"क़सूर क्या हो सकता है? मिस मान कभी कोई ग़लती नहीं कर सकतीं। मां को नहीं पता वे कितनी अच्छी हैं।"

"लेकिन वे इतना रो क्यों रही थीं? उन्हें रोते देखकर मुझे बड़ा बुरा लग रहा था।"

"मुझे भी। लेकिन मां भी तो उनके साथ बदतमीज़ी से पेश आईं थीं।" लड़की ने बड़ी मुश्किल से अपने आंसू रोके।

इसी समय मिस मान उनके कमरे में आईं। वे मृतप्राय सी हो रहीं थीं।

"बच्चियों, आज दोपहर मुझे कुछ काम है। अगर मैं तुम्हें छुट्टी दे दूं तो शोर तो नहीं करोगी? शाम को हम इकट्ठे घूमने चलेंगे।"

बच्चियां स्तब्ध रह गईं।

"तुमने देखा, उनकी आंखें कितनी लाल थीं? पता नहीं, मां ने उनके साथ इतनी निर्दयता क्यों दिखायी।"

"बेचारी मिस मान!" उस आवाज़ में बड़ी करुणा थी। इसी समय मां ने आकर दोनों बच्चियों से अपने संग चलने का आग्रह किया।

"आज नहीं मां, आज नहीं।"

दरअसल लड़कियाँ भयभीत थीं, और उन्हें इस बात पर गुस्सा था कि मां ने उन्हें क्यों नहीं बताया कि मिस मान नौकरी से निकाल दी गई हैं। झूठ और चुप्पी के वातावरण में दोनों लड़कियां बन्दी चिड़ियों की तरह पंख फड़फड़ा रहीं थीं। उन्होंने निश्चय किया कि वे मिस मान के पास जाकर उनसे हमदर्दी प्रकट करेंगी और कहेंगी कि वे इसी घर में रहें, लेकिन फिर उन्होंने सोचा, शायद इस चर्चा से मिस मान को और दुख न पहुँचे। फिर वे छिपकर सुनी हुई बात का हवाला कैसे देंगी? वे सारी दोपहर बेचैन रहीं और रोती रहीं। आज का दृश्य रह-रह कर उन्हें याद आ रहा था। मां की हृदयहीनता और मिस मान के आंसू।

शाम के समय गवर्नेस लड़कियों से विदा लेने आई। दोनों कुछ कहना चाहती थीं, लेकिन कुछ न कह सकीं। मिस मान ने उनकी मूक समवेदना से द्रवित होकर दोनों लड़कियों को गले लगा लिया। दोनों फूट-फूटकर रोने लगीं। गवर्नेस उनका माथा चूमकर बाहर निकल आई।

"अब हम कभी मिस मान से नहीं मिल सकेंगे।" एक ने सिसकते हुए कहा।

"मैं जानती हूँ, कल वे यहां से चली जायेंगी।"

"शायद कुछ दिनों बाद हम उनके घर जा सकें। तब वे हमें अपना बेबी ज़रूर दिखायेंगी।"

"हां—वे बड़ी अच्छी हैं।"

"बेचारी मिस मान।" इस वाक्य में करुणा के साथ आशंका भी थी।

"मिस मान के बग़ैर हम कैसे रह सकेंगी?"

"मैं तो किसी नई गवर्नेस को बर्दाश्त नहीं करूँगी।"

"मैं भी नहीं।"

"मिस मान का मुक़ाबिला कोई नहीं कर सकता। इसके अलावा..."

वाक्य अधूरा रह गया, क्योंकि यह सुनकर कि मिस मान एक बेबी की मां है, लड़कियों की श्रद्धा और भी बढ़ गई थी, और वे हमेशा इस बात को याद रखतीं थीं।

एक ने कहा, "सुनो तो !"

"कहो ।"

"मैं सोचती हूँ, क्या हम मिस मान के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिये कुछ नहीं कर सकते, जिससे वे समझ जायें कि हम मां की तरह निर्दय नहीं हैं ? क्या तुम मेरा साथ दोगी ?"

"क्यों नहीं ।"

"तुम्हें पता है, मिस मान को सफ़ेद गुलाब के फूल बहुत पसंद हैं। कल सुबह हम बाजार से सफ़ेद गुलाब ख़रीद कर उनके फूलदान में लगा दें तो कैसा रहेगा ।"

"कब ?"

"स्कूल से लौटकर ।"

"तब तक वे यहाँ से जा चुकी होंगी । इधर देखो, मैं तड़के उठकर नाश्ते से पहले ही फूल ले आऊंगी, फिर हम उन्हें मिस मान के कमरे में सजा देंगे ।"

"अच्छी बात है । कल हमें तड़के ही उठना चाहिये ।"

दोनों ने अपनी पैसों की संदूकड़ियों पर धावा बोला और मिस मान को फूलों का उपहार देने के विचार से उनके चेहरे उत्साह से खिल उठे ।

अगले दिन सुबह हाथों में फूल लेकर उन्होंने मिस मान के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया । भीतर से कोई जवाब न मिला । यह सोचकर कि शायद मिस मान सो रही हैं, लड़कियों ने भीतर झाँककर देखा । कमरा खाली था । बिस्तर पर एक भी सलवट नहीं थी । मेज़ पर दो ख़त रखे थे । दोनों लड़कियाँ चौंक उठीं । यह क्या हो गया ?

"मैं सीधी मां के पास जाऊंगी ।" बड़ी लड़की ने कहा ।

उसने साहसपूर्वक मां से जवाब तलब किया,

"मिस मान कहाँ हैं ?"

"अपने कमरे में होंगी ।"

"कमरा तो खाली है । वे शायद कल रात ही चली गई हैं । तुमने

हमें पहले क्यों नही बताया था।"

मां बेटी के स्वर में छिपी चुनौती को न समझ सकी। उसका चेहरा पीला पड़ गया और उसने जाकर पति का आश्रय लिया।

पति मिस मान के कमरे की चाबी लेने चला गया। लड़कियों ने रोषभरी दृष्टि से मां की ओर देखा। मां ने आँखें दूसरी ओर फेर लीं।

पिता हाथ में एक खुला खत लेकर लौटा। उसके चेहरे पर घबराहट थी। पति-पत्नी कमरे में घुसकर कुछ खुसुर-पुसुर करने लगे। लड़कियों को छिपकर सुनने में डर महसूस हुआ। उन्होंने पिता के चेहरे पर इतना आतंक कभी नहीं देखा था।

जब उनकी मां बाहर निकली तो उसकी आँखें सूजी हुई थीं। जरूर वह रोई थीं। दोनों मां से कुछ पूछना ही चाहती थीं, कि मां ने उन्हें डांटकर कहा, "जल्दी स्कूल जाओ। देरी हो रही है।"

उन्हें स्कूल जाना पड़ा। क्लास में वे घंटों तक गुमसुम बैठी रहीं। घर लौटकर उन्होंने सब के चेहरों पर आतंक देखा, यहां तक कि नौकर भी घबराये थे। उनकी माँ ने पूर्व अभ्यस्त स्वर में कहा :

"बच्चों, अब तुम मिस मान से कभी नहीं मिल सकोगी। वह···"

वह वाक्य पूरा नहीं कर सकीं। लड़कियों के रोषपूर्ण चेहरे देखकर वे चुप हो गईं, और अपने कमरे में चली गईं।

उसी दिन दोपहर को ओटो लौट आया। मिस मान एक खत ओटो के नाम छोड़ गईं थीं। उसका चेहरा पीला पड़ गया था। घर में किसी ने उससे बात तक न की। वह दोनों लड़कियों से मिलने गया।

'खबरदार जो हमारे नजदीक आये," दोनों घृणा से चीख पड़ीं।

ओटो कुछ देर तक बरामदे में चहलक़दमी करने के बाद चला गया।

घर के सब प्राणी चुप थे। लड़कियों ने भी एक दूसरे से कोई बात नहीं की थी। वे चुपचाप निरुद्देश्य भाव से घर के चक्कर काटने लगीं। दोनों की आंखें आँसुओं से डबडबाई हुई थीं। वे अब सब-कुछ जान गईं थीं। वे जान गईं थीं कि उनसे धोखा किया गया था। वे जान गई थीं, कि दुनियां के लोग कितने क्षुद्र और नीच हो सकते हैं। अपने मां-बाप

पर से उनका विश्वास उठ गया। वे जान गई थीं, कि भविष्य में वे कभी किसी का विश्वास नहीं कर सकेंगी। जीवन का समस्त भार उनके किशोर कंधों को दबाने लगा। बचपन के निश्चिन्त, सुखी दिन अब बहुत पीछे रह गये थे। अब उन्हें जीवन के अज्ञात आतंकों का सामना करना था। अपने जीवन के इस आकस्मिक मोड़ को समझ सकना उनके लिये कठिन था, लेकिन वे उसकी क्षमताओं और संभावनाओं से जूझ रही थीं। इस मोड़ ने उन्हें एक दूसरे के बहुत करीब पहुँचा दिया था, लेकिन यह मौन समागम था। वे आतंक के घेरे को तोड़कर बाहर नहीं निकल सकतीं थीं। वयस्कों के संसार में वे बिल्कुल तटस्थ हो गईं थीं, क्योंकि उनकी आत्मा के द्वार बन्द हो गये थे—आने वाले कई वर्षों के लिये। वे समस्त संसार से लड़ रही थीं, क्योंकि एक ही दिन के अल्पकाल में वे सयानी हो गईं थीं।

रात को जब वे अपने कमरे में अकेली रह गईं तो उनके बचपन में एकान्त का भय फिर जाग उठा और उस मृत गवर्नेस के बारे में सोचने लगीं। कमरे में बड़ी सर्दी थी। अपनी चिन्ताओं के कारण उन्हें कमरा तक गर्म करने का ध्यान नहीं रहा था। दोनों एक ही बिस्तर में एक दूसरे से लिपटकर लेट गईं। लेकिन अब भी दोनों चुप थीं। आखिर छोटी लड़की की भावुकता का विस्फोट, आँसुओं में प्रकट हुआ। बड़ी लड़की भी फूट-फूटकर रोने लगी। दोनों रोती-रोती एक दूसरे की बाहों में सो गईं। इस समय वे मिस मान की मृत्यु का शोक नहीं मना रहीं थीं, न ही मां-बाप के प्रति अनास्था का उन्हें दुःख था। वे जीवन के यथार्थ का प्रथम परिचय पाकर अपने भावी जीवन के विषय में आशंकित हो उठीं थीं। वे इस यथार्थ से बचने के लिये व्याकुल थीं। जीवन उन्हें हिंस्र पशुओं से भरा एक बीहड़ जंगल मालूम होता था, जिसमें से उन्हें अकेले गुज़रना था। लेकिन धीरे-धीरे यह चिन्ता स्वप्निल बन गई। उनकी सिसकियाँ थमने लगीं और वे शान्ति की लय में श्वास लेने लगीं। उन्हें नींद आ गई